अधम पुरुष इसी दिशामें बुरे कर्म्मके फलरूपी नरकमें पड़कर सड़ते रहते हैं। इसी दिशामें नरकसमुद्रमें मिलनेवाली पापी पुरुषोंसे भरी हुई महाभयङ्कर वैतरणी नदी बह रही है। यहांपर आनेसे लोगोंको स्वर्ग और नरक दोनोंके सुख मिलते हैं। किरणधारी सूर्य्य इस दिशामें घिरकर उत्तम प्रकारसे जल बरसाते रहते हैं; और फिर वशिष्ठ सम्बन्धिनी उदीची दिशामें जानेसे हिमसे मुक्त होते हैं। हे गालव! पहिले मैं एक दिन क्षुधासे पीड़ित होके आहारके निमित्त चिन्ता कर रहा था, तब युद्धमें प्रवृत्त हुए इस दिशामें बड़े शरीरवाले दो हाथी और कच्छपको पाया था। जो लोकके बीच कपिल देव कहके विख्यात हैं, जिनके प्रभावसे सगरके वंशका नाश हुआ था, वही चक्रधनु नामक महर्षि इस दिशामें सूर्य्य-देवसे उत्पन्न हुए थे। इसी दिशामें वेदको जाननेवाली शिरा नामकी सिद्धा ब्राह्मणीने सब वेदोंको पढ़कर अपना अविनाशी शरीर पाया था। इसी स्थानमें नागराज वासुकी, तक्षक और ऐरावत आदि नागकुलोंसे सहित भोगवती नामक नगरी विराजमान है। मरनेके समय लोगोंको इसी दिशामें महाघोर अन्धकार मिलता है। सूर्य्य और अग्नि भी इस अन्धकारको दूर नहीं कर सकते। हे गालव! तुम चलनेकी इच्छा करो, तो इस दिशामें गमन करें; इससे यदि तुम्हें इस दिशामें चलना हो तो मुझसे कहो; नहीं दूसरी—पश्चिम—दिशाकी कथा मुझसे सुनो।

१०८ अध्याय समाप्त।

गरुड़ बोले, हे द्विजसत्तम! यह दिशा जलके स्वामी वरुणदेवकी अत्यन्त ही प्यारी है; क्योंकि इसी स्थानमें उनकी उत्पत्ति और प्रतिष्ठा हुई है। भगवान् सूर्य्य दिनके अन्त भागमें अपनी किरण और प्रकाशका विसर्जन करते हैं, इसी कारणसे वह पश्चिम दिशाके नामसे प्रसिद्ध हुई है। इस दिशामें जलजन्तुओंके ऊपर प्रभुता और जलकी रक्षा करनेके निमित्त भगवान् कश्यपने वरुणदेवको सब अधिकार दे रक्खा है। अन्धकारका नाश करनेवाले चन्द्रमा इसी स्थानमें जलदेवके सम्पूर्ण छः रस पीके पूर्णमासीको फिर पूर्णरूपसे उदित होते हैं। हे ब्राह्मण! पहिले समयमें दैत्य लोगोंने इसी स्थानमें वायुके वेगसे दुःखित और पराजित होकर लम्बी सांस लेते हुए मृत्युकी शय्यापर शयन किया था। जिससे पश्चिम सन्ध्याकी उत्पत्ति होती है, वही अस्ताचल गिरि इस स्थानमें प्रदक्षिण करनेवाले सूर्य्यको प्रतिदिन सम्मानित करते हैं। दिनके बीत जानेपर इसी स्थानसे निद्रा निकलकर जीवन कालका आधा भाग हरनेके निमित्त मानों सब जीव मात्रको आक्रमण करती है। देवताओंके राजा इन्द्रने अपनी सौतेली माता तेजस्विनी दिति-देवीको इसी स्थानमें सोई हुई देखकर, ईर्षायुक्त होकर उसका गर्भ काटके उनचास टुकड़े कर दिये थे, और उसीसे मरुत्-गणोंकी उत्पत्ति हुई थी। पर्व्वतोंके राजा हिमालयकी बहुतसी जड़ मन्दर-पर्व्वतसे लगी हुई है; हजार वर्षतक भ्रमण करनेपर भी उसकी सीमा नहीं मिल सकती। गोमाता सुरभी इसी स्थानपर सुवर्णके शैल और सुवर्णके कमलसे युक्त सरोवरके तटपर खड़ी होके दूधकी धारा बहाती हैं। चन्द्रमा और सूर्य्यकी हिंसा करनेकी अभिलाषा करनेवाला शिरसे रहित राहु नामक दैत्यका शरीर यहांपर समुद्रके बीच सदा दीख पड़ता है। अदृश्य और महातेजसे युक्त हरितलोमा अर्थात् सदा यौवन अवस्थाको प्राप्त हुए सुवर्णशिर नाम मुनिका इस स्थानमें वेदका पाठ करते हैं, उनका बहुतसा शब्द यहांपर भी सुनाई पड़ता है। हरिमेधा मुनिकी कन्या ध्वजवती सूर्य्यदेवकी

"खड़ा रह! खड़ा रह!" इस प्रकारसे शासन करती हुई आकाश मार्गमें खड़ी थी; हे गालव! इस दिशामें क्या दिन क्या रात्रि सब समयमें वायु, अग्नि, जल और आकाश दुःख देनेवाले स्पर्शको त्याग देते हैं। सूर्य्यकी गति इसी स्थानमें टेढ़ी चालसे लौटती है, और इसी दिशामें सब ज्योतिके पदार्थ सूर्य्यमण्डलमें प्रवेश करते हैं। बारह राशि, सत्ताइस नक्षत्र और अभिजित् ये सब एक एक करके अठाइस रात्रि पर्य्यन्त सूर्य्यके सङ्ग भ्रमण करके चन्द्रमाके सङ्ग संयोग होनेपर, फिर क्रमसे निकल आते हैं। जिससे सब समुद्रोंकी उत्पत्ति हुई है; वही सब नदियोंका उत्पत्ति स्थान इस पश्चिम दिशामें सदासे विराजमान है। तीनों भुवनका जितना जल है सो यहांपर वरुणदेवके स्थानपर उपस्थित है। यहींपर नागोंके राजा शेषनागका निवास है। अनादि और अविनाशी भगवान् विष्णुदेवका यहीं उत्तम शय्यारूपी निवास स्थान है। अग्निके मित्र वायु, और मरीचिपुत्र कश्यपकी भी यही निवास-भूमि है। हे गालव! संक्षेपसे यह पश्चिम दिशाका वृत्तान्त तुमसे कहा गया। हे द्विजसत्तम! इस समय तुम्हारी क्या इच्छा है? कहो किस दिशाको ओर चलें?

११० अध्याय समाप्त।

गरुड़ बोले, हे द्विजसत्तम गालव! यह उत्तर दिशा है। इस दिशामें सब लोग उत्तीर्ण होके पापोंसे छूटकर मुक्तिपद पाते हैं। इसी उत्तारण शक्ति होनेहीके कारण इसका नाम उत्तर दिशा हुआ है। इस उत्तर दिशाके सेवनीय जल समुद्रके मार्ग पूर्व्व और पश्चिम दिशा पर्य्यन्त व्याप्त होनेसे वह मध्यम बोध होता है। इस श्रेष्ठ दिशामें विनय रहित, इन्द्रियोंको न जीतनेवाले, और अधर्मी लोग कभी नहीं निवास कर सकते। यहांपर बदरिकाश्रममें नारायण कृष्ण, पुरुषोंमें श्रेष्ठ विष्णु और पितामह ब्रह्मा विराजमान हैं। यहींपर प्रलयकालकी अग्निके समान, भगवान् महादेव हिमालय पर्व्वतके ऊपर प्रकृति पार्व्वतीके सङ्ग सदा विहार करते रहते हैं। वह मायासे युक्त होनेसे भी केवल नरनारायणके अतिरिक्त और किसीको नहीं दीख पड़ते हैं; मुनि, इन्द्र आदि देवता, गन्धर्व्व, यक्ष और सिद्ध आदि कोई भी उनका दर्शन नहीं कर सकते। इसी स्थानपर सहस्र शिर, नेत्र, और चरणसे युक्त श्रीमान् विष्णुदेव मायासे युक्त महादेवके दर्शन करते हैं। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! द्विजोंके राजा चन्द्रमाका अभिषेक इसी स्थानपर हुआ था और महादेवने स्वर्गसे गिरे हुए चन्द्रमाको मस्तकपर धारण करके मनुष्य लोकमें उपस्थित किया था। गिरिराजकुमारी पर्व्वतीने जो महादेवको वर बनानेके निमित्त कठिन तपस्या की थी, वह अनुष्ठान भी इसी स्थानमें हुआ था। एक समय यहां पर गिरिराज, उमा, कामदेव और महादेवकी क्रोधरूपी अग्नि अत्यन्त शोभित हुई थी। हे द्विजसत्तम! धनके स्वामी कुबेर यहीं कैलास पर्व्वतपर राक्षस, यक्ष और गन्धर्व्वोंके राजा बनाये गये थे। चैत्ररथ नामक उनका मनोहर बगीचा, वैखानस मुनियोंका आश्रम, मन्दाकिनी और मन्दर यहांपर सदासे शोभित हैं। राक्षसोंसे भली भांति रक्षित सौगन्धिक वन, श्यामल शाद्वल, नवतृण-भूयिष्ठ-देश, कदली कानन, कल्पतरु-वीथिका, और सदा संयमशाली इच्छानुसार विहार करने वाले सिद्ध लोगोंकी अभिलाषाके योग्य सम्पूर्ण विमान यहांपर बहुत ही शोभा और सुघराई प्रकाशित कर रहे हैं। अच्छी प्रकारसे प्रसिद्ध सप्त-ऋषियोंका मण्डल और देवी अरुन्धती इसी स्थानपर विराजमान हैं। स्वाती नक्षत्रका भी यहींपर उदय और निवास होता है। सब लोगोंके

गुरु पितामह ब्रह्मा यज्ञके निमित्त इस स्थानमें सदा वास करते हैं। सूर्य्य चन्द्रमा और नक्षत्र इसी दिशासे सदा भ्रमण किया करते हैं। हे द्विजसत्तम! सत्यवादी महात्मा मुनि लोग इसी स्थानमें इधर उधर भ्रमण करते हुए गायन्तिका द्वार नाम लोककी अन्तिम सीमाकी रक्षा करते हैं; उन लोगोंकी उत्पत्ति, वृद्धि और तपस्या कुछ भी नहीं मालूम होती है। वे लोग अपनी इच्छाके अनुसार सहस्रों प्रकारका परिवर्त्तन भोग करते हैं। जो मनुष्य उन लोगोंकी रक्षित इस गायन्तिकाका द्वार लांघकर किसी मार्गसे प्रवेश करता है, वह वहीँपर मर जाता है। अविनाशी नारायणदेव और विष्णुके अतिरिक्त और कोई किसी समयमें वहांपर जानेमें समर्थ नहीं होता। हे गालव! इसी दिशामें धनके स्वामी कुवेरके अधिकारमें ऊंचा कैलासपर्व्वतका शिखर विराजमान है। इसी स्थानमें विद्युत्प्रभा नाम दश अप्सराओंका जन्म हुआ था। वामन अवतारमें जब भगवान् विष्णु ने अपने तीन चरणसे तीनों लोकोंको नाप लिया था उस समय इस उत्तर दिशामें एक पद रखनेसे वहांपर विष्णुपदके नामसे एक महा उत्तम तीर्थकी उत्पति हुई है। मरुत् नाम किसी राजाने इस उत्तर दिशामें, जिस स्थानपर जाम्बूनद सुवर्ण सरोवर है वहांपर उशीरबोजाख्य नाम स्थानमें एक महायज्ञ किया था। यहीँपर जीमूत नामक महात्मा विप्रर्षिके सम्मुख हिमालय पर्व्वतका निर्म्मल और शुद्ध सुवर्णका स्थान प्रकाशित हुआ था। उस महर्षिने यह सम्पूर्ण धन ब्राह्मणोंको दान करके उनसे अपना नाम विख्यात करानेके निमित्त प्रार्थना की थी; इससे वह धन जैमूत धन कहके प्रसिद्ध हुआ है। हे गालव! दिक्पाल लोग इसी स्थानपर दोनों सन्ध्याके समय "किसका क्या कार्य्य है? कहो" ऐसा कहके ऊंचे स्वरसे पुकारा करते हैं। हे द्विजश्रेष्ठ? यह उत्तर दिशा उक्त रूप तथा दूसरे बहुतसे गुणोंमें सब दिशाओंसे श्रेष्ठ है। सब विषयोंमें मुख्य होनेसे इसका नाम उत्तर प्रसिद्ध हुआ है। हे भ्राता! चारों दिशाओंके सम्पूर्ण वृत्तान्तोंका मैंने तुम्हारे समीप क्रमसे वर्णन किया, इस समय तुम कौन दिशामें गमन करनेकी इच्छा करते हो? तुमको सब दिशा और समस्त पृथ्वीके दर्शन करानेके निमित्त मैं अत्यन्त ही आतुर हो रहा हूं; इससे तुम हमारी पीठपर शीघ्र ही चढ़ो।

१११ अध्याय समाप्त।

गालव मुनि बोले, हे गरुड़! हे विनताके आनन्द बढ़ानेवाले! हे सर्पोंके शत्रु, पक्षीराज! जहांपर धर्म्मके दोनों नेत्र खुले हैं, उसी पूर्व्व दिशामें मुझे ले चलो। तुमने सबसे पहिले जिसका वर्णन किया, और "देवता लोग इसी स्थानपर विराजमान हैं" कहकर जिसका गुण कहा है, उसी दिशामें चलो। "जहांपर सत्य और धर्म्मका पूर्ण निवास है," यह तुमने स्पष्टरूपसे कहा है और सब देवताओंके सङ्ग मिलनेकी भी मेरी इच्छा है। हे गरुड़! इससे देवताओंके दर्शन करनेकी मेरी अभिलाषा तुम पूर्ण करो।

नारद मुनि बोले, विनतापुत्र गरुड़ उस ब्राह्मणसे बोले, "मेरी पीठपर चढ़ो" ऐसा कहनेपर गालव मुनि उसी समय उनके ऊपर चढ़े और चलते चलते कहने लगे। हे सांपोंके शत्रु! प्रातःकाल सहस्र किरणकी धारण करनेवाले सूर्य्यका जैसा रूप दीख पड़ता है, प्रस्थान करनेके समय तुम्हारा भी उसी प्रकार रूप दीखता है। हे पक्षियोंके राजा! तुम्हारे चलनेका वेग ऐसा मालूम होता है, कि महा प्रबल पङ्खोंके वायुसे प्रेरित होकर ये सब वृक्ष हमारे अनुगामी होके साथ ही साथ चले

जाते हैं। केवल वृक्ष ही क्यों, समुद्रके सम्पूर्ण जल, पर्व्वत, वन और बगीचोंसे युक्त जैसे समस्त पृथ्वीहीको तुम अपने पङ्खोंके वायुसे आकर्षित किये चलते हो। तुम्हारे पङ्खोंकी वायुके झकोरेसे मगरमच्छोंसे युक्त समुद्रका जल जैसे आकाशतक चला जाता हो। बहुतसे मच्छ, मगर और मनुष्यके मुखके आकारके समान नाग आदि सब जलजन्तु मानो मथित हो रहे हैं। हे पक्षिराज! समुद्रके तरङ्गोंका भयङ्कर शब्द सुनकर मेरे कान बधिर हुए जाते हैं; न मैं सुनता, न देखता और न अपने प्रयोजनको निश्चित कर सकता हूं। मेरी इन्द्रियां शिथिल हुई जाती हैं। इसलिये भ्राता! ब्रह्महत्या न होवे, ऐसा विचार कर धीरे धीरे गमन करो। तुमसे अधिक क्या कहूंगा, सूर्य्य तथा आकाशमण्डलको और भी मुझसे नहीं देखा जाता है; मुझको सब दिशाओंमें केवल अन्धकार ही दीख पड़ता है। ऐसा क्या? तुम्हारा यह शरीर भी मुझे नहीं दीख पड़ता है; केवल उत्तम मणिकी भांति यह दोनों नेत्र दीख पड़ते हैं। तुम्हारे शरीरकी बात तो दूर है, मैं अपना शरीर भी नहीं देख सकता हूं। मेरे शरीरसे अग्नि निकल रही है पदपद पर यही देख रहा हूं। इससे हे विनतानन्दन! शीघ्र ही अपनी दोनों आंखें मूंदकर मेरे शरीरकी अग्नि बुझाओ। तुम अपना यह वेग रोकके मेरा निस्तार करो। हे पन्नगनाशन! मुझे चलनेकी अब कुछ भी इच्छा नहीं है, तुम शीघ्र ही निवृत्त होजाओ; तुम्हारा यह वेग अब किसी प्रकारसे नहीं सहा जाता है। मैंने चन्द्रमाके समान सफेद और एक ओर श्याम कर्णसे युक्त ऐसे आठ सौ घोड़ोंके प्रदान करनेकी प्रतिज्ञा की थी; उससे निस्तार पानेका अब कोई मार्ग नहीं देखता हूं। केवल प्राणको त्याग करना ही एक मात्र उसका उपाय दीख पड़ता है; क्योंकि मेरे कुछ धन भी नहीं और कोई धनवान् पुरुष मेरा मित्र भी नहीं है; बहुतसा धन होनेपर भी उस प्रतिज्ञासे निस्तार पाना बहुत कठिन है।

नारद मुनि बोले, विनतानन्दन गरुड़ गालवके ऐसे आतर वचनोंको सुनकर भी चलनेसे न रुके; और हंस कर उनसे कहने लगे, हे विप्रर्षि! तुम जब अपने प्राणोंके त्यागनेकी अभिलाषा करते हो, तब तुम अच्छे बुद्धिमान नहीं मालूम होते हो; क्योंकि मृत्यु कभी इच्छाके अनुसार नहीं होती; मृत्यु साक्षात् परमेश्वरका रूप है। तुम यदि ऐसे ही कातर होनेवाले थे, तो पहिले मुझको क्यों न निषेध किया? जो हो, तुम्हारे प्रयोजनके सिद्ध होनेका एक बहुत बड़ा उपाय यह है, कि समुद्रके निकटहीमें ऋषभ नामक यह जो पर्व्वत है; यहांपर विश्राम और भोजन करके निवृत्त होजाओ।

११२ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, इसके अनन्तर गालव मुनि और पक्षिराज गरुड़ दोनोंने ऋषभ पर्व्वतपर पहुंचकर देखा, कि वहांपर शाण्डिली नाम्नी ब्राह्मणी तपस्या कर रही हैं। देखते ही गरुड़ने उसे प्रणाम किया और गालवने यथा उचित पूजा की। उसने भी इन लोगोंकी कुशल वार्त्ता पूछकर अतिथि-सत्कारके अनुसार आसन आदि प्रदान किया। इस प्रकारसे सत्कार पाकर दोनों अतिथियोंके आसनपर बैठनेके अनन्तर, शाण्डिलीने उन लोगोंके निमित्त उत्तम भोजनको तैयार कर दिया उसे भोजन करते ही दोनोंने तृप्त होके, जैसे पृथ्वीके ऊपर शयन किया, वैसे ही अत्यन्त ही निद्राके वशमें होगये। बहुत शीघ्रतासे गमन करनेवाले गरुड़ मुहूर्त्त भरमें निद्रा-रहित होगये; परन्तु देखा कि मेरे दोनों पङ्ख गिर पड़े हैं; और

पांव मुखके सङ्ग लग जानेसे वह मांसके पिण्ड-की भांति दोखने लगी। गालव मुनि उन्हें उस अवस्थामें देखकर अत्यन्त दुःखित हो बोले, तुम्हें इस स्थानपर आनेसे क्या यही फल मिला है? इस तरहसे रहनेपर मुझको कितने दिनोंतक यहां निवास करना होगा, उसे मैं नहीं कह सकता, तुमने क्या अपने मनमें कुछ अधर्म्म तथा अशुभ विषयकी चिन्ता की थी? तुम्हारा अवश्य ही कोई बड़ा पाप हुआ होगा; इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

गालव मुनिके इस वचनको सुनकर गरुड़ बोले, हे ब्राह्मण! मेरा मानसिक पाप कर्म्म यही है, कि जिस स्थानपर प्रजापति ब्रह्मा, देवोंके देव महादेव और सनातन विष्णु विराजमान हैं जहांपर धर्म्म और यज्ञ सदा उपस्थित रहते हैं; उसी पवित्र धाममें ये वास करें, यह विचार कर मैंने इस सिद्धा ब्राह्मणीको वहांपर ले जानेका सङ्कल्प किया था। सो हो, प्रियकामनाके निमित्त विनीत भावसे भगवतीके समीप प्रार्थना करता हूं। हे महाभागे! मैंने अज्ञानके कारणसे तुम्हारे यहांपर निवास करनेको अनुचित समझा था; और शोकित होकर तुम्हारे अत्यन्त मानके निमित्त हो जो मैंने इस विषयका विचार किया था, वह पुण्य हो, वा पाप; तुम उसे अपने माहात्म्यके गुणके अनुसार क्षमा करो।

इस प्रकारकी विनतीको सुनकर ब्राह्मणी पक्षिराज गरुड़ और द्विजवर गालवके ऊपर बहुत प्रसन्न होकर उनसे यह वचन बोली, हे गरुड़! तुम मत डरो, तुम शोभायमान पङ्खयुक्त हुए, इससे सब शोक और चिन्ताको त्याग दो। हे पुत्र! तुमने मेरी निन्दा की थी, इसीसे मैं किञ्चित् तुम पर रुष्ट हुई थी; क्योंकि मैं निन्दा सहनेकी पात्री नहीं हूं। जो पापी मेरी निन्दा करता है, वह सब लोकोंसे भ्रष्ट हो जाता है। मैंने सब लक्षणोंसे रहित और निन्दिता होनेपर भी, केवल शुद्ध और पवित्र आचारको करनेहीसे इस प्रकारकी उत्तम सिद्धिको प्राप्त की है। सदाचाररूपी वृक्षमें धर्म्म और धन दोनों हो फल लगते हैं। शुद्ध आचारके करनेसे मनुष्य अवश्य ही लक्ष्मीका लाभ उठा सकते हैं। मैं अधिक बात क्या कहूंगी, सदाचार सब बुरे लक्षणोंको नष्ट कर देता हैं। हे पक्षिराज गरुड़! अब तुम्हारी जहां इच्छा होवे, वहां जाओ; परन्तु सावधान रहना; कभी निन्दा करने योग्य स्त्रियोंकी भी निन्दा न करना। मेरी कृपासे तुम पहिलेसे अधिक बल और पराक्रमसे युक्त होओगे। शाण्डिलीके ऐसा कहनेपर गरुड़के पहिले समयसे भी अधिक बलसे युक्त दोनों पङ्ख निकल आये। अनन्तर उसकी आज्ञासे गरुड़ने वहांसे प्रस्थान किया; परन्तु गालव मुनिको प्रार्थनाके अनुसार घोड़ोंको न पाया। बोलने-वालोंमें श्रेष्ठ विश्वामित्र मुनिने मार्गमें गालवको देखकर, गरुड़के सम्मुख ही उनसे यह पूछा, हे ब्रह्मन्! तुमने मुझको अर्थ प्रदान करनेको जो स्वयं प्रतिज्ञा की थी, मेरे विचारमें उसको पूर्ण करनेका तो यही समय उपस्थित हुआ है; इस समय तुम्हारे विचारमें क्या है, मैं नहीं कह सकता हूं। मैं इतने दिनोंमें तुम्हारी आशा देख रहा हूं, और भी कुछ समयतक देखूंगा इसमें जिस प्रकारसे वह सिद्ध हो, तुम उसीका मार्ग ढूंढ़ो। इस वचनको सुनकर गालव मुनि अत्यन्त ही दुःखित और कातर हुए, उन्हें इस प्रकारसे देखकर गरुड़ बोले, हे द्विजसत्तम गालव! विश्वामित्रने तुम्हें पहिले जो वचन कहा था, वह इस समयमें मुझको प्रत्यक्ष दीख पड़ा, इससे आओ इस विषयमें एक उत्तम विचार करें; गुरुको विना दक्षिणा दिये तुम्हारी बैठनेकी भी शक्ति नहीं है।

११३ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, पक्षिराज गरुड़ दुःखित गालव मुनिसे कहने लगे। हे द्विजश्रेष्ठ! धन हिरण्यरेता अग्निसे पृथ्वीमें उत्पन्न होकर वायुसे बढ़ता रहता है, इसीसे सम्पूर्ण जगत् हिरण्य प्रधान धनको "हिरण्य" शब्दसे पुकारता है। धनसे सब जगत्का पालन, पोषण और जीवन-धारण होताहै; इसी कारणसे उसे "धन" कहते हैं। इससे संसारके सब कार्य्योंको निवाहनेके वास्ते वह धन सदा तीनों लोकके बीच विद्य-मान है। पूर्व्व भाद्रपद और उत्तर-भाद्रपद नक्षत्रोंसे युक्त शुक्रवारके दिन अग्नि देवता इच्छाके अनुसार अपने उपार्जित धन मनु-ष्योंको दान करते हैं; परन्तु उस धनको कुवेर आदि देवता रक्षा करते हैं, इसलिये दुःखसे प्राप्त होनेवाले धनको पाना बहुत ही कठिन है। परन्तु विना धनके घोड़ोंका पाना भी किसी प्रकारसे सम्भव नहीं होता है। हे ब्रह्मन्! जो तुम्हारे कार्य्यको सिद्ध कर सके, ऐसे किसी धर्म्मात्मा राजाके पास जाकर तुम गुरुको देनेके निमित्त धन मांगो। चन्द्रवंशमें उत्पन्न हुए एक धर्म्मात्मा राजा मेरे मित्र हैं, चलो उन्हींके पास अधिक धन है। वह राजर्षि नहुषके पुत्र हैं, और उनका नाम ययाति है, साक्षात् धनके स्वामी कुवेरके समान उनके ऐश्वर्य्यकी सीमा नहीं है। मेरे अनुरोध और तुम्हारी प्रार्थनासे वह अवश्य ही तुम्हारी इच्छाके अनुसार धन देंगे। हे विद्वन्! उसे देकर ही तुम गुरुके ऋणसे मुक्त हो सकोगे। गरुड़ और गालव मुनि आपसमें ऐसा विचार करके प्रतिष्ठानपुरमें राजा ययातिके समीप आके उपस्थित हुए। राजा ययातिने उन लोगोंको देखकर पाद्य, अर्घ और आसन प्रदान करके उनके आनेका कारण पूछा। गरुड़ने उनसे सत्कार पाकर यह वचन कहा हे मित्र ययाति! यह तपस्वी ब्राह्मण मेरे प्राणके समान मित्र हैं, इनका नाम गालव मुनि है। दस हजार वर्षतक यह विश्वामित्रके शिष्य थे। उस महा तपस्वी महर्षिने जब इन्हें घर जानेके निमित्त आज्ञा दी, तब गुरुके उपकार करनेकी इच्छासे इन्होंने उनसे यह वचन कहा; "हे भगवन्! यदि आपकी आज्ञा हो, तो कुछ गुरुदक्षिणा प्रदान करूं।" इसके बहुत थोड़ा धन है, इस बातको विश्वामित्र जानते थे। इससे जब इन्होंने बार बार गुरु-दक्षिणा देनेको कहा, तब कुछ क्रोधमें भरकर बोले, कि "मुझको चन्द्रमाके समान सफेद और श्यामकर्ण आठ सौ घोड़े दो। हे गालव! यदि गुरु दक्षिणा देनेकी इच्छा है, तो यही धन दान करो।"

तपस्वी विश्वामित्रने जब क्रोधमें भरकर ऐसी आज्ञा की, तब गालव मुनि बहुत ही शोकित और दुःखित होकर चिन्ता करने लगे; उसको पूर्ण करनेमें सब प्रकारसे शक्तिहीन होकर इस समय तुम्हारी शरणमें आये हैं। हे नरव्याघ्र! इनकी यही अभिलाषा है, कि तुम्हारे निकटमें भिक्षा मांगकर, गुरुदक्षिणा देके, शोकसे रहित होकर स्थिर चित्तसे तप-का अनुष्ठान करें। हे प्रजानाथ! तुम राज-र्षि हो, निज तपस्यासे पूर्ण होनेपर भी गालव मुनि अपनी तपस्याका अंश देकर तुम्हें और भी अधिक पूर्ण करेंगे। सुना जाता है, कि घोड़ेके शरीर पर जितने रोएं रहते हैं; घोड़ेको दान करनेवाले मनुष्य उतने ही संख्याके लोकों-को पाते हैं। हे पृथ्वीनाथ! यह भी दान लेनेके योग्य पात्र हैं और तुम भी दान करनेके योग्य हो। इससे तुम्हारे इस दानकी संख्या क्षीरसागरकी उपमाके समान होगी।

११४ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, हजार यज्ञको करनेवाले, महादानी, सब प्रकारके तेजसे युक्त, राजाओंमें अग्रगामी, महापराक्रमी राजा ययातिने, गरुड़के

इस उत्तम वचनको सुनकर बहुत समयतक अपने मनमें विचार और निश्चय किया, विशेष करके अपने प्यारे मित्र गरुड़ और द्विजश्रेष्ठ गालव मुनिको देख और उनके तपस्याके वृत्तान्त तथा सराहने योग्य भिक्षाका समाचार सुनकर यह निश्चय किया, "सूर्य्यवंशीय दूसरे राजाओंके त्याग कर ये लोग जो मेरे ही निकटमें आये हैं, यह कुछ मेरे कम भाग्यका विषय नहीं है।" ऐसा विचारकर राजा ययाति बोले, हे पक्षिराज! आज मेरा जन्म सफल हुआ; हे पापरहित! तुमने आज मेरे कुल और देशको पवित्र किया है। हे मित्र! इस समय मैं तुमसे अपना वृत्तान्त कहनेकी इच्छा करता हूं; पहिले तुम मुझे जैसा धनवान् समझते थे, अब वह बात नहीं है। मेरा खजाना इस समय खाली होगया है; तो भी मैं तुम्हारे आगमनको व्यर्थ नहीं कर सकता हूं; विशेष करके इस तपस्वी ब्राह्मणकी आशाको निष्फल करनेमें मुझे किसी प्रकारसे भी उत्साह नहीं होता है; इससे जिससे इनका कार्य्य सिद्ध होगा, उसे मैं अवश्य ही करूंगा। विचार कर देखो, यदि अतिथि ब्राह्मण याचना करने पर आशाहीन होकर लौट जाता है, तो निश्चय हो कुल भरको भस्म कर देता है। हे गरुड़! कोई पुरुष "दीजिये" ऐसा कहकर जब भीख मांगता है; तब उसकी आशाको नाश करनेके निमित्त "नहीं है" इस वचनको कहनेकी अपेक्षा दूसरा बड़ा पाप कर्म्म और नहीं है। वह उपायसे रहित याचक अपनी प्रार्थनाके नाश होनेपर आशा रहित होकर, प्रार्थना पूरी न करनेवाले पुरुषके पुत्र, पौत्र आदि सबको नष्ट कर देता है। हे गालव मुनि! इससे आप चार वंशको स्थापन करनेवाली, सब धर्म्मोंको जाननेवाली, देवकन्याके समान मेरी इस कुमारी कन्याको ग्रहण कीजिये! इसके असाधारण रूपको देखकर देवता, मनुष्य और असुर आदि सदा ही इसके पानेकी इच्छा करते हैं। आठ सौ श्याम-कर्ण घोड़ोंकी क्या बात है, इसके सङ्ग विवाह करनेके निमित्त राजा लोग अपने राज्य पर्य्यन्तको दे सकते हैं; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे द्विजसत्तम! इससे तुम मेरी इस माधवी नाम्नी कन्याको ग्रहण करो। मैं भी दौहित्रवान् होऊं, यही मेरी इच्छा है।

राजा ययातिके वचनको सुनकर गालव मुनिने उनकी कन्याको ग्रहण करके कहा, कि "मैं फिर आपसे मिलूंगा" ऐसा कहकर पक्षिराज गरुड़ और गालव कन्याके सहित वहांसे चले। गरुड़ भी "अब तो तुम्हारे घोड़ोंको पानेका उपाय प्राप्त हुआ है।" ऐसा कहकर अपने स्थानपर चले गए। अनन्तर गालव मुनि कन्याके सहित दान देने योग्य राज्योंमें भ्रमण करने लगे। पहिले उन्होंने इक्ष्वाकु-वंशमें उत्पन्न हुए राजसत्तम हर्य्यश्वके समीपमें जानेका निश्चय किया। महाबल, पराक्रम, चतुरङ्गिणी सेना, और धन धान्यसे युक्त प्रजा-वत्सल महाराज हर्य्यश्व अयोध्याके राजा थे। ब्राह्मणोंकी इच्छाको पूरी करनेवाले राजा हर्य्यश्व शान्ति अवलम्बन करके पुत्रकी काम-नासे सदा उत्तम तपस्यामें लगे हुए थे। ब्राह्मणश्रेष्ठ गालव मुनिने उनके समीपमें जाकर कहा, हे राजेन्द्र! अनेक पुत्रोंको प्रसव करने तथा कुलकी बढ़ाने-वाली हमारी इस उत्तम लक्षणोंसे युक्त कन्याको धनके पलटेमें लेकर अपनी भार्य्या कीजिए हे हर्य्यश्व! जिस प्रकार-का धन देना होगा, वह मैं तुमसे कहता हूं; उसे सुनकर जैसा करना तुम्हें उचित हो, उसका निश्चय करो।

११५ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजाओंमें श्रेष्ठ हर्य्यश्व गालव मुनिके उपर कहे हुए वचनको सुनकर

पुत्रके निमित्त लम्बी और गर्म्म सांस लेते हुए अनेक प्रकार सोच विचारकर यह वचन बोले, तुम्हारी यह कन्या सब लक्षणोंसे युक्त है; अङ्गूठे, हथेली, पांवके तलवे, नितम्ब, स्तन और पांवके नख इन जो छः स्थानोंके ऊंचे होनेका शास्त्रमें विधान है; इसके यह सब स्थान ठीक वैसे ही हैं; दोनों हाथ, पांव, नख, केश, और त्वचा यह सात सूक्ष्म होनेके स्थान सूक्ष्म भी हैं। नाभि, बुद्धि और वचन यह तीनों गम्भीर होनेवाले पदार्थ गम्भीर भी हैं। दोनों पांवोंके तलवे, दोनों हथेलियां और शरीर इसके ये पांचों स्थान लालवर्णके भी हैं। अनेक लक्षणोंसे युक्त होनेसे ऐसा बोध होता है, कि यह अनेक देव तथा असुरोंके भी दर्शन करनेके योग्य है; सङ्गीत आदि गन्धर्व्व विद्यामें निपुण और अनेक पुत्रोंको प्रसव करनेवाली होगी; ऐसा क्या चक्रवर्त्ती पुत्र भी इच्छा करनेसे उत्पन्न कर सकेगी, इससे हे द्विजवर! मेरी शक्ति तथा धनका विचार करके कहिये क्या धन लीजियेगा?

गालव मुनि बोले, प्रसिद्ध देश और उत्तम जातिके उत्पन्न हुए, चन्द्रमाके समान सफेद आठ सौ श्यामकर्ण घोड़ोंको देकर इस कन्याको ग्रहण कीजिये। ऐसा होनेहीसे यह उत्तम नेत्र और सुन्दर अङ्गवाली कन्या अग्निको उत्पन्न करनेवाली आरणीकी भांति तुम्हारे पुत्रोंको प्रसव करनेवाली होगी।

नारद मुनि बोले, काम-मोहित राजर्षि हर्य्यश्व इस वचनको सुनकर दीन भावसे गालव मुनिसे बोले, हमारे यहां दूसरी भांतिके सैकड़ों घोड़े हैं, यह ठीक है; परन्तु जैसे घोड़े तुम चाहते हो, वैसे घोड़े केवल दो सौ मात्र मेरे घुड़शालमें उपस्थित हैं। हे गालव! इससे मैं तुम्हारी कन्यासे केवल एक ही पुत्र उत्पन्न करूंगा, तुम कृपा करके मेरी इस कामनाको पूरी करो। हर्य्यश्वका यह वचन सुनकर वह कन्या गालव मुनिसे बोली, किसी ब्रह्मवादी ऋषिने मुझे यह वरदान दिया है, कि तुम प्रसव करनेके अनन्तर कन्या ही बनी रहोगे। हे विप्र! इससे तुम उत्तम घोड़ोंको लेकर निःसन्देह मुझे राजाके हाथमें समर्पण करो। इसी प्रकारसे चार राजाओंके यहांसे तुमको आठ सौ घोड़े मिल जायंगे और मेरे भी चार पुत्र उत्पन्न होंगे। हे द्विजसत्तम! मेरे विचारमें इसी प्रकारसे तुम गुरुदक्षिणासे उत्तीर्ण हो सकोगे; इस लिए अब तुम्हारी जैसी इच्छा हो वैसा ही करो।

कन्याकी ऐसी बात सुनकर गालव मुनि राजा हर्य्यश्वसे बोले, हे राजसत्तम हर्य्यश्व! मेरे मांगे हुए धनका चौथा भाग देकर तुम इस कन्याके सङ्ग व्याह करके एक पुत्र उत्पन्न कर लो। ऐसी आज्ञा पाकर राजा हर्य्यश्वने प्रीतियुक्त प्रसन्न चित्तसे गालव मुनिको आनन्दित करके कन्याको ग्रहण किया और देश, काल तथा समयके अनुकूल इच्छाके अनुसार पुत्र प्राप्त किया। सूर्य्यके समान तेजस्वी राजकुमार पीछे धनवान् राजाओंसे भी अधिक धनशाली और महादानी होकर वसुमना नामके एक प्रसिद्ध राजा हुए थे। बुद्धिमान् गालव प्रसन्न चित्तसे राजा हर्य्यश्वके पास फिर उपस्थित होकर यह वचन बोले हे राजेन्द्र! तुम्हारे तो यह प्रातःकालके सूर्य्यके समान मनोहर पुत्र उत्पन्न हुआ है। इससे अब कोई दूसरे राजाके समीपमें भिक्षाके निमित्त मुझे जाना पड़ेगा। राजा हर्य्यश्व अपनी सत्य प्रतिज्ञामें दृढ़ थे; इससे उन्होंने इस समयमें भी शेष छः सौ घोड़ोंके देनेमें अशक्त होकर उस माधवी नाम्नी कन्याको फिर गालव मुनिके हाथमें समर्पण किया। माधवी भी उस लक्ष्मीसे प्रकाशित राजभवनको त्याग कर अपनी इच्छाके अनुसार फिर कन्या होकर गालव मुनिके पीछे पीछे चली। तब गालव मुनिने

हर्य्यश्वसे कहा "घोड़े अभी तुम्हारे ही यहां रहें।" ऐसा कहके दिवोदास नामक राजाके यहां गये।

११६ अध्याय समाप्त।

मार्गमें माधवीको कुछ दुःखित देखकर गालव मुनि उससे बोले, हे भद्रे! काशीके राजा भीमसेनके पुत्र दिवोदास नामक विख्यात महाबल और पराक्रमी राजा परम धार्म्मिक तथा सत्यव्रतमें स्थित हैं; जब मैं ऐसे शुद्ध आचारवाले नरनाथ राजाके यहां जा रहा हूं; तब तुम्हें शोक करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है, तुम धीरे धीरे चलो।

नारद मुनि बोले, अनन्तर गालव मुनि राजा दिवोदासके समीपमें पहुंचकर यथा उचित पूजित होके, अपने प्रयोजनको कहनेके अनन्तर उन्हें पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त अनुरोध किया।

राजा दिवोदास बोले, हे द्विजवर! तुम्हें अधिक कहनेकी अब कोई आवश्यकता नहीं है। मैंने पहिलेहीसे इस बातको सुना था, और सुननेहीसे यह विषय मुझे स्वीकार हुआ है। तुम और राजाओंको छोड़कर जो मेरे हो समीप आये हो; यही मेरा धन्यभाग्य है। तुम्हारी प्रार्थना भी कुछ पूरी होगी; इसमें कुछ सन्देह नहीं है। हे गालव! तुम्हारी इच्छाके अनुसार घोड़ोंके विषयमें जैसा हर्य्यश्वका विभव है; वैसा ही मेरे भी है; इससे मैं भी तुम्हारी कन्यासे एक राजपुत्र उत्पन्न करूंगा।

द्विजश्रेष्ठ गालव मुनि बोले, "ऐसा ही होवे" यह कहकर राजा दिवोदासके हाथमें उस कन्याका समर्पण किया। उन्होंने भी विधिपूर्व्वक उस कन्याके सङ्ग विवाह किया। जैसे प्रभावतीसे सूर्य्य, स्वातीसे अग्नि, शचीसे इन्द्र, रोहिणीसे चन्द्रमा, वर्मिहासे यमराज, गौरीसे वरुण, ऋद्धिसे कुबेर, लक्ष्मीसे नारायण, गङ्गासे समुद्र, रुद्राणीसे रुद्र, सरस्वतीसे ब्रह्मा, अदृश्यन्तीसे शक्ति, अरुन्धतीसे वशिष्ठ, लोपामुद्रासे अगस्त्य, सावित्रीसे सत्यवान्, पुलोमासे भृगु, अदितिसे कश्यप, रेणुकासे जमदग्नि, हैमवतीसे विश्वामित्र, तारासे वृहस्पति, उर्व्वशीसे पुरूरवा, सत्यवतीसे ऋचीक, सरस्वतीसे मनु, शकुन्तलासे दुष्मन्त, धृतिसे नित्यधर्म्म; दमयन्तीसे नल, सत्यवतीसे नारद, जरत्कारुसे जरत्कारु, प्रतीच्यासे पुलस्त्य, मेनकासे उर्णायु, रम्भासे तुम्बुरु, शतशीर्षासे वासुकि, कुमारीसे धनञ्जय, सीतासे राम और रुक्मिणीसे कृष्णने रमण किया था, उसी प्रकारसे राजर्षि दिवोदास भी माधवीके सङ्ग रमण करने लगे। इसी प्रकारसे कुछ दिनतक परम सुखसे विहार करके माधवीने प्रतर्द्दन नाम पुत्रको उत्पन्न किया। अनन्तर समयके पूरा होजानेपर भगवान् गालव मुनिने दिवोदासके समीप आकर कहा, हे राजन्! आप मेरी कन्याको लौटा दीजिये; घोड़े अभी तुम्हारेही पास रहेंगे अब धनके निमित्त मैं दूसरे स्थानमें जाऊंगा। सत्यवादी धर्म्मात्मा दिवोदासने समयको पूरा हुआ जानकर उसी समयमें उस कन्याको गालव मुनिके हाथमें समर्पित किया।

११७ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, सत्य प्रतिज्ञा करनेवाली यशस्विनी माधवी पहिलेकी भांति उस राजर्षिको त्यागकर फिर कुमारी होके गालव मुनिको अनुगामिनी हुई। तब गालव मुनि अपने कार्य्य साधनके निमित्त स्थिरचित्तसे विचार पूर्व्वक उशीनर राजासे मिलनेके निमित्त भोजनगरकी ओर चले। वहांपर पहुंचकर उन्होंने सत्य पराक्रमी उस राजासे कहा, हे सब धर्म्मोंको जाननेवाले! मेरी यह कन्या तुम्हारे दो राजपुत्रोंकी माता होगी। इसके गर्भसे सूर्य्य और चन्द्रमाके समान दो मनोहर पुत्रोंको

उत्पन्न करके तुम इस लोक और परलोक दोनोंमें कृतार्थ होओगी; परन्तु कन्याके विवाहके निमित्त चार सौ चन्द्रमाके समान सफेद और श्यामकर्ण घोड़े पलटेमें देने पड़ेंगे। हे महाराज! केवल गुरुदक्षिणाके निमित्त ही मुझे यह यत्न करना पड़ता हैं; नहीं तो घोड़ोंसे मेरा कुछ भी प्रयोजन नहीं है। इससे यदि इस प्रकारसे घोड़ोंको देनेमें तुम्हारी शक्ति हो, तो फिर कुछ विचार न करके शीघ्र ही इस कर्म्मको पूर्ण करो। हे राजर्षि! तुम पुत्र रहित हो; इस समय दो पुत्रोंको उत्पन्न करो। पुत्ररूपी पुलसे पितर तथा अपना उद्धार करो। हे राजऋषि! पुत्रोंके फलको भोगने वाले पुण्यात्मा मनुष्य कभी स्वर्ग लोकसे नहीं पतित होते; और पुत्रहीन मनुष्योंकी भांति कभी नरकमें नहीं गिरते। गालवके इसी प्रकारके बहुतसे वचनोंको सुनकर राजा उशीनर उनसे बोले, हे गालव मुनि! आपने जो कुछ वचन कहे मैंने सब सुने और मेरा चित्त भी पुत्रको उत्पन्न करनेके निमित्त उत्सुक है; परन्तु क्या करें, दैव सबसे बलवान् है। हे ब्राह्मण! हमारी घुड़शालमें दूसरी भांतिके घोड़ोंके सहस्रों समूह हैं; परन्तु जिन घोड़ोंको तुम चाहते हो, वैसे घोड़े केवल दो सौ हमारे घुड़शालमें उपस्थित हैं। इससे और दूसरे दोनों राजा लोग जिस मार्गसे चले हैं, मैं भी उसी मार्गसे चलूंगा, अर्थात् तुम्हारी कन्यासे केवल एक ही पुत्र उत्पन्न करूंगा और उन लोगोंने जैसा मूल्य प्रदान किया है, मैं भी वैसा ही मूल्य प्रदान करूंगा। मेरे जो कुछ धन है वह प्रजा और अभ्यागत लोगोंहीके निमित्त है; अपने भोगके वास्ते नहीं है। जो राजा लोग कामके वशमें होकर दूसरोंका धन और लोगोंको देते हैं, वह कभी धर्म्मशाली और यशसे युक्त नहीं हो सकते। इससे हे द्विजसत्तम! देवकन्याके समान इस कुमारीको तुम एक पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त मुझे अर्पण करो; मैं निःसन्देह इसके सङ्ग विहार करूंगा।

राजा उशीनरके इस प्रकारके कल्याणयुक्त बहुतसे वचन सुनकर द्विजश्रेष्ठ गालव मुनिने उनकी अत्यन्त प्रशंसा की और कन्या उनके हाथमें समर्पण करके वनको चले गये। पुण्यात्मा राजा उशीनरने भी साक्षात् लक्ष्मीके समान उस कन्याको पाकर पर्व्वत, कन्दरा, नदी, झरना विमान, बगीचा, वन, उपवन, अटारी, राजमन्दिर, रनिवास आदि सब स्थानोंमें जहां इच्छा हुई वहां ही परम सुखसे उसके सङ्ग इच्छाके अनुसार विहार करने लगे। कुछ दिनोंके अनन्तर नवीन सूर्य्यके समान तेजस्वी एक सुन्दर तथा मनोहर पुत्र उत्पन्न हुआ। पृथ्वीमें विख्यात सब राजाओंके शिरोमणि शिवि नामक जो राजा थे, वही राजा उशीनरके पुत्र हैं। हे राजन्! पुत्रके उत्पन्न होनेपर गालव मुनिने राजा उशीनरके समीप जाकर कन्याको ग्रहण करके वहांसे चलकर मार्गमें विनतानन्दन गरुड़के सङ्ग भेंट की।

११८ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, गरुड़ गालवको देखकर हंसते हुए बोले, हे विप्र! प्रारब्धसे तुमको मैंने कृतकार्थ हुआ देखा। गरुड़की बात सुनकर गालव मुनि बोले, मैं अभी कैसे कृतार्थ हो सकता हूं, मेरे कार्य्यका इस समय भी चौथा भाग बाकी है। तब बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ गरुड़ बोले, हे गालव! उस विषयमें अब यत्न करनेकी तुम्हें कुछ भी आवश्यकता नहीं है, वह किसी प्रकारसे भी सिद्ध नहीं हो सकेगा। पहिले समयमें भगवान् ऋचीकने जब कान्यकुब्ज देशीय गाधि नामक राजाके निकट उनकी सत्यवती नामकी कन्याको अपनी भार्य्या बनानेके वास्ते मांगा था, तब गाधिराजने उनसे कहा था हे भगवन्

मुझे चन्द्रमाके समान श्वेतवर्णके हजार श्याम-कर्ण घोड़े दीजिये। ऋचीकने कहा "वही होगा" ऐसा कहकर वरुणके स्थानमें जाकर अश्वतीर्थमें घोड़े पाकर राजाको दिया; गाधि-राजने पुण्डरीक नामका एक यज्ञ करके ब्राह्मणोंकी दक्षिणामें इन्हीं घोड़ोंको दिया था। उन्हीं लोगोंसे राजा हर्य्यश्व दिवोदास और उशीनरने दो दो सौ घोड़े मोल लिये थे। बाकी चार सौ घोड़े भी वेचनेके वास्ते मार्गमें चले जाते थे दैवी-संयोगसे मार्गहीमें हरण किये गये। इससे हे ब्रह्मन्! प्राप्त न होने योग्य वस्तु किसी कालमें भी नहीं मिल सकती। इससे तुम बाकी दो सौ घोड़ोंके पलटेमें इस कन्याको हो छः सौ घोड़ोंके सहित गुरुके स्थान-पर जाकर उन्हें समर्पण करो। हे द्विजसत्तम गालव! ऐसा करनेहीसे तुम मोह रहित होकर अपना कार्य्य पूर्ण कर सकोगे। गरुड़की यह उमत्त युक्ति सुनकर गालव मुनि बोले, "ऐसा ही होगा"। यह कहके कन्या और घोड़ोंको लेकर विश्वामित्रके समीप आकर उनसे बोले, हे गुरुदेव! आपने जिस प्रकारके घोड़े मांगे थे, वैसे छः सौ घोड़े उपस्थित हैं; शेष दो सौ घोड़ोंके पलटेमें इस कन्याका पाणिग्रहण कीजिये। इसके गर्भसे तीन राजर्षियोंके धर्मसे युक्त तीन पुत्र उत्पन्न हुए हैं; इससे आप भी मनुष्योंमें श्रेष्ठ एक पुत्र उत्पन्न करें इसी प्रकारसे आपके आठ सौ घोड़े पूर्ण होवें और मैं भी जाकर तपस्या करूं।

विश्वामित्र मुनि पक्षिराज गरुड़ और उस सुन्दरी कन्याके सङ्ग गालव मुनिको देखकर बोले, हे गालव! तुमने पहिले ही इस कन्या रूपी अमूल्य रत्नको मुझे क्यों न प्रदान किया? ऐसा होनेसे मैं ही कुल पवित्र करनेवाले चार-पुत्रोंको उत्पन्न करता। जो हो, इस समय एक ही पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त तुम्हारी कन्याके सङ्ग विवाह करता हूं; घोड़े भी हमारे आश्रममें रहकर सब स्थानोंमें भ्रमण करेंगे। इसके अनन्तर विश्वामित्रने माधवीके सङ्ग सुखपूर्व्वक विहार करके यथा समयमें उसके गर्भसे अष्टक नाम एक पुत्र उत्पन्न किया; और उत्पन्न होते ही उसको धर्म्म और अर्थसे युक्त करके वे सम्पूर्ण घोड़े उसी पुत्रको समर्पण किये। अष्टकने धर्म्म और अर्थसे युक्त होके प्रसन्न चित्तसे चन्द्रलोकके समान प्रकाशमान किसी नगरमें जाकर प्रवेश किया; और विश्वा-मित्र भी शिष्यकी कन्या लौटा कर तप करनेके निमित्त वनको चले गये। गालव मुनि गरुड़के सङ्ग मिलकर इस प्रकारसे गुरु-दक्षिणा देके प्रीतिसे प्रफुल्लित होकर माधवीसे बोले, हे वरा-रोहे! तुमने जो वसुमना आदि चार पुत्र प्रसव किये हैं, उनमेंसे एक अद्वितीय दानी, दूसरा अत्यन्त पराक्रमी महावीर है, तीसरा सत्य धर्म्ममें सदा ही रत रहता है, और चौथा पुत्र असाधारण यज्ञ कर्म्मोंका करनेवाला है। इस प्रकारके गुणोंसे युक्त चार पुत्रोंको उत्पन्न कर तुमने केवल अपने पिताहीको नहीं वरन चार राजर्षि और मुझको भी तार दिया है। हे भद्रे! इससे तुम अब चलो, द्विजश्रेष्ठ गालव कन्यासे ऐसा कहकर उस कन्याको पिताके समीप पहुंचाकर सांपोंके भोजन करनेवाले गरुड़की अनुमतिसे वनको चले गये।

११८ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजा ययातिके निज कन्या माधवीके वास्ते फिरसे स्वयम्वर करनेके निमित्त अभिलाषी होनेपर उनके दो पुत्र पुरु और यदु अपनी बहिनको रथपर बैठाकर प्रयागमें जाकर आश्रमोंमें भ्रमण करने लगे। वहांपर नाग, मनुष्य, देवता, गन्धर्व्व, मृग, पक्षी, पर्व्वत और वृक्ष आदि तथा वनके रहनेवाले सब जीव जन्तुओंका समागम हुआ। वहांपर वह बहुत बड़ा वन नाना देशोंके राजा तथा

ब्रह्म ऋषियोंसे पूर्ण होगया। इस प्रकारसे जब अनेक लोग इकट्ठे हुए तब वरकी खोज होने लगी। उस समय यशस्विनी ययाति-नन्दिनीने दूसरे सब वरोंको त्यागकर अरण्यको ही अपना वर निश्चित करके उसे वरण किया। अर्थात् रथसे उतरकर बन्धु बान्धवोंको प्रणाम करके पुण्य-भूमि वनमें अपना आश्रम बनाके तपस्या करने लगी। इसी प्रकारसे वनको वरनेवाली माधवी विविध भांतिसे उपवास, उपदेश, नियम, प्राणायाम आदिसे आत्माको सूक्ष्मता प्राप्त करके क्रोध, मोह, लोभ आदिसे रहित हो हरिणकी भांति वनवृत्ति अवलम्बन कर स्वच्छन्दतासे वनमें निवास करने लगी। ब्रह्मचर्य्यसे युक्त होकर कोमल, तीते और मधुर शाकोंका भोजन करके पवित्र झरने और नदियोंका शीतल जल पीती हुई, व्याघ्र आदि हिंसक जीवोंसे रहित निर्जन वनमें हरिणोंके समूहके सङ्ग मृगीकी भांति घूमती हुई शुद्ध तथा पवित्र धर्म्म उपार्जन किया। इधर राजा ययातिने कई हजार वर्षतक अपनी आयुको भोगकर अन्तमें पूर्व्व राजाओंकी भांति वनमें जाकर शरीरका त्याग दिया। पुरु और यदु नामक उनके दोनों पुत्रोंका वंश बढ़ने लगा। इन्हीं दोनों वंशोंसे नहुष-पुत्रने इस लोक और परलोकमें अत्यन्त मान और प्रतिष्ठा पाई थी। सब सुखसे युक्त राजर्षि ययाति कई सहस्र वर्षोंतक स्वर्गलोकमें स्थित और पूजित होकर उत्तम स्वर्गके सुखका भोग किया; परन्तु अन्तको मोहमें पड़कर अभिमानसे मतवारे होके अपने सङ्गमें रहनेवाले पुण्यात्मा राजर्षि, और महाऋषियोंके स्थानमें सब मनुष्य, ऋषि और देवताओंको मन ही मन अवमानना करने लगे। शत्रुनाशन इन्द्रने उनके हृदयके उस भावको उसी समय जान लिया और सब राजर्षि लोग भी उन्हें धिक्कार देने लगे। अनन्तर उनकी ओर देखकर सब लोग यह तर्क करने लगे, कि यह पुरुष कौन है? किस राजाका पुत्र है? किस प्रकारसे इस स्थानपर स्वयं उपस्थित हुआ है? किस कर्म्मसे सिद्ध हुआ है? इसने कहांपर तपस्या की है? कैसे इसने स्वर्गलोक पाया है? कौन पुरुष इसको जानता है? स्वर्गवासी राजर्षि लोग राजा ययातिके विषयमें इसी प्रकारसे तर्क वितर्क करके एक दूसरेसे पूछने लगे। इन्द्रके मन्दिरके सैकड़ों द्वार-रक्षक, विमान-रक्षक, और आसनोंको रक्षा करनेवालोंसे भी यही बात पूछी गई; परन्तु पूछनेसे सबने यही उत्तर दिया, कि नहीं हम लोग कोई भी इसको नहीं जानते। इसी प्रकारसे सबका ज्ञान छिप जानेसे कोई भी उन्हें न जान सका; इससे वह क्षण मात्रमें तेज रहित होगये।

१२० अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, अनन्तर राजा ययातिका चित्त घूमने लगा, वह आसनसे भ्रष्ट होकर अपने स्थानसे च्युत होकर स्वर्गसे गिरे। अत्यन्त शोक और दुःखसे पीड़ित होनेसे उनका ज्ञान नष्ट हुआ और उज्वल माला मलिन होगई। शिरके मुकुट, भूषण और विचित्र वस्त्र सम्पूर्ण गिर गये; शरीरके समस्त अङ्ग शिथिल होके घूमने लगे। उनको उस समय कोई भी नहीं जानता था, परन्तु वह सबको ही बार बार देखने लगे; कभी कभी उन सबको भी नहीं देख सकते थे। इसी भांति सब विषयोंसे रहित होकर वह पृथ्वीमें गिरनेके पहिले ही अपने मनमें यह चिन्ता करने लगे, कि हाय! मैंने ऐसा कौनसा अधर्म्म तथा अशुभ कार्य्य किया है, जिससे निज स्थानसे भ्रष्ट हुआ हूं? इसी प्रकारसे चिन्ता करते हुए आसन और अवलम्ब रहित राजा ययातिको वहांपर रहनेवाले राजा, सिद्ध, और अप्सरा, गन्धर्व आदि सब कौतुककी भांति देखने लगे। हे

राजन्! अनन्तर पुण्यसे हीन मनुष्योंको स्वर्गसे गिरानेवाले एक पुरुषने इन्द्रकी आज्ञासे राजा ययातिके समीप आकर कहा, कि हे राजपुत्र! तुमने अभिमानसे मतवारे होकर सबको अवमानना की है; तुम अभिमानके कारण ही स्वर्गलोकसे गिराये गये हो; तुम्हें कोई नहीं जान सकता है; इससे जाओ जल्दी गिरो। यह वचन सुनकर उत्तम गतिको पानेवाले पुरुषोंके अग्रगामी नहुषपुत्र ययातिने कहा "साधुओंके बीच गिरूंगा" तीन बार ऐसा ही कहकर कहां गिरेंगे इस बातको सोचने लगे। उसी समयमें प्रतर्द्दन, वसुमना, शिवि और अष्टक नामक चारों राजा नैमिषारण्यमें वाजपेय यज्ञसे इन्द्रको तृप्त कर रहे थे; उसे देखकर वह उन्हीं लोगोंके बीचमें पतित हुए। उन लोगोंके यज्ञका धुआं स्वर्गद्वार पर्य्यन्त ऐसा दीख पड़ता था, जैसे स्वर्गतक कोई उत्तम नदी दीख रही हो। पृथ्वीपति ययाति उसी धूएंसे युक्त नदीको अवलम्बन करके पृथ्वीपर आगये। पुण्यके नाश होनेपर वह अपने दौहित्र, सब शोभासे युक्त, यज्ञमें निष्ठा करनेवाले, लोकपाल और अग्निके समान तेजस्वी चार राजसिंहोंके बीचमें पतित हुए। उनको शोभासे प्रकाशित देखके उन राजपुत्रोंने पूछा, कि आप कौन? कौनसे देश तथा किस नगरके वन्धु हैं? आप देवता, गन्धर्व्व, यक्ष अथवा राक्षस हैं? किस कारणसे आप यहांपर आये हैं और क्या चाहते हैं? आपका आकार देखनेसे मालूम होता है, कि आप मनुष्य नहीं हैं।

राजा ययाति बोले, मैं राजर्षि ययाति हूं, पुण्यके नाश हाजानेसे स्वर्गलोकसे पृथ्वीमें पतित हुआ हूं; साधु पुरुषोंके बीच गिरूंगा, ऐसी मैंने इच्छा की थी; इससे आप लोगोंके बीचमें गिरा हूं।

राजा लोग बोले, हे पुरुषर्षभ! आपकी वह अभिलाषा सार्थक होवे; आप हम लोगोंके यज्ञ और धर्म्मका फल ग्रहण करें। राजा ययाति बोले, मैं क्षत्रिय हूं, दान लेनेवाला ब्राह्मण नहीं हूं; विशेष करके दूसरेके पुण्यका क्षय करनेके निमित्त मेरी प्रवृत्ति नहीं होती है।

नारद मुनि बोले, राजा ययाति यह वचन कह रहे थे, उसी समयमें ब्रह्मचर्य्य परायणा वनवासिनो माधवी उसी स्थानपर आके उपस्थित हुई। उसको देखते ही उन चारों पुत्रोंने प्रणाम करके यह विनती की, कि हे तपोधने! तुम इस स्थानपर क्यों आई हो और तुम्हारा क्या प्रयोजन है? हम लोग सब तुम्हारे पुत्र हैं, इससे कहो तुम्हारो कौनसी आज्ञा पालन करें? उन लोगोंकी बात सुनकर तपस्विनी माधवीने हर्षसे अत्यन्त ही गद्गद होकर पिताके समीप जाकर उनके चरणोंको वन्दना की और पुत्रोंके मस्तकको स्पर्श करके बोली हे राजेन्द्र! ये पुत्र तुमसे पृथक् नहीं हैं, ये सब तुम्हारे दौहित्र हैं, इससे ये ही लोग तुम्हारा उद्धार करेंगे। यह बात कुछ नई नहीं है, पहिले समयमें सैकड़ों घटनाएं ऐसी देखी गई हैं। हे राजन्! मैं तुम्हारी पुत्री वनवासिनी माधवी हूं; इससे मेरा भी जो कुछ धर्म्म सञ्चय हुआ है, उसका आधा भाग तुम ग्रहण करो। विचारकर देखा, संसारमें सब पुत्र और पौत्रके किये हुए कर्म्मोंके फलका भाग पाते हैं; इसी निमित्त दौहित्रकी इच्छा करते हैं; मुझको गालव मुनिके हाथमें समर्पण करते समय तुमने जो दौहित्रकी इच्छा की थी, उसका भी यही प्रयोजन है। अनन्तर प्रतर्द्दन आदि चारों पुत्रोंने माताके चरणपर सिर झुकाके प्रणाम किया और स्वर्गसे पतित हुए मातामह (नाना)के परित्राण करनेके निमित्त जो वचन पहिले बोले थे, इस समय नमस्कार करके गम्भीर भावसे वही फिर कहने लगे। उन लोगोंकी बातके शेष होनेपर गालव मुनि भी

वनसे आकर राजा ययातिसे बोले, हे राजन्! मेरी तपस्याके आठवें भागसे तुम फिर स्वर्गको चले जाओ।

१२१ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजाओंमें श्रेष्ठ महाराज ययाति प्रतर्द्दन आदि समस्त साधु पुरुषोंको जानकर उनकी बातोंको सुनते ही मोह, शोकसे रहित होके दिव्य शरीर, दिव्य माला, और दिव्य भूषणोंको धारण करके पृथ्वीपर पांव न रखके फिर स्वर्गकी ओर चले। इसी अवसरमें संसारमें उदार और महादानी कहके प्रसिद्ध वसुमनाने सबसे पहिले ऊंचे स्वरसे कहा, हे राजन्! मैंने पृथ्वीमें रहनेवाले किसी प्राणीके द्वेष, निन्दा और अपमान न करनेसे जो फल प्राप्त किया है, वह मैंने तुमको समर्पण किया आप उसके अधिकारी होइये। और भी मैंने दान, क्षमा और यज्ञसे जो फल प्राप्त किया है, वह भी आपको देता हूं। अनन्तर क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ प्रतर्द्दन मातामहसे बोले, हे महाराज! सदा धर्म्ममें रत और युद्ध-कर्म्ममें युक्त रहनेसे क्षत्रियवंशके योग्य वीर शब्दके अनुसार मैंने जो कुछ पुण्य उपार्ज्जन किया है, इस समय तुम उसको ग्रहण करो।

इसके अनन्तर उशीनरपुत्र शिवि मधुर वचनोंमें बोले, हे राजन्! मैंने बालक और स्त्रियोंके समीपमें भी कभी मिथ्या वचन नहीं कहा है, हंसी, युद्ध, जीत, हार, आपदकाल, जुएका खेल और व्यसनके समयमें भी कभी मैंने झूठ वचन नहीं कहा है; उसी सत्यके प्रतापसे तुम स्वर्गको जाओ। जिस सत्यके निमित्त मैं राज्य, कर्म्म, सुख और प्राण भी त्याग सकता हूं, उसी सत्यके प्रभावसे तुम स्वर्ग लोकमें जाओ। जिस सत्यके प्रभावसे धर्म्म, अग्नि और इन्द्र मेरे ऊपर प्रसन्न हुए हैं; उसी सत्यके सहित तुम स्वर्गको जाओ। अनन्तर कौशिकवंशमें उत्पन्न हुए बहुत यज्ञ करनेवाले माधवीपुत्र अष्टक, राजा ययातिसे बोले,—हे राजेन्द्र! मैंने पुण्डरीक, गोमेध और वाजपेय आदि अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान किया है, तुम उन सबके फल भागी बनो। यज्ञके कार्य्य पूर्ण करनेके निमित्त मैंने जो धन, रत्न तथा दूसरी वस्तुओंको भी शेष नहीं रहने दिया; उसी सत्य निष्ठाके प्रभावसे आप स्वर्गको जाइये। इसी प्रकारसे दौहित्ररूपी उन चारों राजाओंने अपने अपने पुण्य और धर्म्मकी सहायतासे स्वर्गसे भ्रष्ट हुए राजा ययातिका उसी समय उद्धार कर दिया। वे लोग ऊपर कही हुई रीतिसे जैसे जैसे कहने लगे; राजा ययाति भी उसी प्रकारसे पृथ्वीकी सीमाको त्यागकर स्वर्गकी ओर जाने लगे,' इससे यह अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा, कि शुद्ध राजवंशमें उत्पन्न हुए कुलको पवित्र करनेवाले उन चारों राजसिंहोंने ही महा बुद्धिमान् मातामहको फिर भी स्वर्ग लोकमें भेज दिया। वे सब अपने अपने पुण्यके फलको प्रदान करके अन्तमें बोले, हे राजेन्द्र! हम सब लोग तुम्हारे दौहित्र और सब गुणोंसे युक्त हैं। इससे हम लोगोंके धर्म्मकी सहायतासे तुम सब विघ्नोंसे रहित होकर स्वर्गको जाओ।

१२२ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजा ययाति अनेक दक्षिणाओंके देनेवाले साधुचरित्रसे युक्त अपने दौहित्रोंके ऐसे कहनेपर उन लोगोंसे बिदा होके फिर भी स्वर्गको गये और वहींपर निवास करने लगे। अपने सुकृत कर्मोंसे वर्द्धित होनेपर भी वह दौहित्रोंके पुण्य फलसे निश्चल स्थानको पाकर अनेक सुगन्धित पुष्पोंसे युक्त शीतल, मन्द, सुगन्धित वायु सेवन करते हुए परम शोभासे प्रकाशित होने लगे। अप्सरा और गन्धर्व्व लोग अत्यन्त ही प्रीतिके साथ उनके सम्मुख नृत्य करने और गीत गाने लगे। देव-

ताओंके सेवक लोग नगाड़ेके शब्दसे उन्हें आनन्दित करने लगे। अनेक देवर्षि, राजर्षि, सिद्ध चारण उनको स्तुति करने लगे और देवताओंने उत्तम अर्घ प्रदान करके उनकी पूजा की; तथा यथा उचित उनका सम्मान किया।

महा बुद्धिमान् राजा ययातिके इस प्रकारसे स्वर्गलोक पानेसे पितामह ब्रह्माने अपने मीठे वचनोंसे उन्हें तृप्त करते हुए यह कहा, कि हे राजर्षि! तुमने लोक हितकर सब पुण्यके कर्म्मोंको कर चतुष्पाद धर्म्म सञ्चय करके अक्षय स्वर्ग लोक पाया था; और इस स्थानमें तुम्हारी कीर्त्तिका स्तम्भभी अक्षय था परन्तु तुमने अपने अविचारके दोषसे सम्पूर्ण स्वर्ग वासियोंके अन्तः करणको अज्ञानसे ऐसा ढांप दिया था, कि उस समय कोई भी तुमको जान न सका; इससे सबने जब तुम्हें नहीं चीन्हा, तभी तुम स्वर्गसे गिराये गये। अनन्तर अपने दौहित्रोंके प्रतापसे फिर परित्राण पाकर स्वर्गमें आये हो और तुमने निजकर्म्मसे उपार्ज्जित पुराने सब लोकोंको फिर प्राप्त करके अक्षयपदको पाया है।

राजा ययाति बोले, हे पितामह! मुझे एक बड़ी भारी शङ्का उपस्थित हुई है; आप कृपा करके उसको मिटा दीजिए; आपके विद्यमान रहते दूसरेसे पूछना मुझे उचित नहीं है। वह शङ्का यही है, कि कई सहस्र वर्षतक मैंने प्रजापालन, दान और यज्ञ करके जो अनेक प्रकारसे पुण्य सञ्चय किया था, वह थोड़े ही समयमें क्यों क्षीण होगया? किस अपराधसे मैं स्वर्गसे गिराया गया? हे महातेजस्विन्! मेरे निमित्त जो सब शाश्वत लोक तैयार हुए थे; वह कुछ भी आपसे नहीं छिपे हैं; तब किस कारणसे वह सब नष्ट होगये?

ब्रह्मा बोले, हे राजेन्द्र! तुमने दान, यज्ञ आदि कर्म्मोंको करके जो बहुतसे पुण्य सञ्चित किये थे, उन सब पुण्योंके फलोंका केवल एक मात्र अभिमानके दोषसे ही क्षय हुआ था, और इसी निमित्त तुम स्वर्गवासी लोगोंसे धिक्कार पाकर स्वर्गसे गिराये गये थे। हे राजर्षि! यह स्वर्ग लोक है; बल, अभिमान, हिंसा और शठतासे कभी कोई पुरुष यहां निवास नहीं कर सकता। इसलिए अबसे तुम उत्तम मध्यम और अधम पुरुषोंमें किसीकी भी अवमानना मत करना। तुम्हें अधिक क्या कहूं, जो लोग अभिमानकी अग्निसे जलते हैं, उनके समान पापी यहां कहीं भी नहीं दीख पड़ते। हे राजन्! जो मनुष्य तुम्हारे इस स्वर्गसे गिरने और फिर स्वर्गपर चढ़नेके विषयको कहेंगे और सुनेंगे, वह महा घोर आपदसे भी अनायास ही पार हो सकेंगे। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

नारद मुनि बोले, हे नरनाथ! पहिले समयमें राजा ययाति अभिमानसे और गालव मुनिने हठसे इतने दुःख और क्लेश पाये थे। हितकी इच्छा करनेवाले पुरुषोंको सुहृद लोगोंकी तें अवश्य ही सुनना उचित है; हठके वशमें होना किसी प्रकारसे भी उचित नहीं है; क्योंकि हठ करनेसे केवल नाश होने, हीकी सम्भावना होती है। इससे हे गान्धारीनन्दन! तुम भी अभिमान और और क्रोध त्याग दो। हे वीर! युद्धका आड़म्बर छोड़कर पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करो। हे राजन्! मनुष्य जो कुछ दान और तपस्या आदि कर्म्म करते हैं; कभी उसका अनायास ही नाश नहीं होता और कर्म्मके करनेवालेके अतिरिक्त दूसरा कोई भी उस कर्म्मफलका भागी नहीं हो सकता। इस लोकमें जो मनुष्य राग, द्वेष छोड़कर अनेक शास्त्रके ज्ञान तथा युक्तिसे निश्चय किये हुए इस उपाख्यानको अपने हृदय,में धारण करता हैं, वह धर्म्म, अर्थ और कामको प्राप्त करके पृथ्वीके राज्यका भोग कर सकता है।

१२३ अध्याय समाप्त।

नारद मुनिकी बात समाप्त होनेपर राजा धृतराष्ट्र बोले, हे भगवन्! आपने जो कुछ वचन कहे, वह सब ही यथार्थ हैं। मेरी भी ऐसी ही इच्छा है; परन्तु क्या करूं, इच्छा रहनेपर भी मेरी कुछ भी प्रभुता नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुरुश्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्र नारदसे ऐसे वचन कहकर श्रीकृष्ण-चन्द्रको सम्बोधन करके बोले, हे कृष्ण! तुमने हम लोगोंके निमित्त हितकारी, स्वर्गको साधन करनेवाले, धर्म्म और न्यायसे युक्त वचन कहे हैं। परन्तु हे तात! मैं स्वयं दूसरेके वशमें होरहा हूं; नीचबुद्धि दुर्य्योधन मेरे प्यारे कार्य्य करनेमें प्रवृत्त नहीं होता है। हे महाबाहो पुरुषोत्तम! इससे मेरी आज्ञा न माननेवाले इस मूर्ख दुष्टात्माको तुम ही सन्मार्गपर लानेके निमित्त यत्न करो। यह पापी; बुद्धिमान् विदुर, गान्धारी, भीष्म आदि सुहृद पुरुषोंकी बात नहीं सुनता। हे कृष्ण! इससे तुम ही इस पापी और मूर्ख दुर्य्योधनको शासित करो; ऐसा करनेहीसे तुम्हारा मित्रोंके निमित्त बहुत ही उचित और बड़ा भारी कार्य्य सिद्ध होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सब धर्म्म जाननेवाले श्रीकृष्ण क्रोधी दुर्य्योधनके समीप जाकर इस प्रकारसे मधुर वचन कहने लगे। हे कुरुसत्तम दुर्य्योधन! तुम युद्ध करनेके वास्ते अत्यन्त ही हठ करते हो; इससे तुम्हारी शान्तिके निमित्त मैं जो कहता हूं, वह अच्छी भांतिसे चित्त लगाकर सुनो। हे भारत! तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हो, तुम शास्त्र-ज्ञान, सदाचार और ऐश्वर्य्य आदि सब गुणोंसे युक्त हो; इससे मेरे वचनके अनुसार तुमको उत्तम व्यवहार अवश्य ही करना उचित है। तात! तुम्हरे विचारसे जो कर्म्म करनेके योग्य निश्चित हो रहा है, वह नीच कुलमें उत्पन्न हुए दुष्टात्मा, अधर्मी, और लज्जाहीन पुरुष लोग ही किया करते हैं। हे भरतर्षभ! इस सम्पूर्ण पृथ्वीके बीच साधु स्वभावसे युक्त पुरुषोंको ही प्रवृत्ति धर्म्म, अर्थसे युक्त दीखी जाती है। नीच पुरुषोंके विषयमें यह सब बातें उलटी होती है; अर्थात् वह लोग जिस कार्य्यमें प्रवृत्त होते हैं, वह प्राय: अधर्म्म और अनर्थसे पूर्ण होता है। सम्प्रति तुम्हारे भी कार्य्यमें वही उलटी प्रवृत्ति बार बार होती दीखती हैं। इस प्रकारकी प्रवृत्ति रखके जो तुम बहुत ही हठ करते हो, वह हठ अधर्म्मका मूल, भयका उत्पन्न करने वाला और महा अनर्थका कारण है; ऐसा क्या वह प्राण अर्थान्त नाश कर सकता है। इस प्रकारका निरर्थक हठ करनेका कोई कारण भी नहीं दीख पड़ता है, विशेष करके इसको रक्षा भी तुम नहीं कर सकोगे। हे परन्तप! इससे यदि तुम्हें वह अनर्थ त्याग कर अपने कल्याणके साधन करनेकी इच्छा होवे; यदि भाई सेवक और मित्रोंको इस अधर्म्मसे युक्त यशरहित कर्म्मसे निस्तार करनेकी अभिलाषा होवे; तो अत्यन्त पराक्रमी, महा बुद्धिमान्, महा उत्साहसे युक्त, शास्त्रोंके जाननेवाले पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करो; ऐसा ही करनेसे उक्त अभिलाषा पूर्ण हो सकती है। सन्धिके करनेसे केवल तुम्हारा ही उपकार होगा, यह बात नहीं है; उससे राजा धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, विदुर, कृपाचार्य्य, सोमदत्त, वाह्लिक, अश्वत्थामा, विकर्ण, सञ्जय, विविंशति आदि सब साधु पुरुष, मित्र और ज्ञातिके लोगोंका भी बहुत ही हित साधन और प्रीतिकी वृद्धि होगी। हे तात! तुम्हारी शान्तिसे सम्पूर्ण जगतके ही मङ्गलकी सम्भावना है। हे भरतर्षभ! तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हो, शास्त्रज्ञ तेजस्वी और दयालु हो; इससे माता पिताकी आज्ञा पालन करना तुम्हें बहुत ही उचित है। हे भरतर्षभ! पिता जिस प्रकारसे शासन करें, अच्छे पुत्र लोग उसीको उत्तम समझते हैं। भारी विपदमें पड़नेपर भी मनुष्य पिताके शासनमें स्थित रहते हैं। जब तुम्हारे

पिताकी यही इच्छा है, कि पाण्डवोंके सङ्ग मेल होवे, तब तुमको भी सेवकोंके सहित उसी कार्य्यकी इच्छा करनी योग्य है। जो पुरुष सुहृद लोगोंका वचन सुनकर उसको नहीं ग्रहण करता, उसके कर्म्मोंके फलके शेष होने-पर अवश्य वह महा कालके मुखमें पड़के जलता रहता है। मोहमें फंसकर जो पुरुष हितका बचन नहीं कहता, वह अवश्य ही आलसी और असमर्थ होकर पश्चात्ताप करता रहता है। परन्तु जो बुद्धिमान् पुरुष अपना मत त्याग कर हित चाहनेवाले मित्रोंको बात पहिले ही मान लेते हैं, वे इस लोकमें परम सुखसे आनन्दित रहते हैं। जो पुरुष हितैषी मित्रोंको बात अपने प्रतिकूल जानकर उसे ग्रहण नहीं करता; और नीच पुरुषोंके यथार्थ प्रतिकूल वचन सुनता है; वह अवश्य ही शत्रु-ओंके वशमें होजाता है। जो नीचबुद्धि उत्तम चरित्रवाले साधु पुरुषोंको बातको न मानकर दुष्ट पुरुषोंके मतके अनुसार चलता है, उसके मित्र लोग थोड़े ही समयमें उसे विपदमें पड़े हुए देखकर शोक करते हैं। जो मूर्ख राजा गुणवान् तथा सुख्य सेवकोंको त्याग करके अधम तथा दुष्ट मन्त्रियोंका आदर करता है, वह महा घोर विपदरूपी समुद्रमें गिरकर कभी उसके पार नहीं जा सकता।

हे भारत! जो अनर्थ करनेवाला मूढ़ राजा उत्तम स्वभावसे युक्त मित्रोंके कल्याणकारी वचन न सुनके यथार्थ मित्रोंसे द्वेष और दूसरे पुरुषोंका गौरव करता है, उनकी उत्तम पुरु-षके वशमें रहनेवाली पृथ्वी अवश्य ही परित्याग करती है। हे भरतर्षभ! तुम भी महावीर पाण्डवोंके सङ्ग विरोध करके दुष्ट, असमर्थ और मूढ़ लोगोंसे परित्राण पानेकी आशा कर रहे हो। इस पृथ्वीमें तुम्हें छोड़कर और कौनसा मनुष्य इन्द्रके समान महारथ ज्ञातिके लोगोंको त्यागकर दूसरे पुरुषोंसे परित्राण पाने-की इच्छा करेगा? तुम जन्मसे कुन्तीपुत्रोंको दुःख देते चले आते हो; परन्तु धर्म्मात्मा पाण्डव लोग तब भी तुम्हारे ऊपर क्रोध नहीं करते हैं। हे महाबाहो! तुम्हारे सदासे कपट व्यवहार करनेपर भी वे महा यशस्वी परम स्नेह रखनेवाले सुख्य बन्धु लोग जैसे तुम्हारे सङ्ग सदासे उत्तम आचार करते आते है, वैसा ही व्यवहार तुमको भी करना उचित है; कि क्रोधके वशमें न होकर इस समयसे भी उन लोगोंके सङ्ग तुम उत्तम व्यवहार करो।

हे भरतर्षभ! बुद्धिमान् पुरुष जिस कार्य्यको आरम्भ करते हैं, वह धर्म्म, अर्थ और कामसे युक्त होता है। एक ही समयमें त्रिवर्ग कामोंका होना असम्भव मालूम होनेसे वे धर्म्म और अर्थसे युक्त कार्य्य करते हैं। यदि धर्म्म, अर्थ और काम एक एक करके प्राप्त करनेकी इच्छा होती है, तो उत्तम प्रकृतिके पण्डित लोग पहिले धर्म्महीके कार्य्यमें प्रवृत्त होते हैं; मध्यम प्रकृतिके लोग अर्थ सिद्ध करके स्वर्ग लाभ कर सकते हैं। नीच प्रकृतिसे युक्त अधम पुरुष केवल कामहीमें प्रवृत्त होते हैं। इन्द्रि-योंके वशमें रहनेवाला जो मूढ़ पुरुष धर्म्म और अर्थका त्याग करके नीच उपायसे केवल कामको सिद्ध करनेकी इच्छा करता है; उसका शीघ्र ही नाश होता है। जो पुरुष काम और अर्थके सिद्ध करनेकी अभिलाषा करेगा, वह पहिले अधर्म्म आचरण अवश्य करेगा; क्योंकि अर्थ और काम कभी धर्म्मसे पृथक् नहीं रहते, अर्थात् धर्म्मके अनुसार सिद्ध न होनेपर अर्थ और काम साधक नहीं होते। हे राजेन्द्र! पण्डितोंने धर्म्महीको त्रिवर्ग प्राप्त कर-नेका उपाय कहा है। क्योंकि जो बुद्धिमान् पुरुष धर्म्मको अवलम्बन करके त्रिवर्गको प्राप्त करनेकी इच्छा करते हैं, वे सूखी लकड़ीकी अग्निकी भांति सदा ही बढ़ते रहते हैं।

हे भरतर्षभ! तुम केवल दुष्ट उपायसे हो सब राजाओंके बीच विख्यात होने तथा सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको लेनेकी अभिलाषा करते हो। हे राजन्! जो पुरुष सम्पूर्ण प्रकारसे सत्यव्यवहारमें लगे हुए उत्तम स्वभावसे युक्त मनुष्योंके सङ्ग कपट व्यहार करता है, वह कुठारसे वनको काटनेकी भांति अवश्य हो अपना नाश करता है। जो किसीके पराभवको इच्छा नहीं करता, उसकी बुद्धि कभी नष्ट न होनेसे उस पुरुषका चित्त कल्याणकारी विषयोंमें प्रवृत्त रहता है, हे भारत! अपनी आत्माके कल्याणकी इच्छा करनेवाले जितेन्द्रिय पुरुष-पाण्डवोंकी बात तो दूर रहे, इस पृथ्वीके बीच साधारण मनुष्योंका भी अपमान नहीं करते। जो पुरुष क्रोधके वशमें होता है, उसको भले बुरेका कुछ भी ज्ञान नहीं रहता; देखो लोक और वेदमें प्रसिद्ध बड़े बड़े प्रमाण उसके सम्मुख तुच्छ होते हैं।

हे भारत! दुष्ट पुरुषोंके सङ्गका त्यागकर पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करनी तुम्हारे निमित्त बहुत हो उत्तम है; क्योंकि यदि वे लोग तुम्हारी प्रीति पूर्ण करनेके निमित्त इच्छा करेंगे, तो तुम्हारी सब अभिलाषा पूर्ण हो सकती है। एक बार विचार करके देखो तो सही, तुम पाण्डवोंके पराक्रमसे जीती हुई इस समस्त पृथ्वीके राज्यका भोग कर रहे हो; पाण्डवोंको छोड़कर अब दूसरोंसे परित्राण पानेकी इच्छा करते हो; दुर्म्मिसह, दुःशासन, कर्ण और शकुनि आदि कुमन्त्रियोंसे ऐश्वर्य्य लाभ करनेके निमित्त उन्मादी हो रहे हो। परन्तु पाण्डवोंके सङ्ग ये लोग ज्ञान, धर्म्म और पराक्रम किसीमें भो समान नहीं हैं। केवल येही लोग क्यों, उपस्थित सब राजा लोग हो युद्धके समयमें क्रोधसे पूर्ण तेजस्वी भीमसेनके मुखकी ओर न देख सकेंगे। हे महाबाहो! भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृपाचार्य्य, भूरिश्रवा, सोमदत्त, अश्वत्थामा और जयद्रथ आदि महावीर पुरुष तुम्हारे सहाय हैं; परन्तु अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करनेमें ये सब हो असमर्थ हैं। इन लोगोंकी तो बात हो क्या है? देवता, असुर, गन्धर्व्व और मनुष्योंके सहित सब लोकके पुरुष भी इकट्ठे होकर युद्धमें अर्ज्जुनको नहीं जीत सकते।

हे तात! इससे तुम युद्ध करनेमें कभी चित्त मत लगाओ; और तुम अपनी सेनाके बीचसे ऐसा कोई पुरुष बाहर तो करो, जो युद्धभूमिमें अर्ज्जुनके हाथमें पड़कर शरीरसे कुशलपूर्व्वक बचके घर लौट सके? जिसके जीतनेसे तुम्हारा विजय होवे, पहिले ऐसे किसी पुरुषको खड़ा करो, नहीं तो व्यर्थ मनुष्योंके नाश करनेसे क्या प्रयोजन है? जिन्होंने खाण्डव वनमें अग्निको तृप्त करते समय यक्ष, गन्धर्व्व, असुर और नागोंके सहित सम्पूर्ण देवताओंको जीता था; उस अलौकिक वीरतासे युक्त अर्ज्जुनके सङ्ग कौन पुरुष युद्ध कर सकता है? विराट देशको जो बड़ी अद्भुत बात सुनी जाती है, अकेले अर्ज्जुनके साथ बहुतसी संख्यासे युक्त मनुष्योंके संग्राममें यही एक अन्तिम प्रमाण है। दूसरेको तो बात हो क्या है, त्रिपुरासुरको विजय करनेवाले साक्षात् महादेव उसके युद्धसे प्रसन्न हुए हैं। उस असाधारण बल और पराक्रमसे युक्त देवताओंमें अग्रगामी प्रतापशाली जिष्णुको तुम जीतनेकी अभिलाषा करते हो; इससे तुम्हारी कितनी मूर्खता और दुराशा प्रकाशित हो रही है; उनको मैं क्या कहूंगा? संग्रामभूमिमें विरुद्ध खड़े होनेवाले मेरे सहित अर्ज्जुनको युद्धके निमित्त आवाहन करनेमें कौन पुरुष साहस कर सकता है? मनुष्योंकी तो बात हो क्या है, साक्षात् इन्द्र भी युद्ध करनेमें समर्थ नहीं हो सकते। जो पुरुष युद्धमें अर्ज्जुनको जीत सकेगा, वह अपनी दोनों भुजाओंके बलसे पृथ्वीको भी उठा सकेगा, क्रोध करनेसे सम्पूर्ण प्राणियोंको

भस्म कर सकेगा और देवताओंको भी स्वर्गसे भगानेमें समर्थ होगा।

हे भरतर्षभ! इससे तुम एक बार पुत्र, पौत्र भाई, जाति तथा दूसरे सम्बन्धी लोगोंकी ओर अच्छी प्रकारसे आंख खोलकर देखो, भरतवंशमें उत्पन्न हुए ये सब उत्तम उत्तम महावीर पुरुष जिसमें तुम्हारे निमित्त नाश न हो जावें; कौरवोंका यह प्रतिष्ठित कुल इकबारगी शेष न हो जावे; और लोकमें "कीर्त्ति और कुलको नाश करनेवाला" कहके सब लोग जिसमें तुम्हारी निन्दा न करें, तुम वही कार्य्य करो। सन्धि करनेसे महारथ पाण्डव लोग तुमको ही युवराज और राजा धृतराष्ट्रको महाराज बनावेंगे। हे तात! इससे सन्धिके निमित्त उद्यत हुई राजलक्ष्मीकी अवमानना न करो। पाण्डवोंको आधा राज्य देकर तुम इस पृथ्वीकी लक्ष्मीका लाभ उठाओगे। तुम मित्रोंके वचन मानकर यदि पाण्डवोंके सङ्ग मेल करोगे, तो मित्रोंकी प्रीतिके पात्र होकर स्थिरतासे अपना कल्याण सिद्ध करनेमें समर्थ होओगे।

१२४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णचन्द्रकी बातोंको सुनकर शान्तनुपुत्र भीष्म क्रोधी दुर्य्योधनसे कहने लगे। हे तात! मित्रोंको शान्तिकी इच्छासे महात्मा कृष्णने तुमसे जो कुछ वचन कहे हैं, तुम क्रोध छोड़कर सब प्रकारसे उसी मार्गके अनुगामी होओ। महाबुद्धिमान् कृष्णके इन उत्तम उपदेशोंसे भरे वचन न माननेसे किसी भांतिसे तुम्हारा कल्याण न होगा, तुम किसी कालमें भी यथार्थ सुख और कल्याणका दर्शन न कर सकोगे, हे राजन्! महाबाहु कृष्णने धर्म्म, अर्थसे भरे हुए इष्टसाधक उत्तम ही वचन तुम्हारे निमित्त कहे हैं; इससे तुम एकाग्र चित्तसे उन बातोंको स्वीकार कर लो; निरर्थक सब प्रजाका नाश मत करो। हे भरतश्रेष्ठ! महा बुद्धिमान् कृष्ण, बूढ़े प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र और विदुर, इन लोगोंके अर्थसे युक्त यथार्थ वचन न माननेसे तुम अन्धे राजा धृतराष्ट्रके जीवित रहते ही अपनी दुष्टता और नीचताके कारण सब राजाओंके बीच बहुत बढ़ी और प्रज्वलित इस राजलक्ष्मीके नाश करनेका विधान करोगे और अभिमानसे मतवाले होकर पुत्र, पौत्र, भाई, सेवक, और सम्बन्धियोंके सहित अपने प्राण और धनका भी निःसन्देह नाश करोगे। हे तात! इससे मैं तुम्हें फिर भी बार बार निषेध करता हूं, कि तुम कुलघाती, कापुरुष, दुष्टबुद्धि और कुमार्गगामी होकर माता पिताको शोकरूपी महा समुद्रमें मत डुबाओ।

भीष्मके ऐसा कहके चुप होनेके अनन्तर, द्रोणाचार्य्य लम्बी सांस लेते हुए क्रोधी दुर्य्योधनसे यह वचन बोले, हे तात! श्रीकृष्ण और शान्तनुपुत्र भीष्मने तुमसे जो कुछ धर्म्म और अर्थसे युक्त वचन कहे हैं; तुम सब शङ्का त्यागकर उन्हीं वचनोंके अनुसार चलो। हे राजेन्द्र! ये लोग महाबुद्धिमान्, तेजस्वी, धर्म्मात्मा और शास्त्रोंको जाननेवाले हैं; विशेष करके दोनों ही तुम्हारे परम हितैषी हैं; इससे इन लोगोंने तुम्हारे हितहीके वचन कहे हैं; अब तुम भी सब संशय और शङ्का छोड़कर इनका वचन मान लो। हे महाबुद्धिमन्! हे परन्तप! कृष्ण और भीष्मने जो बातें कही हैं, तुम उन्हीका अनुष्ठान करो, बुद्धिके मोहमें पड़कर किसी प्रकारसे भी कृष्णकी अवज्ञा मत करो। यह कर्ण आदि कुमन्त्री लोग जो सदा ही बुरे परामर्शसे तुम्हें उत्साहित कर रहे हैं, ये लोग कभी तुम्हारा विजय साधन करनेमें समर्थ न हो सकेंगे। युद्धके समयमें ये लोग दूसरेके ऊपर वैरको अर्पण करके निश्चिन्त हो जायंगे। हे राजेन्द्र! इससे तुम समस्त प्रजा और पुत्र, भाई तथा इष्ट

मित्रोंका व्यर्थ नाश मत करो। तुम इस बातको निश्चय पूर्व्वक जान रक्खो, कि जिस सेनामें कृष्ण और अर्ज्जुन निवास करते हैं, वह बहुत ही अजेय है। हे तात! हे भारत! मित्रोंमें श्रेष्ठ कृष्ण और भीष्मने जो कुछ वचन कहे हैं, यदि तुम उन सत्य वचनोंको न मानोगे, तो अवश्यही तुम्हें पश्चात्ताप करना पड़ेगा। अर्ज्जुनके विषयमें ऋषिश्रेष्ठ परशुरामजीने जो कुछ कहा है, वह उससे भी सहस्र गुण श्रेष्ठ हैं। देवकीपुत्र श्रीकृष्णको बात मैं क्या कहूंगा; देवता लोग भी इनका प्रताप नहीं सह सकते। हे भरतर्षभ! तुम्हारे समीप प्यारे और सुख उत्पन्न करनेवाले वचन कहनेहीसे क्या फल होगा? सुहृद लोगोंका जैसा कहना उचित है, वह सब कहा गया, इस समय जैसी तुम्हारी इच्छा होवे, वैसे ही कार्य्य तुम करो। तुमको अब अधिक बात कहनेकी मेरी इच्छा नहीं होती है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रोणाचार्य्यके वचनके शेष होनेपर महा बुद्धिमान् विदुर भी क्रोधी दुर्य्योधनके मुंहको ओर देखकर यह वचन बोले। हे भरतसत्तम! मैं तुम्हारे निमित्त कुछ भी शोक नहीं करता हूं; परन्तु ये जो बूढ़े तुम्हारे माता और पिता हैं, जो तुम्हें शत्रुस्वरूपसे सहाय पाकर सहाय रहित होंगे, मैं उन्हींके निमित्त शोकसे व्याकुल हो रहा हूं। अहो! ऐसे कुलघाती पापी कुपुत्रको उत्पन्न करके वह मित्र सेवक और सम्बन्धियोंके मारे जानेपर भिक्षुक और पङ्खरहित पक्षीको भांति इस पृथ्वी पर शोक करते हुए चारों ओर घूमेंगे यही मुझे असह्य दुःख है।

अनन्तर राजा धृतराष्ट्र भाइयोंके सहित राजाओंके बीचमें बैठे हुए दुर्य्योधनसे यह वचन कहने लगे।

हे पुत्र दुर्य्योधन! महात्मा कृष्णने धर्म्म और अर्थसे युक्त जो कुछ शुभ वचन कहे हैं, वह तुम अवश्य अपने हृदयमें धारण करो। यह महा तेजस्वी कृष्ण जब हम लोगोंके सहाय बनेंगे, तो निःसन्देह हम लोग सब राजाओंके बीच सब प्रकारसे अपना अभीष्ट प्राप्त करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे तात! इससे तुम कृष्णके कहनेके अनुसार पाण्डवोंके सङ्ग सम्बन्ध करके युधिष्ठिरसे मेल करो; भरतकुलकी रक्षाका अनुष्ठान करो। आचार्य्यरूपी कृष्णका उपदेश मानकर शान्ति स्थापनके निमित्त प्रवृत्त हो जाओ। मेरी समझमें सन्धि करनेका यही उत्तम समय उपस्थित हुआ है; इससे किसी प्रकारसे भी यह समय मत टालो। दयावान् कृष्णने तुम्हारे हित और शान्तिके निमित्त ये सब बातें कही हैं। यदि इन वचनोंपर ध्यान न दोगे, तो निःसन्देह तुम्हारा पराजय होगा।

१२५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा धृतराष्ट्रके वचन सुन भीष्म और द्रोणाचार्य्य उसे युक्तियुक्त समझकर, शासनको न माननेवाले दुर्य्योधनसे यह वचन बोले। हे भारत! जबतक कृष्ण अर्ज्जुन युद्धके निमित्त नहीं खड़े होते हैं; जबतक गाण्डीवधनुष स्थिर भावसे है; जबतक पुरोहित धौम्य यज्ञको अग्निमें शत्रुओंका बल नहीं हवन करते हैं; लज्जाशील महारथ युधिष्ठिर जबतक क्रुद्ध होकर तुम्हारी सेनाके ऊपर दृष्टि नहीं करते हैं; जबतक वह भयङ्कर युद्ध आरम्भ नहीं होता है, तब ही तक इस विरोधकी शान्ति होनी उचित है। जबतक प्रचण्ड धनुष ग्रहण करके भीमसेन सम्मुख नहीं आता है और यमराजके समान गदा हाथमें लेकर जबतक सब सेनाका संहार नहीं करता है, तभीतक तुम पाण्डवोंके सङ्ग विरोध त्यागकर सन्धि कर लो। जबतक भीमकी गदासे पके हुए तालके फलके समान वीरोंके शिर पृथ्वीमें नहीं गिरते हैं, तभीतक

तुम सन्धिके निमित्त यत्न करो। जबतक नकुल सहदेव, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, विराट, शिशुपालके पुत्र आदि सब शस्त्रोंको जाननेवाले वीर लोग वर्म्म धारण करके महामारीकी सृष्टि नहीं करते हैं, तभी तक विरोध त्याग करके सन्धिके निमित्त यत्न करो। जबतक राजाओंके कोमल शरीरमें चोखे बाण नहीं घुसते हैं, तभीतक सन्धि होनी उचित है। पाण्डवोंको उत्तेजित करनेवाले, महा धनुर्द्धारी बहुत दूरके लक्ष्य (निशाने) को बेधनेवाले, सब शस्त्रोंको जाननेवाले सैनिक योद्धा लोग जबतक चन्दनचर्चित शरीरपर प्रकाशित मणि और हार पहरकर सब लोहमय शस्त्रोंको नहीं धारण करते है, तभीतक शान्ति होनी उचित है। हे राजन्! राजाओंमें श्रेष्ठ धर्मराज युधिष्ठिर तुमको शिर झुका कर प्रणाम करते हुए देखकर अपनी दोनों भुजाओंसे ग्रहण करें, शान्तिके निमित्त ध्वजा, अंकुश आदि चिन्हसे युक्त अपना दहिना हाथ तुम्हारे कन्धे पर रक्खें और तुम्हारे बैठनेपर रत्न औषधिसे युक्त उज्ज्वल अगूंठियोंसे शोभित अपनी हथेलीसे तुम्हारी पीठ ठोंकें। हे भरतर्षभ! महाबाहु भीमसेन तुम्हारे सङ्ग मिलकर शान्तिके निमित्त तुमसे बात चीत करें। अर्जुन और नकुल, सहदेव भी जब तुम्हें प्रणाम करें तब तुम उनका मस्तक सूंघकर उन लोगोंके सङ्ग प्रीतिपूर्व्वक बातचीत करो। हे राजेन्द्र! तुमको वीरोंमें अग्रगामी पाण्डव भाइयोंके सङ्ग मिलते हुए देखकर सम्पूर्ण राजा लोग आनन्दसे आंसू गिरावेंगे। समस्त राजाओंकी राजधानियोंमें तुम लोगोंके आपसमें भ्रातृभावसे मिलनेकी घोषणा होगी। अधिक क्या कहें, तुम लोग भ्रातृभावसे आपसमें मिलकर सम्पूर्ण पृथ्वीकी राजलक्ष्मी भोगते हुए सब शोक और चिन्तासे रहित होओगे।

१२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा दुर्य्योधन कौरवोंको सभाके बीचमें अप्रिय वचन सुनकर महाबाहु यशस्वी श्रीकृष्णचन्द्रसे बोले, आपने जो कुछ वचन कहे, वह अच्छे प्रकारसे विचारकर कहना उचित था। हे मधुसूदन! पाण्डवोंकी भक्तिके वशमें होकर उक्त प्रकारके वचनोंसे तुमने मेरी बहुत ही निन्दा की है। परन्तु मैं पूछता हूं, कि तुम कौनसे बलाबलका विचारकर इस प्रकारसे मेरी सदा निन्दा करते हो? केवल तुम ही नहीं; विदुर, राजा, आचार्य्य और पितामह भी दूसरे सब राजाओंको छोड़कर केवल मेरी ही निन्दा करते रहते हैं। मैंने अपने शरीरसे कोइ दोष नहीं किया है; तो भी तुम तथा दूसरे राजा लोग मुझसे द्वेष करते हैं। हे शत्रुनाशन कृष्ण! मैं एकाग्र-चित्तसे विचार कर देखता हूं, तो भी तुम्हरा कोई भारी अपराध मुझसे नहीं हुआ है; भारी अपराध क्यों? मेरा तनक भी दोष नहीं दीख पड़ता है। हे मधुसूदन! पाण्डवोंके प्रिय और इच्छानुसार जुएके खेलमें शकुनिने जो उन लोगोंका राज्य जीत लिया था, उसमें मेरा क्या अपराध था? किन्तु उस समयमें जो कुछ धन जीता गया था, वह उन्हीं लोगोंका लौटा देनेके लिये मैंने आज्ञाकी थी। हे शत्रुनाशन! पासेके खेलमें फिर भी हारकर जो अजेय पाण्डव वनको गये, उसमें भी मेरा कौनसा अपराध है? हे कृष्ण! वे लोग किस अपराधसे हम लोगोंको शत्रु स्थिर करते हैं? और असमर्थ होकर भी महाहर्षके साथ हम लोगोंके सङ्ग विरोध करनेमें क्यों प्रवृत्त हो रहे हैं? मैंने उन लोगोंकी कौनसी हानि की है? कौनसे अपराधके कारणसे वे सृञ्जयोंके सहित धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी हिंसा करनेकी अभिलाषा करते हैं? हम लोग क्या किसी कठोर कर्म्म अथवा वचनसे भयभीत होकर उनके सम्मुख शिर झुकावेंगे? कभी नहीं; साक्षात् इन्द्र भी

आवें तो भी मैं किसी प्रकारसे न डरूंगा। हे शत्रुनाशन कृष्ण! मैं क्षत्रियधर्म्मके अनुष्ठान करनेवाले ऐसे किसी पुरुषको नहीं देखता हूं, जो हम लोगोंको जीतनेमें उत्साही हो सके। हे कृष्ण! पाण्डवोंकी बात तो दूर है, साक्षात् देवता लोग भी भीष्म, द्रोण, कर्ण और कृपाचार्य्य आदि मेरे महावीर योद्धाओंको पराजित करनेमें समर्थ नहीं हैं। हे कृष्ण! अपने धर्म्मको पालन करते हुए, यदि दैव-संयोगसे हम लोग संग्राममें मारे जावेंगे, तो भी हम लोगोंको स्वर्ग लोक मिलेगा। हे जनार्द्दन! हम लोग युद्धमें शरशय्यापर शयन करें, यही हम लोगोंके क्षत्रियकुलका परम धर्म्म है। हे कृष्ण! इससे हम लोग शत्रुओंके सम्मुख शिर न झुकाकर वीर-शय्यापर शयन करेंगे; वह शय्या किसी प्रकारसे भी हम लोगोंको सन्तापित न करेगी। वीरकुलमें उत्पन्न होकर धर्म्मका अनुष्ठान करनेवाला कौन पुरुष केवल अपने प्राणकी रक्षाके निमित्त शत्रुओंके सम्मुख शिर झुकावेगा? आत्म-हितकी चाहनेवाले बुद्धिमान् क्षत्रिय लोग सदा ही उद्यमशील होवें, किसी प्रकारसे भी मस्तक न झुकावें; क्योंकि उद्यम ही पुरुषार्थ है; यद्यपि और स्थानमें अवनत होवे, पर किसी कालमें भी शत्रुके सम्मुख शिर न झुकावें" मातङ्ग मुनिके इस वचनको सदा आदरके साथ ग्रहण करते रहते हैं। मेरे समान क्षत्रिय लोग और किसीकी भी चिन्ता न करके धर्म्मके निमित्त केवल ब्राह्मणको ही प्रणाम करेंगे, परन्तु दूसरे लोगोंके साथमें जीवन पर्य्यन्त मातङ्ग मुनिके ऊपर कहे हुए वचनके अनुसार व्यवहार करेंगे। यही उनका धर्म्म और यही मेरा निश्चित मत है। हे कृष्ण! पहिले पाण्डवोंको जो मेरे पिताने राज्यका अंश दे दिया था; इस समय मेरे जीवित रहते वे लोग किसी प्रकारसे भी नहीं पा सकेंगे। राजा धृतराष्ट्र जबतक जीवित हैं तबतक क्या हम लोग और क्या वे लोग सबहीको शस्त्र त्यागकर उनका उपजीवी बनना पड़ेगा। हे कृष्ण! जबतक मैं बालक और दूसरेके आधीनमें था, उस समय मेरे पिताने अज्ञानसे अथवा भयसे ही मेरा राज्य पाण्डवोंको दिया था। परन्तु अब वह राज्य किसी प्रकारसे भी नहीं दिया जा सकता। हे वृष्णिनन्दन! हे महाबाहो केशव! अब इस समयमें दुर्य्योधनके जीवित रहते वे लोग किसी कालमें भी वह राज्य फिर नहीं पा सकते। अधिक क्या कहूं, तीक्ष्ण सूईके नोकसे जितनी भूमि बिद्ध हो सकती है, मेरे राज्यसे उतनी भूमि भी पाण्डवोंको नहीं दी जावेगी।

१२७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर श्रीकृष्ण क्रोध-पूरित नेत्रोंसे दुर्य्योधनकी ओर देखकर हंसते हुए यह वचन बोले। हे दुर्य्योधन! तुम धीरज धरो, तुम सेवकोंके सहित अवश्य ही वीरशय्या प्राप्त करोगे; शीघ्र ही तुम्हारी यह अभिलाषा सिद्ध होगी; क्योंकि महा भयङ्कर युद्ध व्यापार अवश्य ही उपस्थित होगा। रे मूर्ख! कहता है, कि "पाण्डवोंके विषयमें मैंने कोई अपराध नहीं किया है;" इस बातको सब ही राजा लोग अच्छी प्रकारसे मालूम करें। हे भारत! तुमने पाण्डवोंका महा ऐश्वर्य्य देखके जलकर शकुनिके सङ्ग दुष्ट विचार करके जुएका खेलरूपी कपट व्यवहार किया था; वह किसको विदित नहीं है! हे तात! सरल स्वभावसे युक्त श्रेष्ठ पाण्डव लोग जो इस कपटी शकुनिके साथ इस अन्याय कर्म्मकी उपासना करनेके निमित्त पूर्ण रीतिसे सहमत हुए थे; यह बात भी किस प्रकारसे सम्भव हो सकती है? हे महाबुद्धिमन्! जुएके खेलमें साधु पुरुषोंकी बुद्धिका नाश होता है; और दुष्ट

लोगोंमें सुहृदभेद तथा नानाप्रकारके विपदकी उत्पत्ति होती है। तुमने साधु पुरुषोंके सङ्ग विना परामर्श किये ही केवल पापबुद्धि और दुराचारी लोगोंकी कुमन्त्रणासे उस दुष्ट जुआ-रूपी घोर-व्यसनका सूत्रपात किया था। पाण्डवोंको प्राणसे बढ़कर प्रिय, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई, शीलसे युक्त द्रौपदीको तुमने महा सभामें बुलाके अनेक भांतिसे कटूक्ति और हंसी करके जैसा असह्य दुःख दिया था, इस पृथ्वीके बीचमें कौन पुरुष भाईके स्त्रीकी वैसी दुर्दशा करनेमें समर्थ होसकता है? और जब तेजस्वी कुन्तीपुत्र वनको चले थे, उस समय दुष्ट दुःशासनने उन लोगोंको जो कुछ वचन कहे थे, वे सब कौरवोंके बीचमें किसको विदित नहीं है? साधु पुरुष, उत्तम चरित्रवाले, धर्मात्मा, लोभ-रहित अपने आत्मीय बन्धु बान्धवोंके सङ्ग ऐसा अयोग्य और अनुचित व्यवहार कौन करता है? निटुर अनाचारी और नीच पुरुषोंको जैसा वचन कहना उचित है, वैसे ही वचन कर्ण दुःशासन और तुमने बार बार कहे थे। पाण्डव लोग जिस समय बालक थे, उसी समय वारणावत नगरमें तुमने उनको जलानेके निमित्त परम यत्न किया था, परन्तु प्रारब्धसे तुम्हारा वह यत्न सिद्ध नहीं हुआ। उस महा घोर कष्टसे बचकर उन लोगोंने एकचक्रा नगरीमें किसी ब्राह्मणके घरमें वेष बदलकर बहुत दिनों तक माताके सङ्ग वास किया था। और भी देखा,—तुमने विष और सर्प आदि सब प्रकारके उपायसे उन लोगोंके नाश करनेकी चेष्टा की थी; परन्तु किसी उपायसे भी कृतकार्य्य न होसके। इससे जब तुमने इस प्रकारसे नीच बुद्धिके वशमें होकर उन महात्माओंको पद पद पर बुराई की है, तब कैसे कहा जावे कि तुमने उन लोगोंके विषयमें कुछ भी अपराध नहीं किया है। अरे पापी! उन लोगोंके प्रार्थना करनेपर भी तू उनके पैतृक राज्यका अंश इस समयमें नहीं देता है, यह ठीक है; परन्तु जिस समयमें ऐश्वर्य्य भ्रष्ट होगा तथा तू मारा जायगा, उसी समयमें वह सब प्रदान करना पड़ेगा। आहा! क्या आश्चर्य्यका विषय है, कि तुम सदासे महा नीचता और मिथ्या व्यवहार तथा अत्यन्त निठुरताके सहित पाण्डवोंके सङ्ग अनेक बुरेकर्मोंका अनुष्ठान करके भी इस समयमें उसको उलटा सिद्ध करके निर्दोषी बना चाहते हो? हे राजन्! तुम्हारे माता पिता, भीष्म, द्रोणाचार्य्य और विदुर आदि सज्जन पुरुष लोग तुमको "शान्त होइए" यह वचन बार बार कहते हैं, तौ भी तुम शान्तिके स्थापित होनेमें सहमत नहीं होते हो। हे राजन्! सन्धि होनेसे तुम्हें और युधिष्ठिर दोनोंका परम कल्याण हो सकता है; परन्तु उसमें तुम्हारी रुचि नहीं होती है; इसमें तुम्हारी बुद्धिकी लघुताके अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? हे नरनाथ! तुम सुहृद लोगोंके वचन उल्लङ्घन करके किसी समयमें भी अपना कल्याण लाभ करनेमें समर्थ न हो सकोगे; इससे जिस कर्म्मके अनुष्ठान करनेके निमित्त तुम हठ करते हो, वह महा अधर्म्म और अयश देनेवाला है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकारसे कहते हुए जब श्रीकृष्णचन्द्रने अपना वक्तव्य समाप्त किया, तब क्रूरबुद्धि दुःशासन कौरवोंकी सभाके बीचमें क्रोधी दुर्य्योधनसे बोला, हे महाराज! यदि तुम अपनी इच्छासे, पाण्डवोंके सङ्गमें सन्धि न करोगे; तो कौरव लोग निश्चयही तुम्हें बांधकर पाण्डवोंका समर्पण करेंगे। दूसरेको क्या बात है? भीष्म, द्रोणाचार्य्य और तुम्हारे पिता महाराज धृतराष्ट्र—ये ही लोग कर्णको, तुम्हें और मुझको बांधके पाण्डवोंके हाथमें समर्पण करेंगे। भाईकी बात सुनकर माननीय लोगोंका अवमान करनेवाला, मर्य्यादासे रहित, लज्जाहीन; दुष्ट-बुद्धि दुर्य्योधनने

क्रोधसे भरकर प्रचण्ड सर्पकी भांति लम्बो सांस लेते हुए अपने आसनपरसे उठकर राजा धृतराष्ट्र, श्रीकृष्ण, भीष्म, द्रोणाचार्य्य, विदुर, महाराज बाल्हिक, कृपाचार्य्य और सोमदत्त आदि सब लोगोंका अनादर करके नीच पशुकी भांति सभासे प्रस्थान किया। राजा दुर्य्योधनको सभासे उठके चलते हुए देखकर सेवकोंके सहित उनके सब भाई और जितने राजा वहांपर बैठे थे, सब उनके पीछे पीछे चले। तब शान्तनुपुत्र भीष्म दुर्य्योधनको इस प्रकारसे क्रोधसे भरकर सहसा उठते और भाइयोंके सहित चलते देखकर श्रीकृष्णचन्द्रसे बोले, हे जनार्द्दन! जो पुरुष धर्म्म और अर्थको त्याग कर निज हठका ही अनुमोदन करता है, उसके शत्रुलोग शीघ्र ही उसे व्यसनमें फंसे हुए देखकर हंसी करते हैं। यह नीचबुद्धि वृथा राज्यका अभिमान करनेवाला दुष्टात्मा राजपुत्र दुर्य्योधन केवल क्रोध और लोभके वशमें होकर चलता है। इसके अनुगामी यह सम्पूर्ण क्षत्रिय वीर कालसे पके हुए फलके समान शीघ्र पतित होनेके योग्य बोध हो रहे हैं; क्योंकि ये लोग मोहमें पड़ कर मन्त्रियोंके सहित सब ही दुर्य्योधनके पीछे पीछे जा रहे हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा पराक्रमी, कमल-नेत्र, यदुकुलभूषण श्रीकृष्ण भीष्मके वचन सुनकर उनसे और द्रोणाचार्य्य आदि बूढ़े कौरवोंसे बोले, कि आप लोग जो ऐश्वर्य्यसे दूषित और मर्य्यादारहित दुर्य्योधनको शासन करके अच्छे मार्गमें नहीं लाते हैं, इससे आप लोगोंमें बहुत भारी दोष लग रहा है। हे शत्रुनाशन! हे पापरहित! उस विषयमें मैं यह कार्य्य उपयुक्त समझता हूं, इसका अनुष्ठान करनेसे मङ्गल हो सकता है; इससे आप लोग यह पूर्णरूपसे सुनिये। हे भरतसत्तम! मैं जिस बातका प्रस्ताव करूंगा, यदि वह आपके अनुकूल और मानने योग्य होवे- तो प्रत्यक्षमें कल्याण और हितकारक होगा। देखिये उग्रसेनका पुत्र दुराचारी कंस इन्द्रियोंके वशमें होकर पिताके जीवित रहते ही उस वृद्ध भोजराजका ऐश्वर्य्य हरण करके मृत्युके वशमें होगया था, उसकी उस नीचताको देखकर बन्धुबान्धवोंने उसे त्याग दिया और मैंने भी जातिके लोगोंके हितकी कामनासे महा युद्धमें उसका संहार किया था। फिर मैं और जातिके लोगोंने भोजराजके कुलको बढ़ानेवाले आहुकपुत्र उग्रसेनका अच्छी प्रकारसे सत्कार करके फिर उनको राज्यका स्वामी बनाया। हे भरतनन्दन महाराज धृतराष्ट्र! इसी प्रकारसे कुलकी रक्षा करनेके निमित्त एकमात्र कंसको त्यागनेसे यदुवंशी अन्धक और वृष्णि लोग सहमत होके परम सुखसे बढ़ रहे हैं। और भी देखिये, जब देवासुरके महा युद्धमें कालस्वरूप सब शस्त्र उठे, तब सम्पूर्ण लोकोंके नाश होनेकी सम्भावना थी; उस समय सब लोकोंके पितामह प्रजापति भगवान् ब्रह्माने कहा था; कि इस युद्धमें असुर, दैत्य और दानव सब हार जावेंगे, और आदित्य, वसु, रुद्र आदि देवता लोग विजयी होंगे; परन्तु देवता, असुर, गन्धर्व्व यक्ष, राक्षस, सर्प और मनुष्य आदि सब ही आपसमें लड़के नष्ट-प्राय हो जावेंगे। प्रजापति ब्रह्माने अपने मनमें ऐसा निश्चय करके धर्म्मको आज्ञा दी, कि इन सम्पूर्ण दैत्य दानवोंको बांधके वरुणके हाथमें समर्पण करो। ब्रह्माकी आज्ञा सुनके धर्म्मने समस्त दैत्य दानवोंको बांधके वरुणके हाथमें समर्पण किया, तब जलके स्वामी वरुणने उन लोगोंको धर्म्मके और अपने फांसेसे बांधकर यत्नपूर्व्वक समुद्रके बीचमें रोक रक्खा। उसी प्रकारसे आप लोग भी दुष्ट दुर्य्योधन, कर्ण, शकुनि और दुःशासनको बांधके पाण्डवोंके हाथमें समर्पण कीजिये। पण्डितोंने कहा है, यदि एक पुरुषके त्यागनेसे कुल भरकी रक्षा

होती हो, तो अवश्य ही उसको त्याग देना चाहिये ; सम्पूर्ण गांव भरकी रक्षाके निमित्त कुलको, जन-पदके वास्ते गांवको और अपनी आत्माकी रक्षाके निमित्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीको भी त्याग देना चाहिये। हे क्षत्रियश्रेष्ठ महाराज धृतराष्ट्र! आप दुर्य्योधनको शान्त करके पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि स्थापित करें ; आपके निमित्त जिसमें सब क्षत्रियोंका नाश न होने पावे।

१२८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा धृतराष्ट्र श्रीकृष्णचन्द्रकी बातोंको सुनकर शीघ्रतापूर्व्वक सब धर्मोंके जाननेवाले विदुरसे बोले, हे वत्स! तुम जलदी जाकर दीर्घ-दर्शिनी महा बुद्धिमती गान्धारीको इस स्थान पर बुला लाओ ; उसके सङ्ग मिलकर मैं नीचबुद्धि दुर्य्योधनसे कुछ विनती करूंगा ; वह भी यदि इस दुष्टको शान्त कर सके, तो भी हम लोग परम सुहृद श्रीकृष्णचन्द्रके वचनोंकी रक्षा कर सकेंगे, शान्तिके प्रसङ्गसे गान्धारीको नीच बुद्धि, दुष्टोंकी सहायतासे युक्त, लोभसे भरे हुए, दुष्ट पुत्रोंको अच्छे मार्गमें ले आना कुछ भी असम्भव नहीं है। प्रारब्धसे वह यदि दुर्य्योधनके किये हुए इस महा घोर व्यसनसे हम लोगोंको मुक्त कर सके, तो यह महा अनुष्ठान हम लोगोंके निमित्त सदाके लिये मङ्गलदायक होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। विदुर महाराज धृतराष्ट्रकी इन बातोंको सुनते ही शीघ्र दीर्घ-दर्शिनी गान्धारीको वहांपर बुला लाये।

अनन्तर राजा धृतराष्ट्रने उन्हें सम्बोधन करके कहा, हे गान्धारी! देखो यह शासनको लांघनेवाला तुम्हारा पापी पुत्र ऐश्वर्य्यके लोभमें पड़कर सब ऐश्वर्य्य तथा जीवनका भी विसर्जन करनेपर उपस्थित हुआ है। वह मर्य्यादासे रहित, मूढ़बुद्धि, पापी सुहृद लोगोंकी बातोंको न मानकर महा मूर्खकी भांति पाप कर्म्म करनेवाले पामरोंके सङ्ग सभासे उठके चला गया है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वह यशस्विनी राजपुत्री गान्धारी स्वामीका वचन सुनकर यथार्थ कल्याणकी इच्छासे कहने लगी। हे महाराज! उस राजमदसे मतवारे आतुर पुत्र-को शीघ्र यहांपर बुलाइये। धर्म्म अर्थके नाश करनेवाले मूर्ख लोग कभी राज्य नहीं पा सकते हैं ; तो भी उस विनय-रहित दुर्य्योधनने सब प्रकारसे राज्य प्राप्त किया है। हे महाराज धृतराष्ट्र! इस विषयमें आप ही अत्यन्त निन्दाके योग्य हैं; क्योंकि उसकी पापबुद्धि जानकर भी केवल पुत्रके प्रेमके वशमें होकर आप उसकी वृद्धिको उलटना चाहते हैं। हे राजन्! वह पाप बुद्धि दुर्य्योधन काम, क्रोध और मोहमें स्थित है ; इससे अब उसको बलपूर्व्वक शान्त करनेकी आपकी शक्ति नहीं है। नीच बुद्धि, दुष्ट मन्त्रियोंके कहेमें चलनेवाला अज्ञानी, पापी और लोभसे खिंचे हुए पुरुषको आपने जो राज्य प्रदान किया था, उसीका फल इस समय भोग रहे हो। हे राजेन्द्र! आत्मीय लोगोंके संग भेद होनेसे आप न जाने क्यों उपेक्षा कर रहे हैं, इसे मैं कुछ भी नहीं समझ सकती हूं। शत्रु लोग तुमको दुष्ट मित्रों तथा बन्धु-बान्धवोंसे हीन देखकर अवश्य ही हंसी करेंगे, इसमें किञ्चित मात्र भी सन्देह नहीं है। हे महा-राज! आत्मीय पुरुषोंके निकट साम तथा दानसे जब पार हो सकते हैं, तब कौन बुद्धि-मान् पुरुष उस स्थानमें दण्डका प्रयोग करता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, गान्धारीके वचन और धृतराष्ट्रकी आज्ञासे विदुर दुर्य्योधनको फिर सभामण्डपमें बुला लाये। दुर्य्योधन माताके वचन सुननेकी इच्छासे क्रोधमें भरे, लाल नेत्रसे युक्त, महा प्रचण्ड सर्पके समान

लम्बो सांस लेते जब फिर वहांपर उपस्थित हुए; तब गान्धारी इस कुमार्गगामी दुष्ट पुत्रकी यथा उचित निन्दा करती हुई यह कहने लगी। हे पुत्र दुर्य्योधन! एक बार ध्यान देकर मेरे इन हितकर वचनोंको सुनो। इसके माननेसे बन्धुबान्धवोंके सहित तुम परम सुखसे रहोगे। तुम्हारे पिता भरतसत्तम धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, विदुर आदि सुहृद लोगोंने तुम्हारे वास्ते जो कुछ वचन कहे हैं; उनका तुम निःसन्देह पालन करो। तुम्हारे शान्त होनेहीसे भीष्म, धृतराष्ट्र, मेरी तथा द्रोण आदि सुहृद पुरुषोंकी पूरी पूजा तथा सम्मान होगा। हे महा बुद्धिमन्! भरतर्षभ! केवल अपनी इच्छाके अनुसार ही कभी कोई पुरुष राज्यकी प्राप्ति और भोग नहीं कर सकता, इन्द्रियोंके वशमें रहनेवाला मूढ़बुद्धि पुरुष बहुत दिनतक राज भोग करनेमें कभी समर्थ नहीं होता। इन्द्रियोंको वशमें करनेवाला, तेजस्वी बुद्धिमान पुरुष राज्य करनेका यथार्थ पात्र होता है। काम और क्रोध ये दोनों ही पुरुषको सब अर्थोंसे सदा आकर्षित करते रहते हैं; इससे जो बुद्धिमान् राजा इन दोनो प्रबल शत्रुओंको जीत सकता है, वही इस सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतनेका अधिकारी होता है। लोकका स्वामी होकर प्रभुता करना बहुत बड़ा कार्य्य है। दुष्टबुद्धि पामर लोग सहजहीमें राज्य पदके पानेकी अभिलाषा करते है, यह ठीक है; परन्तु उसकी रक्षा करनी उनके सामर्थ्यसे बाहर है। जो पुरुष इस ऊंचे पदको पानेकी इच्छा करता है, उसे प्रथम सम्पूर्ण इन्द्रियोंको अपने वशमें करना उचित है। काठके मिलनेसे जैसे अग्नि बढ़ती है, वैसे ही इन्द्रियोंको विषयोंसे रोकनेसे पुरुषकी बुद्धि बढ़ती रहती है। चञ्चल और दुष्ट घोड़े जैसे मार्गमें मूर्ख सारथीको नष्ट करते हैं, वैसे ही बिना वशमें की हुई इन्द्रियां भी पुरुषका नाश कर देती हैं। जो पुरुष पहिले आत्माको न जीतकर सेवकोंके जीतनेकी इच्छा करता है, और सेवकोंको बिना वशमें किये ही शत्रुओंके जीतनेकी अभिलाषा करता है, वह अवश्य ही दूसरेके वशमें पड़कर धनसम्पत्तिसे भ्रष्ट होता है। आत्माका हित करनेवाला पुरुष जो कुछ आत्मासे स्वाभाविक दुष्ट भाव दीख पड़े उसके विरुद्ध आचरण करे, उसके अनन्तर सेवक और शत्रुओंके जीतनेकी इच्छा करे; ऐसा करनेसे उसका उद्योग किसी प्रकारसे भी निष्फल न होगा। राजलक्ष्मी— इन्द्रियोंके जीतनेवाले, सेवकोंको वशमें रखनेवाले, दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, सत्य, असत्यका विचार करनेवाले वीर पुरुषको अत्यन्त ही दृढ़ताके साथ सेवा करती है। छोटे छिद्रोंसे युक्त जालमें बंधी हुई दो मछलियोंको भांति पुरुषकी बुद्धिको काम और क्रोध भ्रष्ट कर देते हैं। इन्हीं दोनोंसे भयभीत होकर देवता लोग राग द्वेषसे रहित स्वर्ग धाममें जानेकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंके निमित्त स्वर्गका द्वार रोके रहते हैं। काम क्रोधके त्यागनेहीसे देवताओंकी वृद्धि हुई है। जो बुद्धिमान् राजा काम, क्रोध, लोभ, मोह और अभिमान आदि शत्रुओंको पूरी रीतिसे जीतता है, वही इस पृथ्वीका राज्य कर सकता है। धर्म्म अर्थको अभिलाषा और शत्रुओंके जीतनेकी इच्छा करनेवाला राजा पहिले अपनी इन्द्रियोंको वशमें करनेका यत्न करे। जो पुरुष काम क्रोधके वशमें होकर अपने आत्मीय पुरुषोंके सङ्ग कपट आचरण करता है, उसको बहुतसी सहायता नहीं मिल सकती। हे पुत्र! अत्यन्त बलवान् धर्म्मात्मा पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर तुम सम्पूर्ण पृथ्वीका भोग करोगे। हे पुत्र! शान्तनुपुत्र भीष्म और महात्मा द्रोणाचार्य्यने तुमसे जो कुछ वचन कहे हैं, वे सब ही सत्य हैं; कृष्ण और अर्ज्जुनको कोई भी युद्धमें

नहीं जीत सकता। इससे तुम अत्यन्त कठिन तथा कठोर कर्म्मोंके करनेवाले महात्मा कृष्णके शरणागत होओ; श्रीकृष्णके प्रसन्न होनेसे दोनों ओरका कल्याण होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। जो पुरुष बुद्धिमान, सब कार्य्योंको जाननेवाले, हित चाहनेवाले सुहृद पुरुषोंके शासनमें नहीं निवास करता, वह अवश्य ही शत्रुओंका आनन्द बढ़ाता है। हे तात! युद्ध करना किसी प्रकारसे भी उत्तम नहीं है; क्योंकि उसमें धर्म्म अर्थ कुछ भी नहीं सिद्ध हो सकता; तब उससे सुख मिलनेकी किस प्रकारसे सम्भावना हो सकती है? युद्धमें जो सदा जय हुआ करती है, यह भी कुछ निश्चय नहीं है; इससे तुम ऐसे निन्दनीय कार्य्यमें कभी अपने चित्तको मत लगाओ। हे शत्रुनाशन! जिसमें पाण्डवोंके संग भेद न हो जावे इसी भयसे भीत होकर तुम्हारे पिता महाराज धृतराष्ट्र, भीष्म और बाह्लिकने न्यायपूर्व्वक पाण्डवोंको राज्यका आधा भाग बांट दिया था; इस समय तुम उन वीरोंके प्रतापसे निष्कण्टक सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य भोग कर रहे हो; यह उसी राज्यके अंशके देनेका फल है। हे महा बुद्धिमन! इससे यदि तुम राज्यका आधा अंश भाग करने-की इच्छा करते हो, तो इस समय भी पाण्डवोंको आधा राज्य प्रदान करो। हे भारत! पृथ्वीके आधे ही राज्यसे सेवकोंके सहित तुम्हारा आनन्दसे जीवन बीतेगा; विशेष करके सुहृद पुरुषोंकी बात माननेसे तुम अत्यन्त यशके पात्र बनोगे। हे पुत्र! उन लक्ष्मी-वान, धृतिसे युक्त, बुद्धिमान् और इन्द्रियोंके जीतनेवाले पाण्डवोंके संगमें युद्ध करनेसे वे लोग तुमको इस बड़े भारी सुखसे भ्रष्ट कर सकेंगे। हे भरतर्षभ! इससे तुम पाण्डवोंको आधा राज्य देकर सुहृद पुरुषोंकी इच्छाके अनुसार यथा उचित राज्यका शासन करो। हे पुत्र! तुमने पाण्डवोंको तेरह वर्षतक राज्यसे पृथक् करके उन लोगोंको जो कुछ दुःख तथा क्लेश दिया है, वही बहुत हुआ है। हे महा-बुद्धिमन्! अब इस समय तुम काम क्रोध त्याग करके उन लोगोंके दुःख और क्लेशकी शान्ति करो। तुम कुन्तीपुत्रोंका धन हरलेनेकी अभिलाषा करते हो, यह ठीक है; परन्तु किसी समयमें भी तुम्हारी यह अभिलाषा पूरी न हो सकेगी; केवल तुम ही नहीं, महा क्रोधी सूर्यपुत्र कर्ण और तुम्हारा भाई दुःशासन, कोई भी उस अभिलाषाको पूर्ण करनेमें समर्थ न होगा; तब यह हो सकता है, कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण और भीम, अर्ज्जुन, धृष्टद्युम्न आदि वीरोंके अत्यन्त क्रोध करनेपर इस सम्पूर्ण पृथ्वीके प्रजा मात्रके जीवित रहनेकी सम्भावना न रहेगी। हे तात! इससे तुम क्रोधके वशमें होकर इस बढ़े हुए प्रतिष्ठित कुरुवंशका व्यर्थ नाश मत करो। जिसमें यह सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रजा तुम्हारे निमि-त्त नाश न होजावे, तुम वही उपाय करो। अरे मूढ़! तू जो यह समझता है, कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य आदि सब वीर अपनी पूरी शक्तिके अनुसार युद्ध करेंगे, सो वह तेरी आशा कभी पूर्ण न हो सकेगी; क्योंकि क्या तुम लोग और क्या पाण्डव लोग दोनों ओर इन लोगोंका समान ही सम्बन्ध है; विशेष करके धर्म्म ही सबसे प्रबल है। इससे यदि राज्यकी जीविका पानेसे ये लोग अपने प्राणको भी त्यागनेमें सम्मत होंगे, तो भी युधिष्ठिरके ऊपर कभी इन लोगोंको कोपदृष्टि न हो सकेगी। हे तात! लोभसे पुरुषको अर्थ तथा सम्पत्ति मिलती है, यह कहीं भी नहीं देख पड़ता। हे भरत-र्षभ! इससे लोभ करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है; तुम शान्ति अवलम्बन करो।

१२८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्योधन धर्म्म अर्थसे युक्त अपनी माताके उत्तम वचनोंको न मानकर फिर भी उस सभासे निकलकर नीच-बुद्धिसे युक्त दुष्ट पुरुषोंकी मण्डलीमें चले गये; वहांपर जाकर वह सुवलपुत्र शकुनिके सङ्ग सलाह करने लगे। अन्तमें दुर्योधन, कर्ण, शकुनि, और दुःशासन इन चार पुरुषोंका यह सङ्कल्प स्थिर हुआ; कि "यह कृष्ण राजा धृत-राष्ट्र और भीष्मके सङ्ग परामर्श करके हम लोगोंको बांधनेकी इच्छा करता है, परन्तु इन्द्रने जैसे बलिको बांध लिया था, उसी प्रकार-से हम लोग पहिले ही बलपूर्व्वक इस पुरुष-सिंह कृष्णको शीघ्र ही बांध लेंगे। कृष्णको बांधा हुआ सुनकर पाण्डवलोग दांत टूटे हुए सर्पकी भांति होजावेंगे; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, क्योंकि यह महाबाहु कृष्ण ही उन लोगोंके सब प्रकारसे सहाय और सकल कल्या-णके मूल हैं। सम्पूर्ण यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ इस कृष्णके पकड़े जानेपर पाण्डव तथा उनके सहाय सोमकवंशियोंका सब उद्योग नष्ट हो जावेगा। इससे राजा धृतराष्ट्र चाहे कितना ही मना करें; परन्तु हम लोग इसी अवसरमें कृष्णको यहांपर बांध रक्खेंगे; और फिर संशय रहित होकर शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करेंगे।

इङ्गितज्ञ महा बुद्धिमान् बलवान् सत्यकीने उन नीचबुद्धि पापियोंके इस पापमय विचारको शीघ्र ही जान लिया, और उसके निमित्त सभासे निकलकर हृदिकनन्दन कृतवर्म्माके सङ्ग परा-मर्श करके उनसे कहा, कि मैं जबतक कठिन कर्म्म करनवाले श्रीकृष्णको यह सब वृत्तान्त सुनाऊं, तबतक आप सेनाका व्यूह बनाकर दृढ़ सावधानताके सहित सभाके द्वारपर उप-स्थित रहें। ऐसा कहकर वह पर्व्वतकी कन्द-रामें सिंहके समान कौरवोंकी सभामें प्रविष्ट हुए, सभामें जा करके पहिले महात्मा कृष्ण और उसके अनन्तर राजा धृतराष्ट्र तथा विदु-रसे इन दुष्टबुद्धियोंका नीच विचार कह सुना-या। उन लोगोंके उस दुष्ट अभिप्रायको कह-कर हंसता हुआ कहने लगा, कि नीच बुद्धि दुष्ट और पापी लोग धर्म्म अर्थ और कामसे भी साधु पुरुषोंसे निन्दनीय इतके बन्धनरूपी जो महा नीच अनुष्ठान करनेकी अभिलाषा कर रहे हैं, वह किसी प्रकारसे भी सिद्ध न हो सकेगी। क्रोध और लोभके वशमें होकर ये सब इकट्ठे हुए मूढ़ पुरुष तथा पापी लोग काम, क्रोधमें फंसकर कलहरूपी महा भयङ्कर कार्य्य करनेमें तत्पर होंगे। उन लोगोंकी मूर्खताकी बात क्या कहूं, बालक जड़ बुद्धि तथा मतवारे लोग जैसे कपड़ेसे प्रचण्ड अग्निको ग्रहण करनेकी इच्छा करते हैं वैसे ही ये लोग पुण्डरीकाक्ष श्रीकृष्णचन्द्रको बलपूर्व्वक पकड़ने-की अभिलाषा करते हैं। कौरवोंकी सभामें सात्य-कीके यह वचन सुनकर दीर्घदर्शी महा बुद्धि-मान् विदुर राजा धृतराष्ट्रको सम्बोधन करके बोले, हे शत्रुनाशन महाराज! तुम्हारे पुत्र लोग अत्यन्त ही कालके वश होगये हैं। जब वे सब लोग मिलकर महाघोर अयश फैलाने-वाले असाध्य कर्म्म करनेके निमित्त उद्यत हो रहे हैं; और महाबाहु कृष्णको बलपूर्व्वक ग्रहण करनेके निमित्त अभिलाषा करते हैं; तब फिर उन लोगोंके कालके वश होनेमें अब क्या सन्देह है? जलती हुई अग्निके निकट पतङ्गकी भांति वे लोग महाबाहु अत्यन्त कठिन कार्य्य करनेवाले महा बलवान् कृष्णके सम्मुख होकर कबतक जीवित रह सकते हैं? यदि वे सब लोग मिलकर भी इनसे युद्ध करेंगे, तो-भी महात्मा कृष्ण हाथियोंको फाड़नेवाले क्रोधी सिंहके समान अकेले ही उन सबको यमपुरीमें पहुंचा सकते हैं; परन्तु पुरुषोत्तम कृष्ण धर्म्म-को त्यागकर ऐसे निन्दनीय कर्म्ममें कभी प्रवृत्त न होंगे।

विदुरका वचन समाप्त होनेपर महात्मा

श्रीकृष्ण राजा धृतराष्ट्रको ओर देखकर सुहृद लोगोंके बीचमें बोले, हे राजन्! यदि वे लोग क्रुद्ध होकर बलपूर्व्वक मुझे पकड़ सकें तो पकड़ें; अथवा मैं ही इन लोगोंको बांध लूंगा; इन दोनों बातोंके लिये आप आज्ञा दीजिये। वे लोग चाहे कितने ही क्रुद्ध क्यों न होवें, मैं अकेला ही उन सबको शासन करनेके निमित्त उत्साही हो सकता हूं; परन्तु कभी मैं ऐसे निन्दित कर्म्मका अनुष्ठान न करूंगा। तुम्हारे पुत्र लोग पाण्डवोंके अर्थके लाभमें पड़कर अपने अर्थसे भी विमुख हो जावेंगे; इसमें मेरी कौनसी हानि है? ये लोग यदि ऐसी इच्छा करते हैं, तब तो राजा युधिष्ठिर अनायास ही कृतकार्य्य हो सकते हैं। मैं आज ही इन लोगोंको और इनके अनुकूल सहाय लोगोंको पकड़के पाण्डवोंको समर्पण कर सकता हूं; ऐसा करना मेरे वास्ते कौनसा कठिन कार्य्य है। हे भरतनन्दन महाराज! तुम्हारे सम्मुख क्रोध और पापबुद्धिसे उत्पन्न हुए ऐसे निन्दित कर्म्ममें मैं कभी प्रवृत्त न होऊंगा। हे राजन्! यह दुर्योधन जैसा करनेको इच्छा करता है, वैसा ही होवे; उसमें मेरी कुछ भी आपत्ति नहीं है; बल्कि तुम्हारे सब पुत्रोंको उस विषयमें मैं आज्ञा देता हूं।

श्रीकृष्णके यह वचन सुनते ही राजा धृतराष्ट्रने विदुरसे कहा, तुम उस राज्यके लोभी पापी दुर्योधनको भाई, मित्र, और सेवकोंके सहित यहांपर ले आओ। यदि फिर भी उपदेशसे उसको अच्छे मार्गमें ला सकें तो उसकी कोशिश करनी चाहिये। धृतराष्ट्रकी आज्ञा सुने विदुरने राजाओंसे घिरे हुए दुर्योधनको, सभामें न जानेकी इच्छा करनेपर भी फिर सभा मण्डपमें ले आये। तब राजा धृतराष्ट्र कर्ण, दुःशासन और अनेक दुष्ट बुद्धि राजाओंके बीचमें घिरे हुए मूढ़ बुद्धि दुर्योधनकी निन्दा करते हुए कहने लगे। अरे पापी क्रूर बुद्धि! तू खोटे कर्म्मोंके करनेवाले सहायकोंके सङ्गमें मिलकर महा भयङ्कर पाप कर्म्मके करनेकी इच्छा करता है। मैंने सुना है, तू इन पाप बुद्धि पामरोंकी सहायतासे अत्यन्त तेजस्वी महाप्रतापी पुण्डरीकाक्ष श्रीकृष्णको पकड़नेकी अभिलाषा करता है, तेरे समान मूढ़ और कुलमें कलङ्क लगानेवाले नीच पुरुषके अतिरिक्त और कौन पुरुष ऐसे उपदेश देनेवाले निन्दित और असाध्य कर्म्मके करनेके निमित्त इच्छा कर सकता है? अरे मूर्ख! इन्द्रके सहित सब देवता लोग भी कृष्णको बलसे नहीं पकड़ सकते; चन्द्रमाको ग्रहण करनेकी इच्छा करनेवाले बालककी भांति तू उस कृष्णको पकड़नेकी अभिलाषा करता है? युद्धके समयमें देवता, गन्धर्व्व, दैत्य, राक्षस आदि जिसका प्रताप सहनेमें असमर्थ है; यह वही कृष्ण हैं, यह क्या तू नहीं जानता है? तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि हाथसे जैसे वायु तथा अग्निको ग्रहण करना कठिन है, तथा शिरपर पृथ्वीको उठा लेना जैसा असम्भव है, वैसे ही बलसे श्रीकृष्णचन्द्रको भी पकड़ना असम्भव और महा कठिन कार्य्य है।

राजा धृतराष्ट्रका वचन समाप्त होनेपर महा बुद्धिमान् विदुर भी क्रोधी दुर्योधनकी ओर देखकर बोले, हे भरतर्षभ! सोभ नगरके पुर-द्वारमें द्विविद नाम वानर अपने सब प्रकारके प्रयत्न और पराक्रमको प्रकाश करके भी जिस कृष्णको पकड़नेकी इच्छासे बहुतसी शिलाकी वर्षासे सब दिशाओंको पूरित करनेपर भी कृत कार्य्य न हो सका; उसी कृष्णको तुम बलपूर्व्वक पकड़नेकी इच्छा करते हो? निर्म्मोचन पुरीमें छः हजार असुर लोग जिसको पकड़नेके अभिलाषी होकर फांसीमें बांधनेके निमित्त सब प्रकारसे यत्न और पराक्रम करके भी नहीं पकड़ सके, उसी कृष्णको तुम बलपूर्व्वक बांधनेकी इच्छा करते हो? कामरूप

देशमें जानेपर जिसको पकड़नेकी इच्छासे महाबली नरकासुर बहुतसे दानवोंके सङ्ग अनेक यत्न और चेष्टा करके भी कृतकार्य्य न हुआ, उसी महा तेजस्वी कृष्णको तुम बलसे बांधनेकी इच्छा करते हो? अलौकिक बल और प्रभावसे युक्त जिस पुरुषोत्तम कृष्णने बालक अवस्थाहीमें पूतना राक्षसी और पक्षीरूपधारी दोनों असुरोंका नाश किया था, जिन्होंने गोकुलकी रक्षा करनेके निमित्त बांये हाथसे गोवर्द्धन पर्व्वत उठाया था, बुरे कार्य्य करनेवाले अरिष्ट, धेनुक, चाणूर, अश्वराज आदि महा बली असुरों और कंस, दन्तवक्र आदि प्रबल प्रतापी राजाओंको समररूपी यज्ञमें आहुति दी थी; जिस महा तेजस्वीने बाणासुर, वरुणदेव, जरासन्ध और अग्निदेवताको पराजित किया और कल्पवृक्षको हरकर साक्षात् देवताओंके स्वामी शचीपति इन्द्रको भी परास्त किया है; जो सबके पैदा करनेवाले और स्वयं किसीसे भी नहीं उत्पन्न हुए हैं, सब पौरुष तथा शक्तिके कारण होनेसे जो इच्छा मात्रसे सब कठिन कर्म्म अनायास ही पूर्ण कर सकते हैं, शेष शय्यापर सोते हुए जिन्होंने मधु कैटभ नाम दोनों असुरों और शरीर धारण करके वेदोंको चुराने वाले हयग्रीव असुरको मारा था; उस महा प्रतापी अमित तेजस्वी भगवान् कृष्णको तुम अभीतक भी नहीं जान सके? क्रुद्ध विषधारी सर्पके समान प्रचण्ड तेजसे भरे हुए, अग्निके तुल्य, निन्दा रहित कठिन कर्म्म करने वाले, महाबाहु कृष्णको यदि तुम लोग पकड़नेकी इच्छा करके उनके सम्मुखमें जाओगे, तो जलती हुई अग्निमें गिरनेवाले पतङ्गकी भांति दुष्ट मित्र और सेवकोंके सहित क्षण भर भी जीते न बच सकोगे।

१३० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, विदुरके ऐसा कहनेके अनन्तर शत्रुओंको नाश करनेवाले महा प्रतापी अमित तेजस्वी श्रीकृष्णचन्द्र दुर्य्योधनके ऊपर कटाक्ष करते हुए बोले, हे दुर्य्योधन! तुम मुझको अकेला समझ अपनी मूर्खतासे मुझे पकड़नेकी अभिलाषा करते हो, परन्तु तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि मैं अकेला नहीं हूं; आदित्य, रुद्र, वसु और ऋषि लोग सब ही मेरे सङ्ग हैं। ऐसा कहके शत्रुओंके नाश करनेवाले श्रीकृष्णचन्द्र ऊंचे स्वरसे हंसने लगे। उस अट्टहासके साथ ही अग्निके समान तेज धारण करनेवाले महात्मा कृष्णके शरीरसे विद्युत्के आकारके समान अंगुष्ठके प्रमाण सब देवता लोग बाहर होने लगे। मस्तक पर ब्रह्मा, छातीमें रुद्र, हृदयमें अग्नि, आदित्य, साध्य, वसु, अश्विनीकुमार, इन्द्रके सहित सब देवता, मरुतगण, विश्वेदेव तथा अनगिनत यक्ष, राक्षस और गन्धर्व्व उत्पन्न हुए; दोनों हाथोंसे बलदेव और अर्जुन उत्पन्न हुए, दहिने हाथसे धनुर्द्धारी अर्जुन और बायें हाथसे हलधारी बलराम प्रकट भये। पीछे राजा युधिष्ठिर, भीम, माद्रीपुत्र नकुल सहदेव और सम्मुखमें सब अन्धकवंशीय और प्रद्युम्न आदिक सम्पूर्ण यदुवंशीय लोग प्रचण्ड अस्त्र-शस्त्रको लेकर खड़े हुए। कृष्णके अपने दोनों हाथोंमें भी शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, लाङ्गल और नन्दक आदि सब प्रज्वलित अस्त्र प्रकट भये, उनके दोनों नेत्र, नासिकाके छिद्र और दोनों कान कान तथा रोम-कूपसे सूर्य्यकी किरणके समान महा प्रचण्ड धूएंके सहित अग्निके कण निकलने लगे। विराटमूर्त्ति महात्मा कृष्णका वह महा घोर और भयङ्कर रूपको देखकर केवल भीष्म, द्रोण, बुद्धिमान् विदुर, सञ्जय और तप करनेवाले ऋषियोंके अतिरिक्त और वहांपर जितने राजा खड़े थे, सबने अपनी आंख मूंद ली। भगवान् कृष्णने उस समयमें द्रोणाचार्य्य आदि महात्मा पुरुषोंको दिव्य दृष्टि प्रदान किया था, उसीसे उन लोगोंको शङ्का नहीं

हुई। हे भरतर्षभ! देवता लोग कौरवोंकी सभामें श्रीकृष्णका यह अद्भुत और आश्चर्य्य कार्य्य देखकर आकाशसे दुन्दुभी बजाकर उनके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे। सम्पूर्ण पृथ्वी और समुद्र उस समय डग मगाने लगा और समस्त राजा अत्यन्त ही भयभीत होगये। अनन्तर पुरुषसिंह शत्रुनाशन कृष्णने अपने उस अद्भुत और विचित्र विराट् रूपको समेटकर अपना पहिलेका रूप धारण कर लिया और ऋषियोंकी आज्ञा लेकर सात्यकी और कृतवर्म्माका हाथ धरके सभासे निकले। उस समय जब महा कोलाहल होने लगा, तब नारद आदि ऋषि लोग भी अन्तर्द्धान होकर अपने अपने स्थानपर चले गये। उन लोगोंका अकस्मात् अन्तर्द्धान होनाभी एक आश्चर्य्यका विषय हुआ। पुरुषसिंह कृष्णको सभासे जाते हुए देखकर जैसे देवता लोग इन्द्रके पीछे चलते हैं, उसी प्रकारसे कौरव लोग भी कृष्णके पीछे चले; परन्तु महा तेजस्वी श्रीकृष्णचन्द्र उन अनुगामी राजाओंकी ओर आंखसे भी न देखकर धूएंके सहित अग्निके समान सभासे निकलके चले। सभाके द्वारपर पहुंचके देखा, कि सुवर्णसे भूषित, किङ्किणी लगी हुई श्वेतवर्ण व्याघ्रके चमड़ेसे घिरा हुआ, सब सामग्रियोंसे शोभित, शैव्य सुग्रीव आदि चारों घोड़ोंसे युक्त, बादलके समान गम्भीर शब्द करनेवाले, श्वेतवर्ण, शीघ्रतासे गमन करनेवाले महारथको लेकर दारुक सारथी उपस्थित है। रथको वहां पर सजा हुआ देखकर श्रीकृष्ण उसी समय उस पर चढ़े और यदवंशियोंमें माननीय हृदिकनन्दन कृतवर्म्मा भी रथपर चढ़े। हे महाराज! शत्रुनाशन कृष्णको चलते हुए देखकर महाराज धृतराष्ट्र फिर उनसे बोले, हे शत्रुनाशन जनार्द्दन! पुत्रोंके ऊपर मेरी जितनी प्रभुता है, उसको तुमने प्रत्यक्ष ही देखा, कुछ भी तुमसे छिपा नहीं है, मेरी ऐसी अवस्था देखकर विशेष करके मैं कौरवोंकी हित-कामनामें जैसा यत्नवान हुआ हूं, उसे भी जानकर तुम किसी प्रकारसे मेरे ऊपर शङ्का न कर सकोगे। हे कृष्ण! पाण्डवोंके निमित्त मैं कुछ भी दुष्ट अभिलाषा नहीं करता हूं; मैंने सब प्रकारके यत्नसे शान्तिके निमित्त उत्सुक होकर दुर्य्योधनसे जो कुछ वचन कहा था, वह भी सब तुमको विदित है, और सम्पूर्ण कौरव तथा दूसरे राजा लोग भी इस बातको विशेष रूपसे जानते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महाबाहु श्रीकृष्ण राजा धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण कृपाचार्य्य, वाह्लिक और विदुरको सम्बोधन करके बोले; कि कौरवोंकी सभामें जो कुछ हुआ, नीचबुद्धि दुर्य्योधन अत्यन्त ही क्रोधित होकर महामूर्खकी भांति जिस प्रकारसे घोर कर्म्मके अनुष्ठान करनेमें उद्यत हुआ, और राजा धृतराष्ट्रने जिस प्रकारसे अपनेको प्रभुतासे रहित कहा है, वह सब आप लोगोंने प्रत्यक्ष देखा है; इस समय युधिष्ठिरके समीप जानेके निमित्त मैं सबसे बिदा होता हूं। इसीभांतिसे सबकी अनुमति लेकर पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्णके रथपर चढ़के चलनेपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, वाह्लिक और राजा धृतराष्ट्र अश्वत्थामा, विकर्ण और युयुत्सु आदि महाधनुर्द्धारी महारथ लोग उनके पीछे पीछे चलने लगे। भगवान् देवकीनन्दन कृष्णने उन सब लोगोंके सम्मुख ही उस रथपर चढ़के पिताकी बहिन अपनी फूफी कुन्ती देवीके दर्शनके निमित्त उसके मन्दिरमें गमन किया।

१३१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा कृष्ण अपनी फूफीके घरमें जाकर उसके दोनों चरणोंको वन्दन करके कौरवोंकी सभाका जो कुछ वृत्तान्त था, सो संक्षेप रूपसे वर्णन करके कहा;—मैंने और ऋषियोंने तथा भीष्म आदि

पुरुषोंने अनेक युक्तियोंसे युक्त ग्रहण करने योग्य उत्तम तथा हितकर अनेक वचन कहे, परन्तु मूढ़बुद्धि दुर्य्योधनने किसी प्रकारसे उन वचनोंको ग्रहण नहीं किया। इसीसे जाना जाता है, वह पापबुद्धि दुर्य्योधन तथा उसके वशमें रहनेवाले सब राजा लोग कालसे पके हुए फलकी भांति शीघ्र ही पतित होंगे। इससे मैं तुम्हारे समीपसे बिदा होकर शीघ्र ही पाण्डवोंके समीप जाऊंगा। हे महाबुद्धिमती तुम्हारे वचनके अनुसार उन लोगोंसे क्या क्या कहना होगा? सो तुम मुझसे कहो; तुम्हारे सन्देसेके वचनोंको सुननेकी मुझे बहुत ही इच्छा है।

कुन्ती बोली, हे पुत्र कृष्ण! तुम मेरे वचनके अनुसार धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरसे यह कहना "हे पुत्र! तुम्हारे धर्म्मकी बहुत ही हानि होरही है, शान्ति चाहनेवाले ब्राह्मणोंकी भांति तुम्हारी यह वेद-अध्यायन करनेवाली मन्दबुद्धि केवल धर्म्महीकी ओर झुकी रहती है; इससे इस समय भी सावधान होजाओ, आत्म धर्म्मका व्यर्थ ही नाश मत करो प्रजापति स्वयम्भू भगवान्ने धर्म्मको जिस जिस प्रकारके स्वरूपसे उत्पन्न किया है, तुम उसी स्वरूपसे उसको मानो! देखो उनकी भुजासे जीविका उपार्ज्जन करनेवाले क्षत्रियोंको उत्पत्ति भई है; क्षत्रियोंका धर्म्म यही है, कि क्रूर कर्म्म अर्थात् युद्ध आदिसे सदा प्रजाका पालन करनेमें तत्पर होवे। मैंने पण्डितोंके मुखसे जिस प्रकार सुना है, उसीके अनुसार इस विषयकी एक उपमा भी कहती हूं, उसे तुम सुनो। पहिले समयमें धनके स्वामी कुवेर राजर्षि मुचकुन्दके ऊपर प्रसन्न होकर उनको समस्त पृथ्वीके राज्य देनेके निमित्त उद्यत हुए थे; परन्तु उस बलवान् राजाने उसको नहीं ग्रहण किया। उन्होंने यह कहा था, कि "मेरी यह प्रतिज्ञा है, कि अपने बाहुबलसे उपार्ज्जन किये हुए राज्यका भोग करूंगा" यह सुनकर कुवेर बहुत ही विस्मित और प्रसन्न हुए थे। क्षत्रधर्म्ममें निष्ठावान् राजा मुचकुन्दने भी अपने बाहुबलसे समस्त पृथ्वीका राज्य उपार्ज्जन करके भोग किया था। हे तात! प्रजा अच्छी प्रकारसे रक्षित होकर जिस किसी धर्म्मका अनुष्ठान करती है; राजा उसके चौथे अंशका भागी होता है। राजा स्वयं धर्म्मका आचरण करने पर देवताका पद पानेके योग्य होता है; परन्तु यदि वह अधर्म्मका आचरण करे, तो अवश्य ही नरकमें जाता है। राजा पूर्ण रीतिसे यदि दण्ड करे, तो वह ब्राह्मण आदि चारो वर्णोंको वर्णोंके अनुसार अपने अपने धर्म्ममें लगाकर, बहुत ही धर्म्म सञ्चय करनेमें समर्थ कर सकता है। यहांतक कि जबतक दण्डदेनेवाला राजा सब प्रकारसे अपने धर्म्मके अनुसार नीतिशास्त्रके अनुकूल कार्य्य करता है, तबतक युगों तथा समयमें श्रेष्ठ सत्ययुग कहाता है। हे धर्म्मज्ञ! "काल राजाका कारण है, अथवा राजा कालका कारण है?" ऐसी शङ्का जिससे तुम्हारे मनमें उत्पन्न न होवे, इस निमित्त तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि राज ही कालका कारण है। धर्म्म और अधर्म्मके तारतम्यके अनुसार राजा ही सत्ययुग त्रेता, द्वापर, कलियुग, इस चारों युगोंके कारण हुआ करते हैं। जो राजा ऊपर कहे हुए सत्यकालके प्रवर्त्तक होते हैं, वे स्वर्ग भोग करते हैं। जो त्रेतायुगका प्रवर्त्तन करते हैं, उन्हें भी स्वर्गभोग मिलता है; परन्तु बहुत नहीं। द्वापर युगके प्रवर्त्तन करनेवाले राजा भी यथा उचितसे पुण्यफलका अंश पाते हैं; परन्तु जो राजा कलियुगको उत्पन्न करता है, उसको बहुत ही पाप भोगना पड़ता है। वह नीच कर्म्म करनेवाला राजा बहुत दिनतक नरकमें वास करता है। राजामें जो दोष रहते हैं, वे समस्त संसारमें फैल जाते हैं और जगत्के भी दोष राजाको लगते हैं। हे पुत्र! इससे

तुम पिता और पितामहके आचरणके अनुसार राजधर्म्मकी आलोचना करो। तुम जिस धर्म्ममें स्थित होनेकी अभिलाषा करते हो, वह कभी राजऋषियोंका धर्म्म नहीं कहा जा सकता है; क्योंकि करुणा रसकी पोषकता, दीन-भाव और शान्त-स्वभावसे स्थित रहनेपर प्रजा पालन रूपी फलके मिलनेकी सम्भावना नहीं रहती। तुम अपनी बुद्धिके अनुसार जैसा आचरण करते हो, उसके निमित्त पहिले राजा पाण्डु, मैं और पितामह आदि सब लोगोंने कभी तुम्हें आशीर्वाद नहीं दिया है। मैं सदा तुम्हारे यज्ञ, दान, तपस्या, वीरता, बुद्धि, सन्तान, माहात्म्य, बल और आयुकी प्रार्थना करती थी। शुभ आकांक्षा करनेवाले ब्राह्मण लोग भी पूर्ण रीतिसे सत्कार पानेपर तुम्हारी दीर्घ-आयु; धन और पुत्र आदिके निमित्त अभिलाषा करते हुए पितर-लोक और देव-लोकके उद्देश्यसे सदा स्वाहा और स्वधा प्रदान करते थे। पितर और देवता लोग भी सदासे क्षत्रिय पुत्रोंके निमित्त दान, अध्ययन, यज्ञ और प्रजापालनकी अभिलाषा करते हैं। हे तात! इससे यह दान आदि कर्म्म,—धर्म्म हों, चाहे अधर्म्म हों, क्षत्रिय-धर्म्मके अनुसार तुमने इन्हो सब धर्म्मोंके अनुष्ठान करनेके निमित्त जन्म ग्रहण किया है; परन्तु दान आदिका करना तो दूर रहा, तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न होके तथा सब विद्या जानकर भी इस समय जीविकाके दुःखसे पीड़ित होरहे हो। क्षुधासे आर्त्त हुए मनुष्य लोग जो बलवान् तथा दान देने योग्य राजाका आसरा करके सन्तुष्ट और प्रतिष्ठित होते हैं, इससे बढ़के दूसरा धर्म्म और कौनसा हो सकता है,—पृथ्वीमें राज्य प्राप्त करके धर्म्मात्मा पुरुषका यही कर्त्तव्य कर्म्म है, किसीको दान, किसीको बल, किसीको मीठे वचनोंसे अपने वशमें कर लेते हैं। ब्राह्मण भिक्षा वृत्तिका अवलम्बन करें, क्षत्रिय प्रजा-पालनमें तत्पर होवें, वैश्य धन उपार्ज्जन करें और शूद्र इन ब्राह्मण आदि तीनों वर्णोंकी सेवा करें; यही सनातन धर्म्म है। इससे भीख मांगना भी तुम्हारे वास्ते उत्तम नहीं है और कृषि आदि व्यवसायका करना भी तुम्हारे पक्षमें युक्त नहीं है। क्षत अर्थात दीन दुःखियोंके उद्धार करनेसे बाहुबल हो क्षत्रियोंका एक मात्र जीविकाका स्थान है। हे महाबाहो! इससे तुम साम, दान, भेद, दण्ड अथवा विनय आदि जिस किसी उपायसे हो सके,—अपने पिता पितामहके राज्यका अंश फिर ग्रहण करो। देखो, मित्रोंके आनन्द बढ़ानेवाले तुमको उत्पन्न करके भी मैं इस समय बन्धु-बान्धवोंसे रहित होकर पराये अन्नसे अपना जीवन धारण करती हूं; इससे बढ़के तुमको और अधिक दुःख क्या होगा? हे पुत्र! इससे तुम राजधर्म्मके अनुसार युद्ध करो। व्यर्थ कापुरुषताकी प्रकाश करके पूर्व्व पितृ-पितामहका नाम लोप मत करो। और तुम स्वयं भी भाइयोंके सहित पुण्यक्षीण होकर पापमय नरककी गति पानेके अधिकारी मत बनो।"

१३२ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, हे परन्तप! मैंने युधिष्ठिरसे कहनेके निमित्त तुमसे जो वचन कहे हैं, पण्डित लोग विदुला और उसके पुत्रके सम्वाद रूप इस नीचे कहे हुए पुराने इतिहासको इसके लिए उदाहरणमें कहते हैं। इसमेंसे जो कुछ मङ्गल-दायक वचन हो, अथवा इसकी अपेक्षा यदि कुछ अधिक श्रेष्ठ वचन सम्भव हो, तो तुम उसीको युधिष्ठिरके समीप कहना।

पहिले समयमें विदुला नामक एक दीर्घ-दर्शिनी यशस्विनी राजकन्या थी। वह क्षत्र-धर्म्ममें रत, विदुषी, कुछ क्रोधी और कुटिल स्वभावसे युक्त तथा बहुतसी राजसभाओंमें प्रसिद्ध थी। उसने अनेक लोगोंके बहुतसे वचन

सुने थे; और अनेक शास्त्र पढ़ चुकी थी। यह कर्कश राजकन्या अपने पुत्रको सिन्धुराजके द्वारा पराजित होकर उद्योग-रहित और उत्साह शून्य तथा मनमलिन, चित्तसे दुःखित देखकर यह कहके निन्दा किया करती थी; —"अरे शत्रुनन्दन! तू मेरा पुत्र नहीं है, मेरे गर्भसे तुम्हारा जन्म नहीं हुआ और तुम्हारे पिताने भी तुम्हें उत्पन्न नहीं किया; तू न जाने कुलमें कण्टकरूप होकर कहांसे आगया है? इसको मैं कुछ भी नहीं समझ सकती हूं। तुम्हारा मान, सभ्रम और पुरुषार्थ कुछ भी नहीं है, तुम्हारा रूप नपुंसककी भांति बोध होता है; तुम्हारी गिनती पुरुषोंमें नहीं हो सकती; तू सदाके वास्ते इकबारगी आशा रहित होगया है। अरे मूर्ख! यदि तू अपने कल्याणकी इच्छा करता है, तो अबसे भी पुरुषोंके योग्य पुरुषार्थका अवलम्बन कर। थोड़ेहीमें तृप्त होकर इस अपरिमेय आत्माका अपमान मत कर। निर्भय रह, उत्साह और उद्योगसे अपने चित्तकी शङ्काओंको दूर कर। अरे नपुंसक! पराजित, मान-रहित, बन्धु-बान्धवोंको शोक और शत्रुओंका आनन्द बढ़ानेवाला होकर इस प्रकारसे क्यों पड़ा है? शीघ्र उठ। हा! छोटे छोटे पात्र जैसे अल्प ही जलमें भर जाते हैं तथा चूहेकी अञ्जली थोड़े ही अन्नसे भर जाती है, वैसे ही कापुरुष लोग भी थोड़े ही वित्तसे सन्तुष्ट हो जाते हैं। अरे कुलको कलङ्क लगानेवाले! तू अगर महा विषधारी सर्पके दांतको उखाड़कर मर जावे तो उत्तम है। कुत्तेकी भांति इस नीच वृत्तिका अवलम्बन करके मरना उत्तम नहीं है। तू अपने जीनेकी आशा त्याग करके भी पराक्रमको प्रकाशित क्यों नहीं करता? आकाशमें उड़नेवाले बाज पक्षीकी भांति शत्रुओंके ऊपर क्यों नहीं गिरता? अथवा इधर उधर घूमकर मौनव्रत धारणकर शत्रुओंका छिद्र क्यों नहीं खोजता? अरे क्लीव प्रकृति वाले! तू वज्रसे मारे गये मृतककी भांति जड़रूपसे इस समय क्यों सो रहा है? शीघ्र उठ! शत्रुओंसे हारकर अब यह सोनेका समय नहीं है। दीनताका अवलम्बन करके लोकमें निन्दित न बन, अपने पुरुषार्थसे तू सब लोकोंमें विख्यात हो जा। साम दान आदि चारों उपायोंके अनुसार पण्डितोंने जो उत्तम और अधम व्यवस्था कही है, उसमेंसे तुम तेजस्वियोंके योग्य दण्डरूपी श्रेष्ठ उपायका अवलम्बन करके उत्तम श्रेणीके उपयुक्त बनो। अरे डरपोक-स्वभाववाले! अग्निसे युक्त सूखे काठके समान एक घड़ी भरके वास्ते भी क्यों नहीं जल उठता? व्यर्थ ही जीवनकी इच्छा करता हुआ, ज्वालासे रहित फूसकी अग्निके समान क्यों छिपा हुआ है? बहुत दिनतक ऐसी दशामें पड़े रहनेसे थोड़े समयतक भी उठके अपने तेजका दिखाना सौगुना उत्तम है। मेरा मत यही है, कि किसी राजाके घर अत्यन्त कठोर तथा बहुत कोमल स्वभाववाला पुत्र कभी उत्पन्न न होवे। युद्धविद्याके जाननेवाले वीर-पुरुष संग्रामभूमिमें शत्रुओंके सम्मुख जाकर वीर मनुष्योंके योग्य सम्पूर्ण उत्तम कर्म करके धर्मके समीप ऋणरहित होते हैं; किसी प्रकारसे अपनी आत्माको तुच्छ नहीं होने देते; इससे वह अपनी अभिलषित वस्तु पावें, अथवा न पावें; उससे कभी शोक नहीं करते; वरन् प्राणकी आशा त्याग करके अन्तिम कर्त्तव्य कार्य्यका आरम्भ करते हैं। हे पुत्र! इससे तू चाहे अपने बाहुबलको प्रकाशित कर, अथवा वीरोंके योग्य संग्रामभूमिमें मरकर स्वर्गको जा, धर्मका छोड़के व्यर्थ जीनेसे क्या प्रयोजन है? अरे क्लीव! तेरे अग्निहोत्र, तपस्या, सत्य, वेदका पढ़ना, अतिथियोंकी सेवा और बलि-वैश्वदेव, आदि सब कर्मोंका लोप हुआ और भोग तथा सुखका मूल इकबारगी नष्ट होगया। इससे ऐसी अवस्थामें जीवित रहन-

से क्या प्रयोजन है? यदि दुकवारगी अपनी पराजय होती हुई देखे, तो वीर-पुरुषका यही कर्त्तव्य कार्य्य है, कि शत्रुकी जङ्घा ग्रहण करके अपने साथ ही उसे भी लेकर मृत्युको प्राप्त होवे; दुकबारगी जड़ सहित उखड़ जाना बड़े दुःखका स्थान है; और उत्साह तथा उद्यमसे रहित होना तो किसी प्रकारसे भी उचित नहीं है। रे मूर्ख पुत्र! इससे जैसे उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए अच्छे घोड़े अपने पराक्रमको प्रकाशित करते हैं, वैसे ही तुम भी अपने तेज तथा पराक्रमको प्रकट करो, तुम्हारे निमित्त जो कुल इस समय डूबा चाहता है, तुम अपने पुरुषार्थसे उसके उद्धारके निमित्त तत्पर होकर यत्न करो। लोकमें जिसके किये हुए किसी अद्भुत और बड़े कार्य्यको कोई बड़ाई नहीं करता वह केवल लोकको संख्या ही बढ़ानेवाला कहाता है; वह स्त्री तथा पुरुष कुछ भी नहीं कहा जा सकता, उसकी गिनती केवल नपुंसकोंमें होती है। दान, तपस्या, सत्य, विद्या और धनके उपार्ज्जन करनेमें जिसका यश इस पृथ्वीमें नहीं विख्यात होता है, वह माताका मल मात्र ही कहा जाता है; उसको कभी पुत्र नहीं कह सकते। जो तेजस्वी पुरुष शास्त्रके ज्ञान, तपस्या, धन, पराक्रम तथा दूसरे पुरुषार्थोंसे सब लोगोंको जीतता है, वही यथार्थमें पुरुष कहा जाता है। अरे मूर्ख! कापालिक पुरुषोंकी भांति नपुंसकोंके योग्य, घृणित, निन्दित, अयश देनेवाली, तथा दुःख उत्पन्न करनेवाली भिक्षा वृत्तिको ग्रहण करनेकी इच्छा कभी नहीं करनी चाहिये। आहा! लोकमें निन्दाके पात्र, वस्त्राभूषणोंसे रहित जिस पुरुषको देखकर शत्रुओंके आनन्दकी वृद्धि होती है; ऐसे लोभी, दीन, हीन, थोड़ी शक्तिवाले, क्षुद्र पुरुषके बन्धुबान्धव कभी सुखी नहीं रह सकते। हा! अपने स्थानसे भ्रष्ट और राज्यसे अलग हुए तथा सब प्रकारके सुख और भोगोंसे रहित होकर हम लोगोंको क्या जीविकाके भारसे ही प्राणत्याग करना पड़ेगा? अरे सञ्जय! साधु पुरुषोंके समूहमें मैं ऐसे अयुक्त व्यवहार करनेवाले, वंशको नाश करनेवाले तथा कुलको कलङ्कित करनेवाले तुमको अपने गर्भमें पुत्ररूपसे धारण करके साक्षात् कलियुगी माता हुई हूं। मेरे समान और कोई तेजस्विनी रानी ऐसे क्रोध तथा उत्साह-रहित, बलहीन, शत्रु-नन्दन कुपुत्रको कभी गर्भमें धारण न करे। अरे भाग्य रहित! उद्यम रहित धूएंमें न छिपकर उत्साह रूपी अग्निसे प्रकाशित होकर पूर्ण रीतिसे शत्रुओं-पर आक्रमण करके उनका संहार क्यों नहीं करता? घड़ी भर अथवा क्षण भरके वास्ते भी शत्रुओंके मस्तकके ऊपर क्यों नहीं विराजमान होता है? क्रोध और क्षमा रहित होना-ही यथार्थमें पुरुषका कर्म्म है। जो पुरुष सदा क्षमासे युक्त और क्रोध-शून्य रहता है, वह न स्त्री है और न पुरुष ही है; वह एक प्रकारका नपुंसक कहा जाता है। सन्तोष, दया, उद्योग न करना और भय ये सब लक्ष्मीके विनाश करनेके कारण है; सन्तोषी पुरुष राज्य आदि बड़े फल कभी नहीं पा सकता। रे पुत्र! इससे तू इन सब ऊपर कहे हुए दोषोंको त्यागकर अपना हृदय लोहेकी भांति कठोर करके अपना निज राज्य तथा सम्पत्तिके ग्रहण करनेमें प्रवृत्त होजा। विचार करके देख तो सही, राज्य कार्य्य तथा प्रजाका पालन करना आदि बड़े भारी कार्य्योंके करनेमें समर्थ होनेहीसे मनुष्य पुरुष कहा जाता है; इससे जो पुरुष स्त्रियोंके समान घरमें बैठकर इस लोकमें जीता रहता है, उसका जीना व्यर्थ ही कहा जाता है। सिंहके-समान प्रबल प्रतापका विस्तार करनेवाले, ऊंचे चित्तवाले, शूरवीर राजाके मर जानेपर भी उसके शासन तथा अधिकारमें रहनेवाली

प्रजा सुख भोगती हुई हृष्ट-पुष्ट बनी रहती है। जो बुद्धिमान् राजा अपने प्रिय सुखको भी त्यागकर राजलक्ष्मीकी खोजमें प्रवृत्त होता है, वह शीघ्र ही सेवक तथा बन्धु-बान्धवोंका हर्ष और आनन्द बढ़ाता है।

पुत्र बोला, यदि तुम मुझे हो न देखोगी तो फिर तुम्हारे इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्य, भूषण, भोग, सुख और जीनेहीसे क्या प्रयोजन है?

माता बोली, मैं राज्य तथा भूषणके लोभसे ही जो तुमको उत्तेजित कर रही हूं; ऐसी बात नहीं है, परन्तु मेरी यही अभिलाषा है, कि आदर रहित नीच लोग जो लोक पाते हैं, हमारे शत्रु लोग वही लोक पावें, और आदरसे युक्त तेजस्वी पुरुष जिस लोकमें जाते हैं; हम लोगोंके बन्धु बान्धव तथा सुहृद लोग उसी लोकमें गमन करें। हे तात! सेवकोंसे रहित, पराये अन्नसे जीवन धारण कर, दीन, हीन और मलिनचित्त होकर कभी नपुंसकोंकी वृत्तिका अवलम्बन करना उचित नहीं है। सम्पूर्ण प्राणी जैसे वर्षा करनेवाले मेघके अनुजीवी हैं, तथा देवता लोग जैसे इन्द्रकी उपासना करते हैं, वैसे ही ब्राह्मण लोग तथा सुहृद-पुरुष तुम्हारे द्वारा अपनी जीविका पावें। हे सञ्जय! अच्छे प्रकारसे पके हुए फलोंसे युक्त वृक्षका जैसे पक्षी लोग आसरा करके जीवन धारण करते हैं; वैसे ही तैसे सब प्राणी लोग भाग्यवान् पुरुषका आसरा करके अपनी जीविका निर्व्वाह किया करते हैं, ऐसे ही भाग्यवान् पुरुषका जीवन सार्थक है। इन्द्रके बाहुबलसे बढ़े हुए देवताओंके समान जिस महावीर पुरुषके प्रचण्ड प्रतापके सहारेसे बन्धुबान्धवोंका सुख और ऐश्वर्य्य बढ़ता है, उसीका जीवन सार्थक है। जो भाग्यवान् पुरुष अपने बाहुबलके सहारे जीवनके समयको बिताता है, वह इस लोकमें कीर्त्तिमान् होकर अन्तमें कल्याणमयी परम गति पाता है।

१२३ अध्याय समाप्त।

विदुला बोली, हे पुत्र! यदि तुम ऐसी हीन अवस्थाके समयमें पुरुषार्थ छोड़ दोगे, तो शीघ्र ही अधम पुरुषोंसे सेवित नीच मार्गमें गमन करोगे; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। क्षत्रियकुलमें जन्म ग्रहण करके जो पुरुष इस प्रकार जीवनकी इच्छासे अपनी शक्तिके अनुसार पराक्रम तथा अपना बल प्रकट करके निज तेजको नहीं प्रकाशित करता; पण्डित लोग उसको चोरके समान समझते हैं। हा! रोगीके समीप औषधिकी भांति यथार्थ स्वार्थसे युक्त, युक्ति सम्मत, गुणोंसे भरे हुए, उत्तम वचन सब तुम्हारे ऊपर बल प्रकाश करनेमें असमर्थ हो रहे हैं। देखो सिन्धुराजकी सहायता करनेके निमित्त बहुतसे पुरुष हैं, यह ठीक है; परन्तु कोई भी उससे सन्तुष्ट नहीं है; सब ही उससे विरक्त हैं। अपनी निर्व्वलताके कारणसे विशेष करके निज जीविकाके उपार्ज्जन करनेके दुःखसे असमर्थ होकर वह लोग केवल स्वामीके व्यसनमें फंसनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त जो पुरुष स्पष्ट रूपसे उसके सङ्ग शत्रुता करते हैं, वह लोग तुम्हारे पुरुषार्थको देखकर तुम्हारे साथ हो उसके विरुद्ध युद्ध करनेमें प्रवृत्त होंगे। इससे तुम उन्हीं सब लोगोंके सङ्गमें मिलकर समयके अनुसार शत्रुके व्यसनमें फंसनेकी प्रतीक्षा करते हुए दुर्ग-रूपी पर्व्वतका आसरा ग्रहण करो। सिन्धुराज अजर अथवा अमर है, ऐसा तुम कभी भी अपने मनमें निश्चय न करना। हे पुत्र! तुम्हारा नाम सञ्जय है, परन्तु सञ्जयका कार्य्य मैं तुम्हारेमें कुछ भी नहीं देख सकती हूं, इसी कारणसे कहती हूं, कि अपने नामको व्यर्थ न करके उसकी

साथ कर्ताको पूर्ण करो; ऐसा करनेहोसे तुम मेरे पुत्र कहे जानेके योग्य बनोगे। तुम्हारो बालक अवस्थामें एक महा बुद्धिमान् ज्योतिषी ब्राह्मणने कहा था, कि "यह बालक पहिले अत्यन्त कष्टमें पड़कर अन्तमें बहुतसो राज-लक्ष्मोका भोगेगा।" उस ब्राह्मणका वचन स्मरण करके मैं तुम्हारे विजयको आशा करती हूं; और इसो कारणसे इतना हठ करके भी तुमको उत्तेजित कर रही हूं तथा बार बार इसो भांतिसे उत्तेजित करूंगी। क्योंकि तुम इस बातको खूब ही जानते हो, कि जो पुरुष स्वयं यथार्थ नीतिके अनुसार कार्य्य करता है, और दूसरे लोग भी जिसके कार्य्यकी सिद्ध होनेके निमित्त सहायता करते हैं; उसका मनोरथ अवश्य पूरा होजाता है। हे सञ्जय! "इस कार्य्यके करनेसे मेरे पूर्व्व सञ्चित विषयका चाहे नाश होवे, अथवा वृद्धि होवे, मैं कभी भी निवृत्त न होऊंगा।" इसी प्रकारसे दृढ़-सङ्कल्प करके तुम युद्धके निमित्त उद्योग करो, एक हो समयमें उसको समाप्त न करना। सम्बर मुनिने कहा है, जिस अवस्थामें "आज घरमें अन्न नहीं है, कल्ह क्या होगा, सदा ऐसी ही चिन्ता लगी रहती है, उससे बढ़के पापी पुरुष-को और दूसरी कौनसी दशा हो सकती है?" यहां तक कि, पति और पुत्रके वधसे जैसा दुःख होना सम्भव है, उससे भी बढ़के यह ऊपर कहे हुए दुःखको सम्बर मुनिने वर्णन किया है। इससे दरिद्रताको दुःख मृत्यु का एक नामान्तर मात्र हो है। देखो मैं उत्तम कुलमें उत्पन्न तथा स्वामीके आदरको पात्री और सबके कल्याणको करनेवाली थी। पहिले सुहृद लोग मुझको महामूल्यवान् माला और सब भूषणोंसे भूषित तथा नाना सुगन्ध और सुन्दर वस्त्रोंसे युक्त देखकर इस समय अत्यन्त दुःखमें पड़ी हुई देखेंगे। हे सञ्जय! तुम जिस समय मुझे और अपनी स्त्रोको दीन, हीन तथा अत्यन्त दुःखित देखोगे, उस समय तुमको जीवित रहनेकी इच्छा न रहेगी। दास-दासी, सेवक गुरु, ऋत्विक्, पुरोहित आदि सब कोई जीविकाके दुःखसे हम लोगोंको छोड़कर चले जावेंगे, इसको देखकर तुम्हारे जीनेसे क्या प्रयोजन रहेगा? तुम पहिले प्रशंसाके योग्य यशको प्रकट करनेवाले जिन सब कर्मोंका अनुष्ठान करते थे, यदि उनको अब मैं न देखूंगी, तो मेरे हृदयमें शान्ति किस प्रकारसे हो सकेगी? कोई ब्राह्मण जब मुझसे कुछ वस्तु मांगेगा, तब उससे मैं "नहीं है" यदि ऐसा वचन कहूंगी, तो मेरा हृदय एकबारगो टुकड़े टुकड़े जावेगा; क्योंकि पहिले मैं तथा मेरे स्वामीने ब्राह्मणोंके मांगनेपर कभी "नहीं है" यह वचन नहीं कहा है। सब लोग हमारी ही आशा करते थे और हम लोगोंने कभी किसीकी आशा नहीं की है; इससे यदि दूसरेके वशमें होकर जीविका निर्व्वाह करना पड़ेगा, तो मैं अवश्य ही शरीरको त्याग दूंगी। हे पुत्र! इससे अपार दुःख-सागरमें पड़ हुए हम लोगोंको पार कर-नेके वास्ते तुम ही एक मात्र अवलम्ब हो। नौका-रहित विपदरूपी समुद्रसे उबारनेके निमित्त तुम ही नौका स्वरूप हो। इससे यदि तुमको स्थान त्यागकर दूसरी जगह निवास करना पड़े, महा घोर क्लेश सहना पड़े, तो उसको भी तुम स्वीकार कर लो! अधिक क्या कहूंगी, हम लोगोंके मृतक समान शरीर-को तुम जीवित करो। यदि तुम अपने जीनेकी इच्छा त्याग दो, तो सब शत्रुओंसे युद्ध कर सकते हो; और यदि ऐसे ही क्लीव-वृत्तिका अवलम्बन किये हुए, दुःखयुक्त और उत्साह रहित होकर रहना पड़े, तो भी तुम शीघ्र ही इस पापमयी जीविकाको त्याग दो। जो पुरुष पराक्रमी होता है, वह एक ही शत्रुको मारकर पृथ्वीमें यश पाता है। देखो इन्द्र एक ही वृत्रा-सुरको मारकर कीर्त्तिमान् हुए और सब देव-

ताओंकी प्रभुता पाकर सदाके वास्ते सबके राजा हुए हैं। उत्साहसे युक्त वीर पुरुष लोग जब रणभूमिमें अपना नाम प्रकाशित करके हर्षके सहित शत्रुओंकी सेनाको छिन्न भिन्न करके अपने पराक्रमसे मुख्य मुख्य सेनापतियोंको मारते हैं; तब ही उनके दूसरे शत्रुलोग भी भय भीत होकर स्वयं उनके निकटमें अवनति स्वीकार कर लेते हैं। परन्तु जो पुरुष नपुसकताका अवलम्बन करता है, वह शत्रुओंके वशमें होकर युद्ध विद्याके जाननेवाले पराक्रमी शत्रुके सब मनोरथ पूर्ण करता है। उत्साह और साहससे युक्त उत्तम पुरुष चाहे राज्यका नाश होजावे अथवा प्राणहोका सङ्कट उपस्थित होवे; परन्तु शत्रुकी पानिपर विना उसे नाश किये कभी नहीं छोड़ते। हे सञ्जय! केवल पराक्रमको प्रकाश करनेहोसे स्वर्गका द्वार अथवा अमृतके समान राज्यपद मिलता है। इस बातको हृदयमें रखके जलते हुई अग्निके समान शत्रुओंके बीचमें प्रवेश करो। हे क्षत्रिय! रणभूमिमें शत्रुओंका नाश करके अपने धर्मको रक्षा करो। मैं जिसमें तुमको शत्रुओंके आनन्दका बढ़ानेवाला और अत्यन्त कातर न देखूं। हमारी ओरके पुरुष लोग शोक प्रकाश करते हुए तथा शत्रुओंकी ओरके लोग हर्षित होकर तुमको चारों ओरसे घेर रहे हैं; तुम अत्यन्त होनता अवलम्बन करके उनके बीचमें पड़े हो; यह देखकर मुझको रोना न पड़े। हे पुत्र! तुम पहिलेकी भांति हर्षयुक्त चित्तसे वीरोंके योग्य कार्य्य करके सो वीर-कन्याओंके बीचमें बड़ाई और आनन्दके पात्र बनो, उत्साह रहित और पराक्रमसे हीन होकर कभी सिन्धु देशकी कन्याओंके वशमें मत पड़ो। ऐसे रूप, गुणसे युक्त, सब विद्याओंसे भूषित, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ, जगत्‌में विख्यात, यशस्वी युवा पुरुष क बलकी भांति दूसरेकी आज्ञामें चलने और मरनेमें मेरे विचारसे कुछ भी भेद नहीं है। यदि मैं तुम्हें दूसरेके वशमें पड़े उसके पीछे गमन करते हुए देखूंगी, तो मेरे हृदयमें कैसे शान्ति हो सकेगी? दूसरेके आज्ञाकारी बने ऐसे पुरुष तुम्हारे इस वंशमें कभी नहीं उत्पन्न हुए हैं; हे पुत्र! इससे दूसरेका सेवक होकर तुमको कभी जीना उचित नहीं है। क्षत्रियोंका जो सदासे प्रसिद्ध सनातन धर्म्म है, वह मुझको भली भांति मालूम है। पहिले तथा पीछे पण्डितोंने उस विषयमें जो कुछ वचन कहे हैं, तथा प्रजापति ब्रह्माने क्षत्रियोंको जिस कार्य्यके निमित्त उत्पन्न किया है, उसको मैं खूब ही जानती हूं। पृथ्वीके बीच किसी प्रसिद्ध क्षत्रिय-वंशमें उत्पन्न होकर जो पुरुष सब धर्म्मोंकी यथार्थ वातोंको जानकर भी केवल अपनी प्राणरक्षाके निमित्त भयसे शत्रुओंके निकट अवनति स्वीकार करता है, वह पुरुष किसी प्रकारसे उत्तम नहीं कहा जा सकता। उद्यम ही पुरुषका पुरुषार्थ है, इससे सदा उद्योगी हो बनना चाहिये किसी समयमें अवनति स्वीकार करनी उचित नहीं है। बल्कि रणभूमिमें पराक्रम प्रकाशित करता हुआ मरकर स्वर्गको जावे; परन्तु किसीके समीपमें अपनी अवनति स्वीकार न करे। मनस्वी वीरपुरुष निर्भय होकर सब स्थानोंमें भ्रमण करे, केवल धर्म्मके अनुसार ब्राह्मणोंके निकट अपनी अवनति स्वीकार करे; इसके अतिरिक्त और सब वर्णोंको बलपूर्व्वक अपने वशमें करके उनके बुरे कर्मोंके छुड़ानेका यत्न करे; उससे यदि उसे बहुतसी सहायतासे युक्त अथवा एकबारगी सहायतासे रहित होना पड़े, तो भी वह अपने जीवनके समयतक इसी प्रकारके कर्म्म तथा अनुष्ठान करता रहे।

१३४ अध्याय समाप्त।

पत्र बोले, हे क्रोधयुक्त, करुणारहित, वीरताका अभिमान करनेवाली माता! मालूम होता है, कि अत्यन्त कठोर लोहेसे ब्रह्माने तुम्हारे इस कठिन-हृदयको बनाया है। हाय! क्षत्रिय-धर्म्म क्या ही विचित्र है, कि जिसके कारण तुम मुझको सामान्य पुरुषकी भांति समझकर युद्धके कराल-मुखमें फेंक रही हो। गर्भधारिणी माता होकर भी तुम सौतेली माताके समान ऐसे वचनरूपी वाणोंसे मेरे हृदयका छेद रही हो। तुमसे मैं यही एक बात पूछता हूं, कि यदि तुम मुझे ही न देखोगी; तो तुम्हारे इस समस्त पृथ्वीके राज्य भूषण, भोग, सुख, और जीनेसे क्या प्रयोजन सिद्ध होगा? ऐसे उत्तम प्यारे पुत्रको नाश होनेपर तुम जीके क्या करोगी?

माता बोली! बुद्धिमान् मनुष्योंके सम्पूर्ण कर्म्म ही धर्म्म और अर्थसे युक्त रहते हैं; मैं उसी धर्म्म और अर्थको ओर लक्ष्य करके तुमको युद्ध करनेको कहती हूं। देखो तुम्हें पराक्रम प्रकाशित करनेका यह मुख्य समय उपस्थित हुआ है, इससे यदि तुम इस उपस्थित समयमें अपने कर्त्तव्य कार्य्यका अनुष्ठान न करोगे, तो तुम लोकके बीचमें मान-रहित होकर मेरा अत्यन्त ही अहित कार्य्य करोगे। तुम्हारे धन सम्पत्ति, राज्य, यश और बड़ाईको कुछ भी सम्भावना नहीं रहेगी। तुमको अपयशसे ग्रस्त होता हुआ देखकर भी यदि मैं प्रीति पूर्वक उसके निवारण करनेके निमित्त कुछ वचन न कहूं, तो वह किसी प्रकारसे भी युक्ति युक्त तथा यथार्थ प्रीतिका कार्य्य नहीं हो सकता; ऐसे पुत्रस्नेहको पण्डित लोग सामर्थ्य रहित बिना कारणकी प्रीति और निरर्थक स्नेह कहते हैं। हे सञ्जय! इससे तुम मूर्ख लोगोंके मानने योग्य और बुद्धिमानोंमें निन्दित इस बुरे मार्गको त्याग दो। देखो इस पृथ्वीमें बहुत ही अविद्या प्रायः सब स्थानोंमें विराज रही है; यदि तुम इस अविद्याके हाथसे छूटकर सदाचारी बनोगे, तभी मेरा प्रिय कार्य्य सिद्ध होगा। धर्म्म अर्थ आदि गुणसे युक्त, देवता और मनुष्योंके कर्म्मके जाननेवाले साधु पुरुषोंके मानने योग्य बिना उत्तम कार्य्य किये तुम कभी मेरी प्रीतिके पात्र नहीं हो सकते। जो भलो प्रकारसे उत्तम कर्म्म और विद्याविनयसे युक्त पुत्र पौत्र आदिके ऊपर प्रीति करते हैं, उनकी प्रीतिको ही यथार्थ प्रीति कहते हैं। नहीं तो जो पुरुष उद्यम और बिनय-रहित नीचबुद्धि पुत्रके ऊपर प्रीति करते हैं; उनके वचनका फलही एकबारगी नष्ट हो जाता है। मनुष्योंके योग्य कर्त्तव्य कर्म्मका अनुष्ठान न करनेवाले और निन्दित तथा बुरे कर्म्मके करनेमें बहुत ही हठ करनेवाले अधम पुरुषोंको इस लोक तथा परलोकमें कहीं भी सुख नहीं मिल सकता। हे सञ्जय! तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि केवल युद्ध और जय करनेहीके निमित्त इस पृथ्वीमें क्षत्रियोंकी उत्पत्ति हुई है। क्षत्रिय पुरुष चाहे शत्रुओंको जीते अथवा रणभूमिमें मारा हो जावे; दोनो भांतिसे उसे इन्द्र लोक मिलता है। मित्रोंको वशमें करके क्षत्रिय पुरुष जैसे सुख और सम्पत्तिके अधिकारी होते हैं; वैसा सुख स्वर्गके इन्द्रभवनमें भी नहीं मिल सकता है। मनस्वी पुरुष शत्रुओंसे अनेक बार पराजित होकर क्रोधकी आगमें जलता हुआ अपने शत्रुओंको एकबारगी नाशकर देवे अथवा उनसे मरकर स्वर्ग लोकहीको जावे; इसके अतिरिक्त और किसी प्रकारसे उसके हृदयमें शान्ति नहीं हो सकती। इस संसारमें बुद्धिमान् पुरुष बहुत थोड़ी वस्तुमें प्रीति नहीं करते हैं; थोड़ी वस्तु जिसे प्यारी होती है वह अवश्य ही एक दिन उसके अनिष्टकी जड़ होजाती है। क्योंकि प्यारी वस्तुओंके अत्यन्त ही अभाव होजानेपर फिर पुरुषके कल्याणकी सम्भावना नहीं

रहती, बल्कि समुद्रमें लीन हुई गङ्गाकी भांति एकबारगी सब पदार्थोंका अभाव हो जाता है।

पुत्र बोला, हे माता ! इस प्रकारका अभिप्राय प्रगट करना तुमको उचित नहीं है। विशेष करके पुत्रके वास्ते ऐसी प्रवृत्ति करनी तुम्हें योग्य नहीं है। इस समय जड़ अथवा गंगीकी भांति शान्तभावसे रहकर केवल करुणा दिखाना ही तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है।

माता बोली, हे पुत्र ! तुम जैसा विचार करते हो, उससे तुम्हारे ऊपर मेरी अधिक प्रीति उत्पन्न होरही है। मेरे विषयमें जैसा वचन कहना उचित है, तुम वैसा ही कहते हो, और मैं भी उसके अनुसार तुमको करुणासे युक्त ही वचन कहती हूं। तुम्हारे हाथसे पहिले सम्पूर्ण सैन्धव-वीरोंको मारकर पीछे तुम्हारी अत्यन्त प्रशंसा करती रहूंगी। अधिक क्या कहूं, तुम्हारी जो सब प्रकारसे विजय होगी, उसको मैं प्रत्यक्ष रूपसे देख रही हूं।

पुत्र बोला, हमारे धन, बल, सहाय आदि कुछ भी वस्तु नहीं है ; तब फिर कैसे हमारी जीत हो सकती है ? तुम्हारी ऐसी दारुण अवस्थाको जानकर मैं खुद ही उन आशाको छोड़कर चुप बैठा हूं ; अत्यन्त कठिनतासे प्राप्त होने योग्य स्वर्गलाभके समान राज्यकी आशा भी मैंने छोड़ दी है। हे महा बुद्धिमती ! जिससे मैं कृतकार्य्य होसकूं, तुम यदि वैसा कुछ उपाय जानती हो, तो विशेष रूपसे कहो ; तुम्हारे उस वचनको मैं सम्पूर्ण रूपसे पालन करूंगा।

माता बोली, हे पुत्र ! मेरी जीत नहीं होगी, पहिले ही ऐसी चिन्ता करके अपनी आत्माको तुच्छ मत समझो। क्योंकि घटनाके अनुकूल बहुत समयका नष्ट हुआ अर्थ भी मिलता है, और प्राप्त धनका भी नाश हो जाता है। पूर्ण रीतिसे उपाय करनेपर अवश्य ही पुरुषको वृद्धि होती है, मर्ख्यतासे केवल क्रोधके वशमें ही होकर किसी कार्य्यका आरम्भ करना उचित नहीं है। हे तात ! सब प्रकारके कर्म्मों होसे फलकी सिद्धिके विषयमें उपस्थित अनित्यता देख पड़ती है। जो पुरुष फलकी अनित्यताको स्थिर करके भी कर्म्मके अनुष्ठानमें प्रवृत्त होता है ; उसके अभिलाषाकी सिद्धि भी होती है, और नहीं भी हो सकती। परन्तु विना निश्चय किये ही जो एकबारगी कार्य्यके अनुष्ठानमें प्रवृत्त नहीं होते, वह किसी समयमें कृतकार्य्य नहीं हो सकते। कार्य्यके करनेका उद्योग न करनेसे एकबारगी कार्य्यके फलका अभाव होता है, और कार्य्यमें प्रवृत्त रहनेसे कार्य्यके फल सिद्धि होने और न होने दोनोंहीकी सम्भावना होती है। हे राजपुत्र ! आरम्भ करनेके पहिले ही जो पुरुष सब कार्य्योंकी अनित्यताको स्थिर करके उदास नहीं करता, उसको वृद्धि और समृद्धि नहीं हो सकती। इससे "निश्चय ही कार्य्य सिद्ध होगा" ऐसा विचारकर उत्साहके सहित कार्य्यमें तत्पर होना और माङ्गलिक कार्य्योंके अनुष्ठानको करना ही उचित है। हे पुत्र ! बुद्धिमान् राजा लोग देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा तथा स्वस्त्ययन आदि माङ्गलिक कर्म्मोंका अनुष्ठान करके अपने अभीष्टके सिद्ध करनेवाले कर्म्मको आरम्भ करते हैं ; उससे अवश्य हो उनकी वृद्धि होती है। पूर्व्व दिशा जैसे भगवान् सूर्य्यको आलिङ्गन करती है, वैसेही लक्ष्मी देवी खुद ही उस पुरुषसिंहके वशमें हो जाती है। हे सञ्जय ! मैंने जो यह सब प्रमाण, उपाय और उत्साहसे युक्त वचन तुमसे कहे हैं, मैं तुमको उसीके योग्य देख रही हूं ; इससे तुम सब शङ्काओंको त्यागके अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। सब प्रकारसे यत्नपूर्व्वक अपने कार्य्यको सिद्ध करनेके निमित्त उत्साहपूर्व्वक यत्न करो। तुम्हारे शत्रुके ऊपर जो लोग क्रुद्ध हैं, जो लोभके वशमें हैं, जो लोग उससे दुःखित हैं, जिनका उसने अवमान किया है ; जो लोग गर्व्वमें भरे

हुए हैं; और जो उसके सङ्गमें युद्धकी इच्छा करते हैं;—तुम पूर्ण रीतिसे यत्नपूर्व्वक उन लोगोंको अपनी ओर मिला लो; उन लोगोंको पहिले वेतन देकर सन्तुष्ट करो और अपने कार्य्योंको साधन करनेके निमित्त शीघ्र ही उद्योग करो। इस प्रकारके कार्य्योंको करनेसे ही, जैसे वायु प्रबल बादलोंके समूहको छिन्न भिन्न कर देता है उसी प्रकारसे इन बहुतसे मनुष्योंको अपने वशमें करनेसे तुम अवश्य ही समर्थ हो जाओगे और वह लोग भी तुमको आदरके सहित प्रीतिपूर्व्वक अपना स्वामी तथा अग्रणी बनावेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। जब शत्रु जानता है, कि मेरा वैरी अपने प्राणकी आशा त्याग करके युद्धके निमित्त उपस्थित हुआ है; तब ही वह घरमें बास करने वाले सर्पकी भांति उससे डरता है। उसको अत्यन्त प्रबल जानकर यदि वह वशमें करनेकी कोशिश करेगा, तो अवश्य सामदानके प्रयोगसे अपने; अनुकूलमें करनेकी इच्छा करेगा, ऐसा होने-पर एक प्रकारसे उसको वशमें करना सिद्ध हो जावेगा। क्योंकि सन्धिको स्थापित करके स्थान तथा राज्यको पानेसे कभी धनकी भी वृद्धि होगी, पुरुषके धनवान् होनेसे मित्र लोग उसे मानते तथा उसका आसरा ग्रहण करते हैं; परन्तु यदि वह दैव-संयोगसे धन तथा सम्पत्तिसे भ्रष्ट हो जावे, तो वह मित्र लोग और भाई बन्धु उसको छोड़कर चले जाते हैं; केवल छोड़के ही नहीं जाते, वल्कि उससे घृणा करते तथा उसकी निन्दा भी करनेमें सङ्कोच नहीं करते। जो पुरुष शत्रुको सहायक बना-कर उसका विश्वास करता है; उसको जो किसी समयमें राज्य मिल सकेगा, यह केवल सम्भावना मात्र ही होती है? परन्तु यथार्थमें उसकी वह आशा कभी सफल नहीं हो सकती।

१३५ अध्याय समाप्त।

माता बोली, हे सञ्जय! राजाके विषयमें चाहे कैसी ही आपद क्यों न उपस्थित होवे, उससे डरके व्याकुल होना कभी उचित नहीं है, यदि मनमें कोई शङ्का भी उत्पन्न होजावे, तो बाहर उस विषयको कभी भी प्रकाशित न करना चाहिये। क्योंकि राजाको शङ्कित देख-कर राज्य, बल, सेवक आदि सब ही भयसे व्याकुल होकर उत्साह-रहित हो जाते हैं। ऐसी अवस्थाके आने पर कोई कोई स्वामीको छोड़ देते हैं, कोई शत्रुके आसरेको अवलम्बन करते हैं, और जो सब पुरुष पहिले मानरहित हो गये थे, वह अवसर पाकर अपने स्वामीकी विरुद्धता करने पर उपस्थित हो जाते हैं; इसके अतिरिक्त जो लोग अत्यन्तही सुहृद हैं, वही लोग स्वामीकी भक्तिके अनुसार उसकी परतन्त्रताको स्वीकार करके उस समयमें भी सेवा करते हैं। स्वामीके कल्याणको सिद्ध कर-नेकी अभिलाषा रहते भी गऊके पैरमें ही बंधे हुए बछड़ेकी भांति उन लोगोंको उत्साह और चेष्टासे रहित होना पड़ता है। भाई बन्धुको पतित देखकर जैसे बन्धु बान्धव लोग दुःख और शोक प्रकट करते हैं, वैसे ही विश्वास पात्र सुहृद इष्टमित्र भी स्वामीको बुरी अवस्थामें पड़ा हुआ देखकर शोक प्रकाशित करते हैं। इससे स्वामीको व्यसनमें पड़े हुए देखकर जो लोग तनमनसे उसके राज्यकी रक्षा चाहते हैं, वही लोग यथार्थमें मित्र हैं, सबके पहिले उन्हीं लोगोंको पूजा करनी उचित है। हे पुत्र! ऐसे सुहृद पुरुषोंको तुम कभी भी भयसे व्याकुल मत करना। तुमको शंकित देख कर वह लोग तुम्हें त्याग न देवें। तुम्हारे प्रभाव पराक्रम और बुद्धिके जाननेकी अभिलाषासे मैंने जो यह सब वचन कहे हैं, वह तुम्हारी आशा, उत्साह और तेजको बढ़ानेके निमित्त ही कहा गया है। यदि यह यथार्थ रूपसे तुम्हें उत्तम जंचे और मेरी बातोंमें प्रीति तथा

विश्वास होवे, तो धीरताको अवलम्बन करके तुम अपने विजयके निमित्त उद्योग करो। हे सञ्जय! हम लोगोंका एक बहुत बड़ा धनका स्थान है वह तुमको नहीं मालूम है, मुझे छोड़के और कोई भी उस खजानेके स्थानको नहीं जानता है; उस स्थानमें जो बहुतसा धन है, वह सम्पूर्ण तुमको देती हूं। हे वीर! इसके अतिरिक्त तुम्हारे कई सौ इष्ट मित्र तथा सुहृद लोग भी विद्यमान हैं; वह सब ही तुम्हारे सुख दुःखके साथी और युद्धमें कभी भी पीछे न हटनेवाले हैं। हे शत्रु-नाशन! कोई कल्याणकी चाहनेवाला पुरुष बल पूर्व्वक यदि किसी कार्य्यको करनेका अनुष्ठान करे तो ऐसे सहाय लोग ही उसके यथार्थ मन्त्री बन कर सब कार्य्य करते हैं।

सञ्जय स्वभावसे ही थोड़ी बुद्धिसे युक्त था, परन्तु अपनी माताके ऐसे उत्तम पद पदार्थसे युक्त, सुन्दर और मनोहर वचनोंको सुनते ही उसी समयमें उसका भय और शङ्का दूर होगई तब वह साहसके ऊपर भरोसा करके बोला हे माता! भावी कल्याणको देखनेवाली तुम जब मुझे उत्तम शिक्षा दे रही हो; तब मुझ-को कोई कार्य्य भी कठिन नहीं है। मैं जलमें डूबे हुएके समान या तो पैटक राज्यका उद्धार करूंगा अथवा रणभूमिमें प्राणको त्यागकर स्वर्ग लोकमें जाऊंगा। तुम्हारे उपदेशके वचनोंको सुननेके समय मैं प्रायः मौन रूपसे सुन रहा था; केवल बीच बीचमें कुछ थोड़ा सा जवाब दिया था; उसका कारण यही था कि तुम्हारे दूसरे उपदेशके वचनोंको भी सुनूंगा। अत्यन्त दुर्लभ अमृतके पानसे जैसे तृप्त नहीं होती; वैसे ही तुम्हारे अमृत रूपी वचनोंके सुननेसे मेरी इच्छा पूर्ण नहीं होती थी, इससे मैंने चुपचाप तुम्हारे वचनोंको सुना है; इस समयमें शत्रुओंके नाश और अपने विजयके निमित्त उद्योग करता हूं।

कुन्ती बोली, विदुलाके ऐसे कठोर वचन रूपी बाणोंसे विद्ध और प्रसिद्ध उत्तम घोड़ेकी भांति उत्तेजित होकर माताकी आज्ञाके अनुसार सञ्जयने सब कार्य्यों को शीघ्र ही पूर्ण किया था। कोई राजा यदि शत्रुओंसे पीड़ित और उत्साह शून्य होवे, तो शत्रुओंके नाश करनेवाले, तेजको बढ़ानेवाले इस उत्तम वृत्तान्तको उसे अवश्य सुनाना उचित है। विजय चाहनेवाले पुरुषको जय रूपी इस कथाको अवश्य सुनना चाहिये। जो पुरुष एक बार भी इस कथाको चित्त लगाके सुनता है, वह शीघ्र ही सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतने और शत्रुओंके नाश करनेमें समर्थ होता है। गर्भिणी स्त्री वीर-पुत्रको उत्पन्न करनेकी इच्छासे इस कथाको बार बार सुननेसे अवश्य ही शूरवीर पुत्र उत्पन्न करती हैं। जो कोई क्षत्रिय-नारी यह कथा चित्त लगाके सुनती है, वह अवश्य ही विद्यावीर, दानवीर, तपस्या वीर, दिव्य शोभासे प्रकाशित, साधु पुरुषोंमें गिनने योग्य, महातेजस्वी, महा-बली, भाग्यवान्, महारथ, सबको जीतनेवाले, अपराजित, दुष्टोंका शासन करनेवाले, धर्म्मात्मा-ओंको रक्षा करनवाले, सत्य-पराक्रमी वीर, पुत्रकी माता हो सकती है; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१३६ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, हे कृष्ण! तुम मेरी ओरसे अर्जु-नको कहना कि हे पुत्र! तुमको उत्पन्न कर-के जिस समय मैं स्त्रियोंके बीचमें घिरो आश्रम-के निकट बैठी थी, उसी समय आकाशसे यह मनोहर देववाणी हुई थी, हे कुन्ती! तुम्हारा यह पुत्र साक्षात् इन्द्रके समान होगा; इसका यश स्वर्गतक फैलेगा। भीमसेनकी सहायतासे यह सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर लोकमें प्रसिद्ध होगा। श्रीकृष्णकी सहायतासे संग्राम भूमिमें उपस्थित हुए सम्पूर्ण कौरवोंको जीतकर हरण

किए हुए अपने पैत्रक राज्यका अंश फिर प्राप्त करेगा; और भाइयोंके सङ्ग मिलकर तीन महायज्ञ पूर्ण करेगा"। हे कृष्ण! वह सत्यसाची अर्ज्जुन जैसा सच पराक्रमी और तेजसे युक्त है, उसे तुम विशेष रूपसे जानते हो; इससे देववाणी जो हुई है, वह जिससे सिद्ध होवे, वही करना। हे कृष्ण! यदि धर्म रहेगा, तो अवश्य ये सब वचन सत्य होंगे, तुम ही सब प्रकारके यत्नोंसे उसको पूर्ण करोगे। इससे उस आकाशवाणीमें जो वचन सुने गये हैं, मैं किसी प्रकारसे भी उसके ऊपर दोष नहीं दे सकती हूं। भगवान् धर्मको सब प्रकारसे नमस्कार है, धर्म ही सम्पूर्ण प्रजाओंको धारण करता है। हे कृष्ण! अर्ज्जुनसे ऐसा कहकर सदा उद्यम करनेवाले उद्योगी भीमसेनसे भी यह वचन कहना; "क्षत्रियोंकी नारी जिस दिनके वास्ते पुत्रको उत्पन्न करती है, उसके योग्य समय यही अब उपस्थित हुआ है। पुरुषश्रेष्ठ वीर लोग कभी वैरीको पाकर चुपचाप बैठे नहीं रहते हैं।" हे कृष्ण! भीमकी बुद्धि तुम्हें सदासे विदित है; वह शत्रुनाश भीमसेन जबतक शत्रुओंका नाश नहीं कर लेते, तबतक शान्त भी नहीं होते। हे कृष्ण! महात्मा पाण्डुराजकी पुत्रवधू (पतोहू), सब कार्य्योंको विशेष रूपसे जाननेवाली, यशस्विनी, कल्याणी द्रौपदीसे भी तुम मेरी ओरसे यह वचन कहना कि हे महाभागे! हे यशस्विनि! हे उत्तमकुलमें उत्पन्न हुई मनस्विनि! हमारे सब पुत्रोंके ऊपर तुमने जो साध्वी स्त्रीके अनुसार यथार्थ आचरण किये हैं, वह तुम्हारे योग्य ही है।

हे पुरुषोत्तम कृष्ण! इसके अनन्तर क्षत्रियोंके धर्ममें सदा रत रहनेवाले दोनों माद्रीपुत्रोंसे कहना "हे पुत्र! तुम लोग प्राणकी आशा त्यागकर भी अपने पराक्रमसे उपार्जित किये हुए भोग और सुखकी अभिलाषा करो, क्योंकि अपने पुरुषार्थसे उत्पन्न हुआ धन ही क्षत्रिय पुरुषोंको प्यारा होता है। देखो तुम लोग सब धर्मोंके चलाने तथा जाननेवाले होकर भी तुम्हारे सम्मुखमें जो द्रौपदीको कठोर वचन सुनना पड़ा था, उसको कौन क्षत्रिय पुरुष सह सकता है? हे कृष्ण! पुत्रोंके राज्य जाने, जूएमें हारने और वनवास करनेसे भी मुझे उतना दुःख नहीं है, जितना कि प्राणसे भी बढ़के पतियोंकी प्यारी सुन्दरी द्रौपदीके सभामें रोती हुई-दुष्टोंके कुटिल तथा व्यङ्ग वचन सुननेसे; मुझको यही एक हृदयको विदीर्ण करनेवाला महा कठिन दुःख है। अहो! क्षत्रिय धर्ममें सदा रत रहने वाली, स्त्री धर्मसे युक्त, सुन्दरी द्रौपदी अत्यन्त श्रेष्ठ नाथवती होकर भी उस समयमें अनाथा हुई थी! हे कृष्ण! सब धनुर्द्धारियोंमें श्रेष्ठ पुरुषसिंह अर्ज्जुनसे यह वचन कहना, कि वह द्रौपदीहीके बताये हुए मार्गसे चलें। भीम अर्ज्जुन अत्यन्त क्रुद्ध होनेपर मानो दो यमकी मूर्त्ति धारण करके देवताओंको भी नष्ट कर सकते हैं; यह तुमको भली भांति मालूम है। उन लोगोंके ऐसे पराक्रमी होनेपर भी जो उनकी प्यारी स्त्री द्रौपदी सभामें बुलाई गई थी, इससे बढ़के और अपमानका विषय दूसरा क्या होगा? हे जनार्द्दन! कौरव वीरोंके बीचमें भीमसेनको भी जो दुःशासनने कठोर वचन कहा था, उसको भी तुम फिर स्मरण करा देना। मेरी ओरसे पुत्र कलत्रके सहित पाण्डवोंकी कुशल वार्त्ता पूछना। इस समय तुम सब विघ्नोंसे रहित होकर शुभ मार्गसे प्रस्थान करो और वहां पहुंचकर मेरे पुत्रोंका प्रतिपालन करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्र कुन्तीदेवीको प्रणाम और प्रदक्षिणा करके उनके मन्दिरसे बाहर हुए और भीष्म आदि कौरवश्रेष्ठ सब पुरुषोंको वहींपर विदा करके केवल कर्णको अपने रथपर चढ़ाकर

सात्यकीके सहित वहांसे चले। श्रीकृष्णके चले जानेपर सब कौरव लाग निर्ज्जन स्थानमें इकट्ठे होकर उनके परम अद्भुत महा आश्चर्य्यसे युक्त वृत्तान्तको आलोचना करने लगे; और सबने मिलकर यह अभिप्राय प्रकट किया "यह सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल मोहसे युक्त होकर मृत्युके वशमें हुआ है। दुर्य्योधनके मूर्खतारूपी दोषसे अवश्य ही यह सम्पूर्ण राष्ट्र तथा प्रजा संहार दशामें उपस्थित होगी।"

इधर सम्पूर्ण यदुवंशियोंके हर्षको बढ़ानेवाले पुरुषोत्तम कृष्ण नगरसे निकलनेके अनन्तर कर्णसे बहुत देर तक विचार करके अनन्तर अत्यन्त शीघ्रताके सहित अपने रथके घोड़ोंको चलाया। मन और वायुके समान शीघ्र चलनेवाले वे घोड़े दारुक सारथीके हांकनेपर ऐसे चले, कि जैसे आकाश मार्गसे गमन कर रहे हैं, और अत्यन्त शीघ्रतासे गमन करनेवाले बाज पक्षीकी भांति अनेक मार्ग और नगरोंको लांघकर विराट (उपप्लव) नगरमें आकर उपस्थित हुए।

१३७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुन्ती देवीने कृष्णसे जो सब वचन कहे थे, महारथ द्रोणाचार्य्य और भीष्म उन सब बातोंको सुनकर शासनका उल्लङ्घन करनेवाले दुर्य्योधनसे बोले कि हे पुरुषसिंह! कृष्णसे कुन्तीने जिन सब धर्म्म और अर्थसे युक्त वचनोंको कहा, उसको तुमने सुना है? श्रीकृष्णके प्रीतिके पात्र उसके पुत्र लाग अवश्य ही कुन्तीके उपदेशरूपी वचनोंका पालन करेंगे। हे कौरव! पहिले वे लोग धर्म्मके बन्धनमें बंधकर बहुत दुःख और क्लेश पा चुके हैं, इस समय बिना राज्य लिये कभी शान्त न होवेंगे सभाके बीच तुमने द्रौपदीको जो अत्यन्त दुःख दिया था, उन्होंने धर्म्म भयसे डर कर ही तुम्हारी वह दुष्टता सही थी, परन्तु इस समय वह धर्म्मका भय नहीं है; इस समय सब शस्त्रोंके जाननेवाले अर्ज्जुन-दृढ़सङ्कल्पकी करनेवाले भीमसेन, गाण्डीव धनुष, दोनों अक्षय तूणीर, कपिध्वजासे युक्त रथ, महा पराक्रमी नकुल सहदेव और महा पराक्रमी श्रीकृष्णकी सहायता पाकर राजा युधिष्ठिर अब किसी प्रकारसे भी बिना राज्य लिये शान्त न रह सकेंगे। हे महाबाहो! इसके पहिले वीरोंमें श्रेष्ठ बुद्धिमान् अर्ज्जुनने जो अकेले ही हम लोगोंको युद्धमें जीता था, उन सब वृत्तान्तोंको तुम जानते ही हो। इसके अतिरिक्त निवातकवच नामक महा पराक्रमी दानव लोग उस रुद्रास्त्रके धारण करनेवाले कपिध्वजासे युक्त अर्ज्जुनके प्रतापरूपी अग्निमें भस्म होगये हैं। और भी घोषयात्राके समय कर्ण आदि सब महारथ योद्धा और कवचको धारण करके रथमें बैठे हुए तुम सब लोग अर्ज्जुनके बाहुबलसे गन्धर्व्वोंके हाथसे छूटे थे। यह सब कर्म्म ही उन पाण्डवोंके पराक्रमके पूर्ण प्रमाण हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! इससे तुम भाइयोंके सङ्ग मिलकर पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि स्थापित करलो। मृत्युके मुखमें पड़े हुए इस सम्पूर्ण पृथ्वीके वीरोंका उद्धार करो। विचार करके देखो तो सही, युधिष्ठिर तुम्हारे जेठ भाई, धर्म्मात्मा, भाइयोंपर वात्सल्य भाव प्रकट करनेवाले, प्यारे और पण्डित हैं। इससे पाप बुद्धिको त्यागके ऐसे पुरुषश्रेष्ठ वीरोंके सङ्ग मिलकर कार्य्य करना ही तुमको सब भांतिसे उचित है। युधिष्ठिर यदि तुमको धनुषसे रहित, सीधी भृकुटी, और शान्तमूर्त्तिसे देखें; तब ही कौरवोंके कुलमें शान्ति हो सकती है। हे शत्रुनाशन नृपनन्दन! इससे तुम सेवकोंके सहित राजा युधिष्ठिरके निकट जाकर पहिलेकी भांति आलिङ्गन और प्रणाम करो। भीमके बड़े भाई युधिष्ठिर तुमको प्रणाम करते हुए देखकर प्रीतिपूर्व्वक अपने दोनों हाथोंसे ग्रहण

करेंगे। लम्बी भुजा, और सिंहके समान कन्धे-वाले प्रहार करनेवालेमें श्रेष्ठ भीमसेन तुमको दोनों भुजाओंसे आलिङ्गन करेंगे। उसके अनन्तर कबूतरके समान सुन्दर ग्रीवावाले कमलनयन अर्जुन तुम्हें प्रणाम करेंगे और पृथ्वीके बीच अत्यन्त रूपवान् नकुल और सहदेव प्रीतिपूर्वक गुरुकी भांति तुम्हारी आराधना करेंगे। कृष्ण आदि सब राजा लोग तुम लोगोंका मिलना देखकर पुलकित होकर आनन्दपूर्वक आंसुओंकी धारा बहावेंगे। तुम अभिमान छोड़के भाइयोंके सङ्ग मिलो और सब कोई एकत्र होकर इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका शासन करो। इकट्ठे हुए सम्पूर्ण राजा लोग आपसमें मिलकर हर्षपूर्वक अपने अपने स्थान पर जावें। हे पृथ्वीनाथ! युद्ध करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। सुहृद लोगोंकी बात मानकर तुम युद्धमें प्रवृत्त मत होओ। युद्धमें क्षत्रियोंके कुलका अवश्य ही भावी विनाश स्पष्ट रूपसे दीख पड़ता है। हे वीर! देखो प्रकाशमान ज्योति सब प्रतिकूल होरही हैं, हरिण और पक्षी आदि सब जीवजन्तु भयङ्कर भाव धारण किये हुए हैं। क्षत्रियोंके नाश होनेके विषयमें और भी बहुतसे भयङ्कर उत्पात दिखाई पड़ रहे हैं। विशेष करके हम लोगोंके बीचहीमें सब अशकुनोंकी अधिक उत्पत्ति होरही है। तुम्हारी सेनाके ऊपर उल्कापात हो रहा है। सवारीके वाहन मानो हर्षसे रहित होकर रुदन कर रहे हैं। अशुभ फल देनेवाले गिद्ध आदि पक्षी सेनाके चारों ओर घूम रहे हैं; नगर और राजभवनकी शोभा पहिलेके समान अब नहीं है। सियार आदि पशु भयङ्कर शब्द करते हुए सब दिशाओंसे घूम रहे हैं। हे महाबाहो! इससे तुम पिता माता और हित चाहनेवाले हम लोगोंके वचनोंका पालन करो। देखो, शान्ति और युद्ध दोनों ही तुम्हारे अधिकारमें हैं। हे शत्रुनाशन! यदि इकबारगी तुम सुहृद पुरुषोंकी बातोंको न मानोगे, तो अपनी सेनाको अर्जुनके बाणोंसे पीड़ित देखकर अवश्य ही तुमको पश्चात्ताप करना पड़ेगा। संग्रामभूमिमें अग्निके समान तेजस्वी भयङ्कर शब्द करनेवाले भीमसेनके सिंहनाद और गाण्डीव धनुषके प्रचण्ड शब्दको सुनकर हम लोगोंके यह वचन तुमको स्मरण होवेंगे। यदि इन वचनोंमें तुम्हें उलटी समझ होरही है, तो ये वचन अवश्य ही कार्य्यमें परिणत होवेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१३८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्म और द्रोणाचार्य्यके ऐसे वचन सुनके दुर्योधन नीचो गर्दन करके दोनो भौंओंके मध्य स्थानको सिकोड़कर तिरछी दृष्टिसे पृथ्वीकी ओर देखने लगे; और कुछ भी उत्तर न दिया। उनको इस प्रकारसे मनमलिन हुए देखकर वे दोनों वीर पुरुष एक दूसरेका मुख देखकर फिर भी दुर्योधनसे यह वचन बोले। भीष्म बोले, मैं सेवा करनेवाले, पापरहित, ब्रह्मनिष्ठ, सत्यवादी अर्जुनके विरुद्ध युद्ध करूंगा, इससे बढ़के और दुःखका विषय क्या होगा? द्रोणाचार्य्य बोले, हे राजन्! अपने पुत्र अश्वत्थामाके ऊपर मेरी जैसी प्रीति है; अर्जुनके ऊपर उससे भी अधिक है। अश्वत्थामा जिस प्रकारसे मेरा मान और प्रतिष्ठा करता है, अर्जुन उससे भी अधिक मान, प्रतिष्ठा तथा नम्रता प्रकाश करता है। क्षत्रिय धर्म्मका अनुष्ठान करनेसे मुझको पुत्रसे भी प्यारे उस अर्जुनके सङ्ग युद्ध करना पड़ेगा! अहा! क्षत्रियोंकी जीविका कैसी बुरी है! इस पृथ्वीके बीच जिसके समान धनुर्धारी और कोई भी नहीं है, वह अर्जुन मेरे ही प्रसादसे सबमें श्रेष्ठ हुआ है। जो पुरुष मित्रद्रोही, दुष्ट स्वभाव, नास्तिक, विनय रहित और शठतासे युक्त होता है, वह यज्ञके स्थानमें आये हुए मूर्खके समान

कभी पूजित नहीं हो सकता है । पापी मनुष्य बार बार निवारण करने पर भी जैसे पापकर्म्महीका अनुष्ठान करनेका अभिलाषी होता है ; उसी प्रकारसे पुण्यात्मा पुरुष पापकर्म्मोंसे सदा उत्तेजित किये जानेपर भी केवल पुण्यकर्म्मोंके करनेहीकी वासना करते हैं। हे भरतसत्तम ! तुमने शठता द्वारा पाण्डवोंको अलग किया है, तोभी वे लोग तुम्हारे प्रिय ही कार्य्यके करनेमें रत हैं; परन्तु तुम सदा उनके अहित ही कर्म्म करनेमें तत्पर रहते हो। देखो, कौरवोंमें बूढ़े और बुद्धिमान् विदुर, मैं, द्रोणाचार्य्य और श्रीकृष्ण आदि सब लोग तुम्हारे हितके निमित्त उपदेश करते हैं ; परन्तु तुम किसीकी बात भी उत्तम नहीं समझते हो। "मुझमें अत्यन्त बल है" यही समझ कर तुम मगरमच्छ घड़ियाल आदिस युक्त महासमुद्रको तरंगोंसे उच्छ्वासित गङ्गाके वेगकी भांति सहसा पाण्डवोंकी सेनाके पार जानेकी अभिलाषा करते हो। दूसरेके पहरे हुए वस्त्रको पहरनेके अथवा त्याग की हुई मालाको धारण करनेके समान तुम युधिष्ठिरकी राजलक्ष्मी पाकर ऐसी अभिलाषा करते हो ; परन्तु मैं तुमसे यही वचन पूछता हूं, कि युधिष्ठिरको द्रौपदीके सहित शस्त्रधारी भाइयोंसे घिरे हुए वनमें निवास करनेपर भी कौन वीर पुरुष राज्यमें स्थित रहकर उन्हें जीत सकता है ? सम्पूर्ण यक्ष जिसके आज्ञाकारी तथा सेवक बने हैं ; उस धनके स्वामी कुवेरके समीपमें भी जा, युधिष्ठिर उनके समान तथा अधिक मान और प्रतिष्ठाके सहित विराजमान हुए थे ; पाण्डव लोग कुवेरके राजभवनमें जाकर अनेक प्रकारके रत्नोंको पाकर अब इस समय तुम्हारी इस बहुत विशाल पृथ्वीके राज्यको आक्रमण करके अपने राज्यके बढ़ानेकी अभिलाषा करते हैं।

हे राजन् ! हम लोगोंकी तो आयु शेष हुई है, हम लोगोंने अपनी शक्तिके अनुसार दान, अध्ययन, होम और धनसे ब्राह्मणोंको तृप्त किया है ; इससे हम लोगोंको तो एक प्रकारसे कृतकृत्य ही समझना चाहिये। इस समय पाण्डवोंके सङ्ग युद्ध करके तुमको राज्य, सुख, मित्र, धन आदि सब वस्तुओंको त्यागकर महा घोर व्यसनमें पड़ना होगा, महा घोर तपस्या और व्रत करनेवाली द्रौपदी देवी जिसके विजयकी अभिलाषा करती हैं, उन पाण्डवोंको तुम कैसे जीत सकोगे ? श्रीकृष्ण जिसके मन्त्री और सब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन जिनके भाई हैं, ऐसे प्रतापी पाण्डवोंको तुम किस प्रकारसे जीत सकोगे ? इन्द्रियोंको जीतनेवाले तपस्वी और बुद्धिमान् ब्राह्मण लोग जिस युधिष्ठिरको सहायता कर रहे हैं, उस महा पराक्रमी सत्यवादी वीर-पुरुषको तुम किस प्रकारसे पराजित कर सकोगे ? मित्रोंको विपद रूपी समुद्रमें डूबनेके समयमें कल्याण चाहनेवाले सुहृद पुरुषोंको जैसा वचन कहना उचित है, उसीके अनुसार मैं फिर कहता हूं कि युद्ध करनेकी कुछ भी अवश्यकता नहीं है। कुरुकुलकी वृद्धिके निमित्त उन पुरुषसिंह पाण्डवोंके सङ्गमें सन्धि करो। पुत्र, सेवक और सेनाके सहित निरर्थक मृत्युके मुखमें मत पड़ो।

१३८ अध्याय समाप्त।

अब कर्ण-विवाद पर्व्व लिखेंगे।

राजा धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय ! श्रीकृष्णचन्द्र सेवक और राजपुत्रोंके सहित घिरकर कर्णको रथपर बैठाकर नगरसे बाहर हुए थे। उन महा तेजस्वी शत्रुनाशन कृष्णने सूतपुत्र कर्णके सङ्ग किन बातोंका प्रसङ्ग किया था और कौनसा शान्तवाद दर्शाया था ? वर्षाकालके मेघके समान जनार्दन कृष्णने राधापुत्र कर्णसे जो सब वचन कहे थे, वे सब वचन कोमल अथवा

कठोर थे; तुम मेरे निकट विस्तारपूर्व्वक कहो।

सञ्जय बोले, हे भारत! श्रीकृष्णचन्द्रने यथा उचित कर्णसे कोमल और कठोर दोनों प्रकारके वचनोंका प्रयोग किया था। उन महा तेजस्वी कृष्णने जो सब वचन कर्णसे कहे थे, वह सब ही धर्म्म अर्थसे युक्त, प्रिय, सत्य, हितकारी और हृदयसे ग्रहण करने योग्य वचन थे; मैं तुम्हारे समीप विस्तारपूर्व्वक उन वचनोंको कहता हूं, तुम चित्त लगाकर सुनो।

श्रीकृष्णचन्द्रने कर्णसे यह वचन कहा था, कि हे कर्ण! तुमने बहुतेरे वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंकी उपासना की है; और पाप-रहित होकर निष्ठा और श्रद्धाके सहित अनेक तत्वोंके अर्थको भी जान लिया है, इससे तुम सनातन वेदवादको यथार्थ रूपसे जानते हो, और सूक्ष्मसे सब धर्म्मशास्त्रके मर्म्मको भी तुम जानते हो। देखो स्त्रीकी अवस्थामें जो कानीन और सहोढ़ दो प्रकारके पुत्र उत्पन्न होते हैं, शास्त्रको जाननेवाले पण्डित लोग कन्याके पाणिग्रहण करनेवाले पुरुषको ही उन पुत्रोंका पिता कहते हैं; इससे कुन्ती देवीके कन्या अवस्थामें तुम्हारा जन्म होनेसे धर्म्मशास्त्रकी आज्ञाके अनुसार तुम भी धर्म्मपूर्व्वक पाण्डुराजहीके पुत्र हो। इससे चलो, युधिष्ठिरके पहिले तुम ही राजा बनोगे। तुम्हारे पितृपक्षमें पाण्डव और मातृपक्षमें वृष्णिवंश हैं; हे पुरुष-र्षभ! इन दोनों पक्षोंको तुम सदा अपना सहायक समझो। आज ही मेरे सङ्ग तुम इस स्थानसे प्रस्थान करो। हे तात! तुम युधि-ष्ठिरसे पहिले ही कुन्तीके गर्भसे उत्पन्न हुए हो; वह पाण्डवोंको आज विदित होजावे। पाण्डव लोग पांचों भाई द्रौपदीके पांचो पुत्र, सुभद्रा-नन्दन अभिमन्यु और पाण्डवोंके कार्य्यके निमित्त इकट्ठे हुए अन्धक और वृष्णि आदि सम्पूर्ण राजा तथा राजपुत्र लोग तुम्हारी चरणवन्दना करेंगे। पाण्डवोंकी प्यारी स्त्री द्रुपदनन्दिनी द्रौपदी भी समयके छठवें भागमें तुम्हारे समीप उपस्थित होगी। तुम्हारे राज्याभिषेकके निमित्त राजा और राजकन्या लोग सुवर्ण, चांदी आदिके कलशोंमें सब औषधी, सब धान्य, सम्पूर्ण रत्न और लता आदि समस्त सामग्रियोंको लाकर उपस्थित करेंगे; पवित्र अन्तःकरणवाले ब्राह्मणश्रेष्ठ धौम्य मुनि अग्निहोत्रका कार्य्य पूर्ण करेंगे और पाण्डवोंके वैदिक कर्म्मका अनुष्ठान करनेवाले चारों वेदोंके जाननेवाले ब्राह्मण लोग आज ही तुमको पृथ्वीके राज्यके ऊपर अभिषेक करके सिंहासनपर बैठावें, पुरुषश्रेष्ठ पांचो भाई पाण्डव लोग, मैं, तथा द्रौपदीके पांचो पुत्र, पाञ्चाल, और चेदिवंशीय क्षत्रिय लोग तथा सब कोई मिलकर इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यपर तुम्हारे आधिपत्यका प्रचार करेंगे। सत्यवादी धर्म्मात्मा धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर तुम्हारे युवराज बनेंगे। वह श्वेतछत्र धारण करके तुम्हारे पीछे पीछे रथपर चढ़के चलेंगे। हे राजन्! राज्यपर तुम्हारा अभिषेक होनेसे महा बल-वान् कुन्तीपुत्र भीमसेन तुम्हारे शिरके ऊपर श्वेतछत्र धारण करके खड़े होंगे। अर्जुन किङ्किणीके शब्दोंसे पूरित बाघके चमड़ेसे घिरा हुआ श्वेतवर्णके घोड़ोंसे युक्त तुम्हारे उत्तम रथको चलावेंगे। उनका पुत्र अभिमन्यु सदा तुम्हारी सेवामें उपस्थित रहेगा, नकुल-सहदेव, द्रौपदीके पांचो पुत्र, शिखण्डी और पाञ्चाल देशीय दूसरे सम्बन्धी लोग भी तुम्हारे अनुगामी बनेंगे। अन्धक, वृष्णि, दाशार्ह, और दशार्ण वंशीय राजा और हम लोग सम्बन्धके अनुसार तुम्हारे अनुयायी बनेंगे। हे महा-बाहो! इससे तुम होम और अनेक मङ्गल कर्म्मोंसे युक्त होकर सहोदर पाण्डवोंके सहित परम सुखसे राज्य भोग करोगे। द्रविड़, कुन्तल, अन्ध्र, तालचर, चुचुप और वेणुप देशीय

राजा लोग तुम्हारे अनुयायी होवेंगे और सूत, मागध, वन्दी लोग अनेक प्रकारसे तुम्हारी स्तुति करते रहें। पाण्डव लोग "वसुषेणकी जय" ऐसा कहकर सब ओर तुम्हारी विजयकी घोषणा करेंगे। हे कौन्तेय! नक्षत्रोंके बीचमें विराजमान बृहस्पतिकी भांति तुम भाइयोंके साथ मिलकर राज्य शासनमें प्रवृत्त होकर कुन्तीका आनन्द भी बढ़ाओगे. तुम्हारे इष्ट मित्र प्रसन्न और शत्रु लोग दुःखित होवेंगे; भ्राता रूपसे आज ही पाण्डवोंके सङ्ग तुम्हारा मिलाप होजावेगा।

१४० अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, हे वृष्णिनन्दन कृष्ण! तुम जो मित्रता, प्रीति, हितैषितासे युक्त मेरे निमित्त इन सब वचनोंको कहते हो, उसमें कुछ भी सन्देह नहीं है; मैं उन सब वचनोंको स्वीकार करता हूं। हे कृष्ण! तुम जैसा विचार करते हो, वह सब सत्य है, धर्म्मशास्त्रके अनुसार धर्म्मपूर्व्वक मैं पाण्डुराजका ही पुत्र हूं। माताने कन्या अवस्थामें सूर्य्यदेवके अंशसे मुझे गर्भमें धारण किया था, और उत्पन्न होते ही सूर्य्यदेवके वचनके अनुसार मुझे छोड़ दिया था; उस समयमें सूतजातीय अधिरथ नामक पुरुषने मुझे देखते ही प्रीतिके सहित अपने घरमें लाकर अपनी प्यारी स्त्री राधाके हाथमें समर्पण किया था। हे शत्रुनाशन कृष्ण! इससे इस प्रकारसे उत्पन्न होनेसे धर्म्मशास्त्रके अनुसार मैं पाण्डुराजहीका पुत्र कहा जा सकता हूं, परन्तु कुन्तीदेवीने मेरी कुछ भी कुशल चिन्ता न करके अपने हाथसे त्याग दिया। हे कृष्ण! जब मुझे पाकर अधिरथने अपनी स्त्री राधाके हाथमें समर्पण किया था, तब पुत्रके स्नेहसे युक्त होकर राधाके दोनो स्तनोंसे दूधकी धारा उत्पन्न हुई थी और पुत्रके समान उसने मेरा मलमूत्र साफ किया था। इससे धर्म्मको जाननेवाला और सदा धर्म्मशास्त्रको सुनकर मेरे समान पुरुष किस प्रकारसे उनके पिण्डको लोप करनेमें समर्थ हो सकता है? विशेष करके राधाकी भांति अधिरथ भी प्रीति पूर्व्वक मुझे अपना पुत्र ही समझते हैं, और मैं सदासे उनकोपिता ही समझता हूं। पुत्रवशमें होकर उन्होंने शास्त्रमें कही हुई विधिके अनुसार ब्राह्मणोंसे मेरा जातिकर्म्म आदि सब संस्कार कराके "वसुषेण" नाम रक्खा, और युवा अवस्थाके प्राप्त होनेपर अपनी स्वजातीय कन्याके सङ्ग मेरा व्याह किया। हे मधुसूदन जनार्द्दन! उनके गर्भसे मेरे पुत्र, और पौत्र आदि उत्पन्न हुए हैं और उन ही लोगोंके संग मेरा हृदय तथा वासनाबन्धन लगा हुआ है। इसमें बहुतसा सुवर्णका ढेर और सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके मिलने तथा अत्यन्त हर्ष और भयको पानेपर भी मैं उस प्रीतिके बन्धनको कभी नहीं तोड़ सकता हूं। हे कृष्ण! राजा धृतराष्ट्रके कुलमें मैं दुर्य्योधनके आसरेमें रहकर तेरह वर्षसे निष्कण्टक राज्यको भोग कर रहा हूं; इतने दिनोंसे मैंने बहुतसे यज्ञ आदिक शुभ कर्म्मोंका भी अनुष्ठान किया है। परन्तु सूतजातिसे पृथक् कभी कोई कर्म्म नहीं किया है। मेरा विवाह आदि सब कार्य्य सूतजातिमें हुआ है; हे कृष्ण! मेरा ही आसरा करके राजा दुर्य्योधन पाण्डवोंके संग विरोध करके युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुए हैं। उसी कारणसे द्वैरथ-युद्धमें सबसे अग्रणी और अर्जुनसे युद्ध करनेके निमित्त मुझको ही निश्चित किया है। हे जनार्द्दन कृष्ण! इससे अब इस समयमें वध, बन्धन, भय और लोभसे विचलित होकर उस बुद्धिमान् धृतराष्ट्र-पुत्रके सङ्ग मुझको किसी प्रकारसे भी मिथ्या आचरण करनेका उत्साह नहीं होता। यदि अब इस समयमें अर्जुनके सङ्ग मैं द्वैरथ युद्धमें न प्रवृत्त होऊंगा, तो मेरी

तथा अर्जुन दोनोंही की बहुत अकीर्त्ति होवेगी। हे मधुसूदन कृष्ण! तुम निःसन्देह यह सब वचन हमारे हितके निमित्त कहते हो, और तुम्हारे वशमें चलनेवाले पाण्डव लोग भी तुम्हारे कहे हुए सब कार्य्योंको पूर्ण करेंगे, उसमें भी मुझको कुछ सन्देह नहीं है। हे शत्रुनाशन! इस समय तुम पाण्डवोंके निकट हम लोगोंका यह विचार गुप्त रखना, यही मुझे सब प्रकारसे उत्तम बोध होता है। हे शत्रुनाशन! यदि इन्द्रियोंको जीतनेवाला धर्म्मात्मा युधिष्ठिर मुझे कुन्तीके गर्भसे उत्पन्न हुआ प्रथम पुत्र जानेगा तो वह स्वयं राज्य न ग्रहण करके मुझको ही समर्पण करेगा, और मैं भी उस प्रसिद्ध विशाल राज्यको ग्रहण करके अपनी पहिली प्रतिज्ञाके अनुसार दुर्य्योधनको दे दूंगा। हे मधुसूदन कृष्ण! इससे वह धर्म्मात्मा युधिष्ठिर ही सदाके लिये राजा बना रहे। तुम जिसके मन्त्री हो और महारथ भीम तथा अर्जुन जिसके मुख्य वीर योद्धा हैं, और नकुल सहदेव तथा द्रौपदीके पुत्र जिनके पृष्ठरक्षक हैं, उसके निमित्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको बहुत दिनतक भोग करनेहीमें कौन-कठिनाई है? हे कृष्ण! युधिष्ठिरने जिस प्रकारसे क्षत्रियोंकी बड़ी सेना इकट्ठी की है, उसमें हमलोगोंसे सहायता लेनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। देखो, पाञ्चलपुत्र धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, उत्तमौजा और युधामन्यु महारथ सात्यकी, सत्यधर्म्मा सौमिकि, चैद्य, चेकितान, वीरबहूटी कोड़ेकी भांति पांच भाई लाल वर्णके केकय लोग, भीमसेनका मामा महात्मा कुन्तिभोज, महाबल श्येनजित्, विराटपुत्र शङ्ख और समुद्रकी भांति सब कार्य्योंको पूर्ण करनेवाले तुम तथा और भी बहुतसे मुख्य मुख्य राजा लोग इकट्ठे हुए हैं। हे कृष्ण! दुर्य्योधन सब पृथ्वीके राज्यको पाकर लोकमें विख्यात हुए हैं, यह ठीक है; परन्तु इस समय उनको बड़े भारी शस्त्ररूपी यज्ञका अनुष्ठान करना पड़ेगा। तुम उस यज्ञके करानेवाले नायक होगे और तुमको ही यजुर्वेदी ऋत्विकका कार्य्य करना होगा। गाण्डीव धनुषधारी कपिध्वजासे युक्त अर्जुन होताका कार्य्य करेंगे। गाण्डीव धनुष स्रुव और शत्रुपक्षके लोगोंका पराक्रम ही उसमें घृतरूपी होगा। हे कृष्ण! शस्त्रोंके चलानेके समयमें पराक्रमी अर्जुन पाशुपत, ब्रह्मास्त्र, ऐन्द्र और स्थूणाकर्ण आदि जो सब मन्त्र शस्त्र चलावेंगे, वह सब यज्ञीय मन्त्रोंके समान होंगे। पराक्रममें पिताके समान अथवा उससे भी अधिक बलवान् सुभद्रापुत्र अभिमन्यु गीत-स्तोत्र अर्थात् उद्गाता बनेंगे, रणभूमिमें महा घोर शब्द करनेवाले हाथियोंकी सेनाके निमित्त कालस्वरूप महाबली पराक्रमी पुरुषसिंह भीमसेन सामवेदी मन्त्रोंको जाननेवाले होताका कार्य्य करेंगे। जप होमसे युक्त स्वयं राजा युधिष्ठिर होमके कार्य्यको समाप्त करेंगे। शङ्ख, भेरी, मृदङ्ग, नगाड़ेके बाजे और वीरोंके सिंहनाद ब्राह्मणोंके वचन अर्थात् कालके भोजनके निमित्त आवाहन मन्त्रस्वरूप होंगे। यशस्वी बलवान माद्रीनन्दन नकुल और सहदेव इस यज्ञके निमित्त क्षत्रियरूपी पशुओंको मारेंगे। हे जनार्दन कृष्ण! विचित्र वर्णके दण्ड सब उत्तम रथोंका समूह यज्ञके यूपरूप होंगे। कर्णि, नालिक, नाराच आदि शस्त्र वत्सदन्त और सोम आहुति साधनके निमित्त चर्म्म आदिके स्थापनसे गिने जावेंगे। हे कृष्ण! उस यज्ञमें तुम्हारे समीप सोमकलश शरासन् आदि खड्ग अभिषवण, मस्तक आदि पुरोडास, शक्ति अग्निको उद्दीपन करनेवाली इध्मधा, गदा-परिघ आहुतिको रक्षाके निमित्त दोनों किनारेकी लकड़ी और रुधिर होमका कार्य्य करेगा। द्रोणाचार्य्य तथा शरद्वतपुत्र कृपाचार्य्यके शिष्य लोग इस यज्ञके कार्य्यको पूर्ण करेंगे, गाण्डीवधारी अर्जुन और

द्रोणाचार्य्य आदि महारथ और जिन अस्त्र-शस्त्रोंको छोड़ेंगे, वह सब परिस्तोम, और सात्यकी प्रतिज्ञाके सहित पूर्ण रीतिसे मन्त्र सम्पादन कर्म्मको करेगा। हे महाबाहो! इस प्रकारसे यज्ञके कर्म्मका विस्तार होनेपर भीमसेनका पुत्र घटोत्कच उसमें क्षत्रियरूपी पशुओंको मारेगा। हे कृष्ण! प्रतापी धृष्टद्युम्न जो द्रुपदकी सभामें यज्ञके कर्म्म आरम्भ करनेपर अग्निसे उत्पन्न हुआ है, वही इस यज्ञमें दक्षिणा स्वरूप होगा। हे कृष्ण! दुर्य्योधनकी प्रीतिके निमित्त मैंने पाण्डवोंको जो कुछ कठोर वचन कहा था, उस नीच कर्म्मके निमित्त इस समयमें शोकित हो रहा हूं। जब तुम मुझको अर्ज्जुनके वाणोंसे मरा हुआ देखोगे, तब मेरे कहे हुए उस शस्त्रयज्ञका फिर आरम्भ किया जायगा। भीमसेन जब महाघोर शब्द करके दुःशासनके रुधिरको पीवेगा, तब ही सोमरसका पान समझा जायगा। हे कृष्ण! जब पाञ्चालपुत्र धृष्टद्युम्न और शिखण्डी द्रोणाचार्य्य और भीष्मको मारेंगे, तब ही इस यज्ञकी समाप्ति अर्थात् कुछ कालके निमित्त ठहराव होगा और महाबली भीमसेन जब धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनको मारेगा तभी यज्ञ शेष होजावेगा। हे कृष्ण! धृतराष्ट्रकी पुत्रवधू जब स्वामी और पुत्रसे हीन होकर गान्धारीके सहित रोदन करेंगी, तब ही कुत्ते, गिद्ध और सियारोंसे युक्त इस शस्त्र यज्ञकी समाप्ति होवेगी। हे शत्रुनाशन कृष्ण! अब अन्तिम प्रार्थना यही है, कि विद्या और अवस्थामें बूढ़े हुए क्षत्रिय लोग जिसमें तुम्हारे निमित्त व्यर्थ मृत्युको न स्वीकार करें तीनों लोगोंमें पवित्र पुण्यभूमि इस कुरुक्षेत्रमें इकट्ठे होकर पराक्रमी क्षत्रिय लोग जिसमें शस्त्रसे मरकर स्वर्ग लोकको जावें। हे पुण्डरीकाक्ष! इस विषयमें तुम्हारी जैसी इच्छा होवे, वैसा ही करो; यह सब क्षत्रिय वीर जिसमें स्वर्ग लोकमें गमन करें तुम उसहीका विधान करो। हे जनार्द्दन कृष्ण! इस पृथ्वीपर जबतक पर्व्वत और नदी विद्यमान हैं; तबतक यह कीर्त्ति सदा प्रकाशित रहेगी। ब्राह्मण लोग महाभारत युद्धकी कथा सदा कहते रहेंगे। हे कृष्ण! युद्धमें यश अर्थात् जय अथवा शक्तिके अनुसार पराक्रमको प्रकाश करके जो मृत्यु होती है, वही क्षत्रियोंका धन है। हे परन्तप कृष्ण! हमारे इस विचारको सदा गोपन रखके तुम अर्ज्जुनको युद्धके निमित्त मेरे सम्मुख में उपस्थित करना।

१४१ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, शत्रुओंको नाश करनेवाले भगवान् कृष्ण कर्णकी यह बात सुनकर हंसते हुए उनसे फिर कहने लगे, हे कर्ण! राज्य प्राप्त करनेका उपाय क्या तुम्हें उत्तम नहीं जंचता है? मैं तुमको समस्त पृथ्वीके राज्यको देनेमें सहमत हूं; तौभी उसके शासन करनेके निमित्त तुम इच्छा नहीं करते हो, इससे मुझको निश्चय बोध होता है, कि पाण्डवोंको अवश्य ही भावी-विजय होवेगा। अर्ज्जुनकी कपिध्वजासे युक्त रथपर प्रचण्ड जय शब्द सुनाई देगा, यह मुझे प्रत्यक्ष ही दीख पड़ता है। विश्वकर्म्माने उस कपिध्वजाको दिव्य मायासे ऐसा विस्तार किया है, कि बोध होता है, इन्द्र धनुषके समान प्रकाशित और अनेक पताकाओंसे युक्त है, और विजय चाहनेवाले भूत प्रेत राक्षस आदि भी उसपर दीख पड़ते हैं। हे कर्ण! अर्ज्जुनके ऊपर एक योजन और सम्मुख एक योजनको घेरेमें वह ध्वजा जलती हुई अग्निके समान ऐसी बनाई गई है, कि उसकी गति पर्व्वत वृक्ष आदिसे भी नहीं रुक सकती। रणभूमिमें कृष्ण सारथीके सहित जब श्वेतवाहन अर्ज्जुनको तुम आग्नेय, वायव्य, ऐन्द्र आदि शस्त्रोंको चलाते हुए देखोगे, और साक्षात् वज्रके समान गाण्डीव धनुषके शब्दको

सुनोगी, उस समय मूर्त्तिमान् कलिदेवकी उत्पत्ति होगी। सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका उस समयमें चिन्ह भी न दीख पड़ेगा। जब देखो-गी, जप होमसे युक्त धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर खुद ही रणभूमिमें आकर अपनी महासेनाकी रक्षा कर रहे हैं और सूर्य्यके समान प्रज्वलित होकर शत्रु सेनाको पोड़ित कर रहे हैं, उस समयमें सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका कोई लक्षण न दीख पड़ेगा। जब देखोगी, कि महाबली भीमसेन,—शत्रुओंको नाश करनेवाले महाबाहु भीमसेन दुःशासनके रुधिरको पीकर रणभूमिमें नृत्य कर रहे हैं, उस समय सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका कर्म्म नहीं रहेगा। जब तुम देखोगी, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, महाराज सुयोधन, सिन्धुनन्दन जयद्रथ आदि महारथ योद्धाओंके रणभूमिमें आनेपर धनुर्द्धारियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन शीघ्र ही उन लोगोंको अपने बाणोंसे पीछे हटाते हैं, उस समय सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका कुछ भी कर्म्म न दीख पड़ेगा। जब देखोगी, शत्रुओंको नाश करनेवाले पराक्रमी नकुल और सहदेव रणभूमिमें अपने महाघोर शस्त्रोंको चलाकर मतवारे हाथोके समान धृतराष्ट्रपुत्रोंकी सेनाको विकल कर रहे हैं, उस समयमें सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका कोई भी कर्म्म न दीख पड़ेगा।

हे कर्ण ! तुम यहांसे जाकर भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यसे यह वचन कहना, कि वर्त्तमान महीना सब प्रकारसे उत्तम है, इस महीनेमें भक्ष्य-भोज्य और काठ बहुत मिलेंगे, वनमें सब औषधी और फलोंकी बहुत ही उत्पत्ति होती है; मक्खियोंका उपद्रव बहुत थोड़ा रहता है, मार्गमें कीचड़ नाम मात्रको भी नहीं है; जल उत्तम रससे युक्त है, वायु थोड़ा उष्ण और ठण्ढा है, इससे यह महीना सदा ही सुखका देनेवाला है। आजसे सात दिनके बाद अमावस्या होगी; पण्डित लोग इन्द्रको इस तिथिका देवता वर्णन करते हैं, इससे उसी दिन युद्ध आरम्भ करो। इसके अतिरिक्त जो सब राजा लोग युद्धके निमित्त उपस्थित हैं; उनसे भी कहना, कि तुम लोगोंकी जो अभिलाषा है, मैं उसको सब प्रकारसे पूर्ण करूंगा; दुर्य्योधनके वशमें रहनेवाले सब राजा और राजपुत्र शस्त्रसे मर कर उत्तम गतिको पावेंगे।

१४२ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, श्रीकृष्णचन्द्रके यह हितकारी वचन सुन कर्ण उनकी यथा उचित पूजा करके यह वचन बोले, हे महाबाहो ! तुम जान बूझ कर क्यों मुझको मोहित करनेकी इच्छा करते हो ? पृथ्वी मण्डलका जो यह पूर्णरूपसे विनाश होनेका समय उपस्थित होरहा है, उसका कारण केवल शकुनि मैं, दुःशासन और राजा दुर्य्योधन हैं। हे कृष्ण ! कौरव पाण्डवोंसे जो महा संग्राम उपस्थित होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पृथ्वी अवश्य इस युद्धमें रुधिरके कीचड़से भर जावेगी, दुर्य्योधनके अनुयायी सब राजा और राजपुत्र लोग अवश्य-ही युद्धक्षेत्रमें मरकर यमपुरीमें पहुंचेंगे ! हे कृष्ण ! रोवेंको खड़े करनेवाले अनेक प्रकारके बुरे स्वप्न, भयङ्कर अशकुन और सब प्रकारके दारुण उत्पात सदा ही दीख पड़ते हैं, उससे युधिष्ठिरका विजय और दुर्य्योधनका पराजय स्पष्ट रूपसे सूचित होता है। हे कृष्ण ! देखो, तीक्ष्ण ग्रह तेजस्वी शनैश्चर प्राणियोंको अधिक पीड़ा देनेके निमित्त प्रजापति-दैवत रोहिणी नक्षत्रको पीड़ित कर रहा है। मङ्गल टेढ़ी चालसे जेष्ठानक्षत्र पर आकर मित्रकुलके संहार करनेके निमित्त मित्रदैवत नक्षत्र अनुराधासे सङ्गम करनेकी अभिलाषा करता है। हे कृष्ण ! राहुग्रह चित्राको विशेष रूपसे पीड़ित कर रहा है। इससे निश्चय कौरवोंको महाभय उपस्थित होगा। चन्द्रमाके भीतर

जो छाया रहती है, वह अपने स्थानसे पृथक् मालूम होरही है। राहु सर्व्वदा सूर्य्यके समीपमें हुआ चाहता है। आकाशसे उल्कापात होरहा है, हाथी आदि समस्त वाहन बुरे शब्दको करते हैं, घोड़े अन्न और पानीकी इच्छाको त्याग करके अकारण ही रोदन कर रहे हैं। हे कृष्ण! इन सब विषयोंके जाननेवाले पण्डितोंने कहा है, कि इन सब बुरे असगुनोंके उत्पन्न होनेपर अनेक प्राणियोंका संहार करनेवाला महाघोर भय उपस्थित होता है। हे महाबाहो कृष्ण! दुर्य्योधनकी सेनामें हाथी, घोड़े, मनुष्य आदि सबके थोड़े भोजन कर पर भी अधिक मल दीख पड़ता है। बुद्धिमान् पण्डितोंने इसको केवल पराजय तथा नाशहीका लक्षण निश्चित किया है। हे कृष्ण! इधर पाण्डवोंके सब वाहन हृष्टपुष्ट और हरिण आदि शुभ शगुनकी जाननेवाले पशु उनकी दहिनी ओरसे गमन करते हैं; यह केवल उन लोगोंके विजयका ही लक्षण दीख पड़ता है। परन्तु दुर्य्योधनकी बांयी ओरसे हरिण आदि पशु चलते हैं, और अमानुषी-वाणी सदा सुन पड़ती है, यह सब पराजयके ही लक्षण हैं। उत्तम पक्षी, मोर, हंस, सारस, चातक और चकोर आदि पाण्डवोंके अनुगामी होते हैं; परन्तु कौरवोंके पीछे गिद्ध, कौए, सियार, राक्षस तथा मक्खियोंका झुण्ड चलता है। दुर्य्योधनकी सेनामें भेरी आदि बाजोंका भी शब्द नहीं होता है; परन्तु पाण्डवोंके युद्धके बाजे बिना बजाये ही बजने लगते है। हे माधव! दुर्य्योधनके स्नान करनेवाले स्थानमें कूए, बावली आदिसे वृषभके समान शब्द बाहर होते हैं, देवता लोग मांस और रुधिरकी वर्षा करते हैं, अकस्मात् सुन्दर तेजसे और परिघ आदि अस्त्रोंसे युक्त आकाशमें गन्धर्व्व लोग दीख पड़ते हैं, वहांपर कृष्णवर्ण प्रचण्ड परिघ सूर्य्यको आच्छादित करता है। प्रथम और अन्त दोनों सन्ध्याके समयमें महाभय उत्पन्न होता है, एक पङ्ख, एक ही नेत्र, और एकही चरणवाले बहुतसे विकटरूपके पक्षी दीख पड़ते हैं, और महा घोर शब्द करते हैं। सियार रात दिन अशुभ शब्दसे चिल्लाते हैं, काली गर्द्दन और लाल चरणवाले भयानक पक्षी सन्ध्याके समय इधर उधर घूमते हुए दीख पड़ते हैं। सेनाके पुरुष पहिले ब्राह्मणोंको पीछे गुरु और भक्तिसे युक्त सेवकोंसे भी द्वेष करते हैं। हे मधुसूदन कृष्ण! यह सब ही पराजयके लक्षण हैं। दुर्य्योधनकी सेनाका स्थान पूर्व्व दिशामें रक्तवर्ण दीखता है; शस्त्रके रूपके समान दक्षिण दिशाका वर्ण हो गया है और पश्चिम दिशाका रूप बिना पके हुए मट्टीके पात्रके समान है। सब दिशाएं प्रज्वलित होकर दुर्य्योधनकी बड़े भारी भयका बोध कराती हैं। हे कृष्ण! मैंने स्वप्नमें देखा है, कि राजा युधिष्ठिर सहस्र खम्भोंसे युक्त एक ऊंचे मन्दिरके ऊपर चढ़ रहे हैं; वह सब लोग अत्यन्त उत्तम वस्त्रोंको धारण करके श्वेतवर्णके छत्रसे युक्त हैं। उन लोगोंके आसन भी श्वेत ही वर्णके दीख पड़े। हे जनार्द्दन कृष्ण! उस समय मैंने यह भी देखा था, कि मानो रुधिरसे भरी हुई पृथ्वीको तुम अपने शस्त्रोंसे व्याकुल कर रहे हो और महा तेजस्वी राजा युधिष्ठिर हड्डियोंके ऊपर बैठकर घृत और दूधको पान कर रहे हैं, और यह भी देखा, कि युधिष्ठिर सब पृथ्वीको ग्रास कर रहे हैं, इससे अवश्य ही बोध होता है, कि वह तुम्हारे दिये हुए इस सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके राज्यको भोगेंगे। युधिष्ठिरकी भांति पुरुषसिंह भीमसेन भी ऊंचे पर्व्वतके शिखर पर चढ़के हाथमें गदा लेकर पृथ्वीको नष्ट करनेकी इच्छा करते हैं; इससे मुझे यह बोध होता है, कि वह इस उपस्थित संग्राममें हम सब लोगोंका नाश करेगा। हे कृष्ण! जिस

स्थानपर धर्म्म रहता है,वहां पर ही जय होती है, इसे मैं खूब जानता हूं। हे कृष्ण! गाण्डीव धनुषको ग्रहण करनेवाले अर्ज्जुन तुम्हारे सहित पाण्डुरवर्ण हाथोके ऊपर चढ़के परम शोभासे शोभित हुए थे। हे कृष्ण! इन सब बातोंके मर्म्मको भली भांति विचार करके देखनेसे यही बोध होता है, कि तुम लोग सब कोई मिलकर रणभूमिमें दुर्य्योधनका नाश करदोगे, इसमें मुझको क्या कुछ भी सन्देह हो सकता है? हे कृष्ण! फिर भी मैंने यह देखा, नकुल सहदेव और सात्यकी यह तीन पुरुषसिंह महारथ वीर सफेद रङ्गके कवच माला और वस्त्रोंसे भूषित होकर उत्तम मनुष्योंकी सवारीमें विराजमान हैं; उनके सिरके ऊपर पाण्डुरवर्ण छत्र शोभित हैं। हे महाबाहो कृष्ण! दुर्य्योधनकी सेनामें भी अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य, यदुवंशीयश्रेष्ठ कृतवर्म्मा इन तीनों पुरुषोंका श्वेत वस्त्र धारण किये हुए मैंने देखा था। इसके अतिरिक्त और सब राजा लोगोंके लालरङ्गके वस्त्रोंसे सिर बंधे हुए दीख पड़े। हे शत्रुनाशन कृष्ण! महारथ भीष्म और द्रोणाचार्य्य मुझे और दुर्य्योधनको सङ्ग लेकर ऊंटसे जुते हुए विमानमें बैठकर दक्षिण दिशाकी ओर चले। इससे यह निश्चय बोध होरहा है,कि हम लोग शीघ्र ही यमपुरीमें पहुंचकर अतिथि रूपसे ग्रहण किये जावेंगे। हे जनार्द्दन कृष्ण! हम लोग सब राजाओंके सहित गाण्डीव-धनुषके प्रतापरूपी अग्निमें भस्म होजावेंगे, इसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे कर्ण! जब मेरी बात तुम्हारे हृदयमें नहीं उत्तम बोध होती है, तब इस सम्पूर्ण पृथ्वीको प्रजाओंका निश्चय ही नाशका समय उपस्थित हुआ है। हे भ्राता! जब सबके नाश होनेका समय उपस्थित होता है,तब उत्तम नीतिके समान बोध होनेवाली यथार्थमें दुष्ट नीति कभी भी हृदयसे नहीं दूर होती है।

कर्ण बोले, हे कृष्ण! यदि मैं इस वीरवंशके नाश करनेवाले महायुद्धसे पार होकर जीता रहूंगा, तब तुमसे फिर भेट कर सकूंगा, नहीं तो स्वर्ग लोकमें अवश्य ही फिर हम लोगोंका मिलाप होगा। हे पाप रहित! इससे अब उस ही स्थानपर तुम्हारे सङ्ग मेरा मिलाप सम्भव होता है।

सञ्जय बोले, राधापुत्र कर्ण कृष्णसे ऐसा वचन कहकर उन्हें अच्छी प्रकारसे आलिङ्गन करके वहांसे विदा हो कृष्णके रथसे उतर सुवर्ण भूषित अपने रथपर चढ़के दीनतायुक्त चित्तसे हम लोगोंके सङ्ग हस्तिनापुरको लौटे; अनन्तर सात्यकीके सहित कृष्णने सारथीसे रथ हांकनेको कहा; और शीघ्र ही वहांसे प्रस्थान किया।

१४३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,—श्रीकृष्णने कर्णसे निरर्थक इन विचारोंकी करके कौरवोंको मण्डलीसे निकलकर पाण्डवोंके समीप गमन किया। विदुर कुन्तीदेवीके समीप जाकर धीमे स्वरसे शोक प्रकाश करते हुए कहने लगे, हे यशस्विनी! युद्ध न होना ही मुझे उत्तम जंचता है; वह तुमको भली भांतिसे विदित है, परन्तु मेरे सहस्रों बार कहनेपर भी दुर्य्योधन किसी प्रकारसे मेरा वचन ग्रहण नहीं करता। राजा युधिष्ठिर चेदी, पाञ्चाल, केकय, भीम, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, कृष्ण और सात्यकी आदि वीरोंकी सहायतासे अत्यन्त बलवान होकर भी अपने राज्यको छोड़कर विराटनगरमें निवास कर रहे हैं; तौभी जातिकी शुभ कामना विचारकर निर्बल पुरुषोंकी भांति केवल धर्म्महीकी अभिलाषा करते हैं; परन्तु यह अन्धराज धृतराष्ट्र बूढ़े होकर भी किसी प्रकारसे शान्त नहीं होते हैं, वह पुत्रोंके मदमें मत्त होकर केवल अधर्म्महीके मार्ग-

से चल रहे हैं। इससे शकुनि, जयद्रथ, कर्ण, दुःशासनकी दुष्टबुद्धिसे कुरुकुलका नाश होगा ; यथार्थ धर्म-निष्ठ पुरुषके सङ्ग जिन्होंने ऐसा अधर्म्मका कार्य्य किया है, उन लोगोंका वही अधर्म्म अवश्य ही उनके नाश करनेका कारण होगा। अहा ! कौरवोंने बलपूर्व्वक धर्म्मका कर्म्म छेदन किया है, उससे कौन पुरुषके हृदयमें दुःख नहीं उत्पन्न होगा ? हे देवि ! कृष्ण जब सान्त्व स्थापन नहीं कर सके, तब पाण्डवोंके समीप चले गये ; अब पाण्डव लोग युद्धका अवश्य ही उद्योग करेंगे, और कौरवोंका अवश्य ही नाश होगा ; इन्हीं सब बातोंका विचार करके मुझे रातको नींद नहीं आती है।

परम हितैषी विदुरके यह वचन सुनकर कुन्ती अत्यन्त ही दुःखित होकर लम्बी सांस लेती हुई अपने मनमें यह चिन्ता करने लगी, कि हाय ! धन क्या ही अनर्थका मूल है, कि इसीके निमित्त यह महा भयङ्कर जातिके लोगोंका बध उपस्थित हुआ है। इससे इस अर्थको धिक्कार है। इस युद्धमें सुहृद पुरुषोंहीका वध होगा ! पाण्डव लोग चेदि, पाञ्चाल और यदुवंशियोंके सङ्ग मिलकर कौरवोंसे युद्ध करेंगे, इससे अधिक दुःखका और कौनसा विषय होगा ? संग्राममें मुझे अवश्य ही दोष दीख पड़ता है, और युद्ध न करनेसे अपने पक्षकी पराभव दीखती है ; क्योंकि धनहीन पुरुषका मरना ही उत्तम है। और अनगिनत जातिके लोगोंका बध करना भी उत्तम नहीं है। यही सब विचारकर मेरा अन्तःकरण अत्यन्त दुःखसे पीड़ित होरहा है। योद्धाओंमें मुख्य शान्तनु-पुत्र पितामह भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कर्ण ये लोग दुर्य्योधनके सहाय हैं ; इससे मुझे बहुत भय लगता है ; परन्तु मुझे बोध होता है, कि प्यारे शिष्यके सङ्ग आचार्य्य कभी अपनी इच्छाके अनुसार युद्ध नहीं करेंगे, पितामह भीष्म ही भला पुत्रोंके ऊपर क्यों न प्रीति करेंगे ! तब मिथ्या मोहमें पड़ा हुआ एक मात्र कर्ण ही सब अनिष्ट कर्म्मोंका मूल है। यह दुष्टात्मा नीचबुद्धि दुर्य्योधनके मोहमें पड़कर सदा ही पाण्डवोंके सङ्ग द्वेष किया करता है, जिससे उन लोगोंको दुःख मिले, उसके निमित्त यह सदा दुष्टबुद्धिका प्रयोग किया करता है ; विशेषतः वह स्वयं महाबली है ; उसके दुष्ट चरित्र ही मेरे अन्तःकरणको भस्म कर रहे हैं। इससे आज मैं उसके समीप जाकर सम्पूर्ण गूढ़ विषयोंका वर्णन करके जिससे पाण्डवोंके ऊपर उसका चित्त प्रसन्न होवे, उसकी चेष्टा करूंगी। जिस प्रकारसे उसका जन्म हुआ है, उस वृत्तान्तको मैं विशेषरूपसे वर्णन करूंगा। जब मैं पिता कुन्तिभोज राजाके भवनमें वास करती थी तब भगवान् दुर्व्वासा मुनिने मेरी सेवासे प्रसन्न होकर मुझे एक मन्त्र बताके यह वर दिया था, कि "तुम पुत्रकी इच्छासे जिस देवताका आवाहन करोगी, वही तुम्हारे समीप चला आवेगा" उस प्रकारका विचित्र वर पाकर मैं स्त्रीस्वभाव, चञ्चलता तथा बाल स्वभावके कारणसे अनेक प्रकारकी चिन्ता करने लगी मन्त्रका बल और ब्राह्मणके वचनकी परीक्षा करनेके निमित्त मुझे अत्यन्त ही अभिलाषा उत्पन्न हुई। परन्तु उस समय विश्वास-पात्री दासियोंसे रक्षित और सखियोंसे युक्त थी ; विशेषकर किस प्रकारसे मुझे दोष न होवे, तथा पिताको भी कोई कलङ्क न लगे, किस प्रकारसे मेरा सुकृत नष्ट न होगा, और किस भांति मैं अपराधिनी न हो सकूंगी ; इसी प्रकारकी चिन्तासे व्याकुल होकर इकबारगी उस सङ्कल्पसे पीछे हटने लगी। अन्तमें अत्यन्त ही कौतूहलकी अभिलाषासे मैंने दुर्व्वासा ऋषिको प्रणाम करके कन्या अवस्थाहीमें उस मन्त्रका उच्चारण करके सूर्य्यदेवका आवाहन किया। इससे जो पुरुष कन्या अवस्थामें मेरे गर्भसे उत्पन्न होकर पुत्रके समान रक्षित हुआ

था,वह अपने भाइयोंके हितके निमित्त मेरे कहे हुए उत्तम वचनोंको क्यों नहीं स्वीकार करेगा ? कुन्तीदेवी ऐसा विचार कर अपने प्रयोजनको निश्चय करके कर्णसे भेंट करनेसे निमित्त भागीरथीके तीरपर गई। वहांपर वह परम दयालु सत्यव्रत करनेवाला महाबाहु कर्ण अपनी भुजाको ऊपर उठाकर पूर्व्व ओर मुंह करके वेद मन्त्रोंका उच्चारण करता हुआ जप कररहा था। उसे इस प्रकारसे देखकर उसको दुःखिता माता जपके शेष होनेपर अपना प्रयोजन सिद्ध करनेकी इच्छासे उनके पीछे खड़ी हुई। वृष्णिवंशमें उत्पन्न हुई पाण्डुराजकी भार्य्या सुकुमारी कुन्तीदेवी बहुत समयतक कर्णके पीछे खड़ी रहकर सूर्य्यके प्रचण्ड तेजसे कमलकी मालाके समान मुरझा गई; अन्तमें कर्णके ऊपरके वस्त्रकी छायाका सहारा करके वहांपर खड़ी हुई। धर्मात्मा सत्यव्रत करनवाले अत्यन्त तेजस्वी महामानी सूर्य्यपुत्र कर्णने जबतक अच्छी प्रकारसे पीठपर सूर्य्यका तेज नहीं पहुंचा, तबतक जप करके अन्तमें पीठ घुमाकर देखा तो वहांपर कुन्ती-देवी खड़ी थी। अकस्मात् उनको देखकर वह विस्मित होकर दोनों हाथ जोड़के उन्हें प्रणाम करके यथा उचित नीचे कहे हुए वचन बोले।

१४४ अध्याय समाप्त।

——

कर्ण बोले, मैं राधा और अधिरथका पुत्र कर्ण हूं; मैं तुमको प्रणाम करताहूं, तुम किस निमित्त मेरे समीप आई हो, तुम्हारा कौनसा कार्य्य मुझको करना होगा; वह सब तुम मुझसे कहो।

कुन्ती बोली,हे कर्ण! तुम कुन्तीपुत्र हो, तुम राधापुत्र नहीं हो; अधिरथ भी तुम्हारा पिता नहीं है; तुम सूतकुलमें उत्पन्न नहीं हुए हो। मैं तुम्हारे जन्मका गूढ़ वृत्तान्त कहती हूं, उसे तुम निश्चय करके सत्य समझो। हे पुत्र! मैंने कन्या अवस्थामें पहिले ही तुमको गर्भमें धारण किया था, इससे तुम मेरे ही कानीन पुत्र हो; तुम कुन्तिराजके भवनमें उत्पन्न हुए थे। हे शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कर्ण! यह जो सब लोगोंको प्रकाश करनेवाले भगवान् सूर्य्य सदा आकाशमण्डलमें विराजमान हैं, इन्होंने तुमको मेरे गर्भसे उत्पन्न किया था। हे महा तेजस्वी पुत्र! मेरे पिताके मन्दिरमें तुम देव-कुमारकी भांति सुन्दर कवच और कुण्डलके सहित अत्यन्त शोभासे युक्त होकर मेरे गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इस समयमें भाइयोंके सङ्ग जान पहचान न रहनेके कारण तुम मोहमें पड़कर दुर्य्योधनकी सेवा कर रहे हो। तुम्हारे समान तेजस्वी और बुद्धिमान् पुरुषके लिये यह कार्य्य किसी प्रकारसे उचित नहीं है। हे पुत्र! मनुष्य धर्म्मका निरूपण करनेवाले पण्डितोंने पितृवर्ग और एक मात्र स्नेहमयी माताके सन्तोषकी पूर्ण करनेहीको धर्म्मका फल निश्चय किया है। इससे गर्भ धारण करनेवा-ली माताको प्रसन्न करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है। पहिले अर्ज्जुनकी भुजासे उपार्जित की हुई राजलक्ष्मी जो दुष्टोंके द्वारा हरण की गई है, तुम युधिष्ठिरकी वह राजलक्ष्मी धृत-राष्ट्रपुत्रोंसे बलपूर्व्वक छीनकर स्वयं भोग करो; ऐसा करनेहीसे मुझे पूर्ण आनन्द तथा सुख मिलेगा। कौरव लोग आज कर्ण अर्ज्जुनका समागम देखें। ये दुष्ट तथा पामर लोग तुम लोगोंको भ्राता रूपसे मिलते हुए देखकर अव-नति स्वीकार करें। लोकमें जैसे रामकृष्णका नाम एकत्र उच्चारण किया जाता है, वैसे ही कर्ण अर्ज्जुनका नाम भी आजसे पृथ्वीमें विख्यात हो। अहा! तुम लोगोंके एकत्र होनेपर इस लोकमें ऐसा कौनसा कार्य्य है, जो पूर्ण न हो सकेगा? हे कर्ण! तुम पांच सहोदर भाइयोंसे युक्त होकर देवतोंसे घिरे हुए साक्षात्

इन्द्रके समान राजसिंहासनपर शोभित होओगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। तुम सब गुणोंसे पूर्ण और मेरे सब पुत्रोंसे जेठे हो; इससे "सूतपुत्र" यह शब्द जिससे फिर कभी तुम्हारे ऊपर न प्रयोग किया जावे; तुम महा तेजस्वी पार्थ हो।

१४५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर कर्णने सूर्य्यमण्डलसे निकली हुई एक स्नेहमयी आकाशवाणी सुनी, भगवान् सूर्य्यने खुद ही पुत्र-प्रेमके वशमें होकर कल्याण करनेवाले शुभ वचन कहे थे। वह वचन यही हैं; "हे कर्ण! कुन्तीने सत्य वचन कहा है, तुम सब शङ्काओंको छोड़कर माताके इस वचनका पालन करो। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! सब प्रकारसे कुन्तीके वचनके अनुसार कार्य्य करनेसे तुम्हारा अत्यन्त ही मङ्गल होगा।"

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, माता कुन्तीदेवी और पिता सूर्य्यदेवके वचन सुनकर सत्य-प्रतिज्ञा करने वाले वीर कर्णकी बुद्धि तनिक भी विचलित न हुई। उन्होंने माताको सम्बोधन करके कहा, कि "हे क्षत्रियजननी! तुमने जो कहा, कि मेरी आज्ञाको पालन करना ही तुम्हारे धर्म्मका द्वारस्वरूप है"; इस वचनपर मैं श्रद्धा नहीं कर सकता हूं। हे माता! जन्मते ही जो तुमने मुझे त्यागकर प्राणको नाश करने योग्य महा घोर बुरा और अधर्म्मका कार्य्य किया था, उसीसे मेरा यश तथा कीर्त्ति आदि नष्ट होगये हैं। यदि मैं क्षत्रिय-कुलहीमें उत्पन्न हुआ होऊं तौ भी तुम्हारे कारणसे क्षत्रियोंके योग्य मेरा कोई भी संस्कार नहीं होने पाया। इससे विचार करके देखो मेरा क्या कोई शत्रु तुमसे भी अधिक बुरा आचरण मेरे साथ कर सकता है? कैसे आश्चर्य्यका विषय है, कि तुम दया करनेके समयमें कुछ भी मेरे हितका कार्य्य न करके इस समयमें अपनी आज्ञा पालन करनेसे निमित्त मुझे उपदेश करती हो। पहिले जब तुमने माताके समान मेरा कोई भी हितका कार्य्य नहीं किया था, तो इस समयमें निश्चय यही बोध होता है, कि तुम केवल अपने कल्याणकी इच्छासे ही इस अवसरमें मुझको पुत्र कहके सम्बोधन कर रही हो। कृष्णके मित्र अर्जुनसे कौन पुरुष भयभीत नहीं हो सकता? इससे पाण्डवोंकी सभा तथा संग्राममें गमन करनेसे कौन पुरुष मुझको भयभीत नहीं समझेगा? पहिले मैं उन लोगोंका भ्राता कहके प्रसिद्ध नहीं था, इस समयमें युद्धका अवसर आनेपर यदि पाण्डवोंका पक्ष अवलम्बन करूंगा, तो यह सम्पूर्ण क्षत्रियोंकी मण्डली मुझको क्या कहेगी? विशेष करके जिससे मुझे सुख मिले, ऐसा सब प्रकारका भोग और भोजनकी वस्तुओंसे धृतराष्ट्र-पुत्रोंने आजतक मेरा अत्यन्त ही सत्कार किया है; उसको मैं इस समय कैसे निष्फल कर सकता हूं? शत्रुओंके सङ्ग वैर करके जो लोग सदा ही मेरी उपासना किया करते हैं; और वसु बान्धव लोग जैसे इन्द्रको प्रणाम करते हैं, वैसे ही वे लोग मेरे सम्मुख विनीतभाव अवलम्बन किये रहते हैं जो लोग मेरे पराक्रम और बलके सहारेसे शत्रुओंके जीतनेकी अभिलाषा करते हैं, उन लोगोंका वह मनोरथ मैं किस प्रकारसे विफल कर सकता हूं? महा घोर युद्धरूपी समुद्रमें जो लोग मुझे नौका स्वरूप समझकर उससे पार होनेकी इच्छा करते हैं, इस समयमें क्या कहके मैं उन लोगोंको त्याग सकता हूं? जो लोग दुर्य्योधनके उपजीवी हैं, उनके कर्त्तव्यकर्म्मका यही यथार्थ समय उपस्थित हुआ है। इससे इस अवसरमें मैं अपने प्राणकी आशाको छोड़

करके अवश्य उसके उपकारके पलटेमें युद्ध करूंगा। जो सब अधम पुरुष सदा स्वामीके समीपमें अन्न वस्त्र पाकर कार्य्यके समयमें अनायास ही उसको छोड़कर चले जाते हैं, उन स्वामीके पिण्डको हरण करनेवाले कृतघ्न महा पापियोंके निमित्त यह लोक और परलोक कुछ भी नहीं रह सकता।

हे मातः! तुमसे मिथ्या बोलनेको क्या आवश्यकता है, मैं धृतराष्ट्रपुत्रोंके निमित्त सम्पूर्ण बल और शक्तिको प्रकाशित करके अवश्य तुम्हारे पुत्रोंके सङ्ग युद्ध करूंगा। दया, धर्म्म और सत्पुरुषोंके पवित्र चरित्रको अवश्यही मुझको रक्षा करनी पड़ेगी। इससे यथार्थ हितकारी होनेपर भी इस समयमें मैं तुम्हारी बातोंका किसी प्रकारसे भी पालन नहीं कर सकता हूं। तब मुझसे जो तुमने इतना अनुरोध किया है, वह भी निष्फल न होगा, मैं युद्धमें प्रवृत्त होकर केवल अर्जुनके अतिरिक्त तुम्हारे युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव चार पुत्रोंके नाश करनेके निमित्त कभी यत्न न करूंगा। मैं तुम्हारे निकटमें यह प्रतिज्ञा करके सत्य कहता हूं, कि संग्राममें युधिष्ठिर आदि युद्ध करने योग्य तथा वध्य होनेपर भी मैं कभी उनके नाश करनेका उपाय न करूंगा। युधिष्ठिरकी सेनामें केवल अर्जुनके सङ्ग मेरा युद्ध होगा; क्योंकि युद्धमें अर्जुनको मारनेहीसे यथेष्ट फल लाभ करूंगा अथवा उसके हाथसे मरकर यशसे युक्त होके स्वर्ग लोकमें जाऊंगा। हे यशस्विनि! तुम्हारे पांच पुत्रोंका कभी नाश न होगा, क्योंकि अर्जुनके मरनेसे कर्णको लेकर तुम्हारे पांच पुत्र रहेंगे; और मेरे मरनेसे अर्जुनके सहित वही पांच पुत्र रहेंगे।

कर्णके इस वचनको सुनकर कुन्ती दुःख और शोकसे कांपती हुई उस अत्यन्त धैर्य्यशाली महावीर पुरुषको आलिङ्गन करके यह वचन बोली,—"हे पुत्र! तुम जो बोलते हो, वही सम्भव तथा सत्य बोध होता है; इस उपस्थित युद्धमें कौरव लोगोंका नाश होजावेगा; क्या किया जावे? दैवका बल सबसे प्रबल है। हे शत्रु नाशन! तुमने जो युधिष्ठिर आदि चारो भाइयोंको अभय दान किया है, तुम्हारी यह प्रतिज्ञा जिसमें पूर्ण रीतिसे सत्य होवे। अनन्तर कुन्ती कर्णसे यह वचन बोली, हे पुत्र! तुम्हारा कल्याण होवे, तुम रोग रहित होकर कुशलसे रहो। कर्णने भी शिर झुकाकर उनको प्रणाम किया और कहा "जो तुम्हारी आज्ञा वही होगा"। इसके अनन्तर दोनों अपने अपने स्थानपर चले गये।

१४६ अध्याय समाप्त।

अब सैना निर्याण पर्व्व लिखेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इधर शत्रुनाशन कृष्णने हस्तिनापुरसे विराट नगरमें पहुंच पाण्डवोंके समीप कौरवोंका सम्पूर्ण वृत्तान्त आदिसे अन्त तक वर्णन किया। बहुत समयतक बात चीत और विचार करके अन्तमें विश्राम करनेके निमित्त अपने निवास भवनमें गमन किया। अनन्तर भगवान् सूर्य्यके अस्ताचल पर्व्वतके शिखर पर जानेके अनन्तर पाण्डव लोग पाँचो भाई विराट आदि राजाओंको विदा करके कृष्णके वचन सुननेको अभिलाषासे शीघ्र ही उन्हें अपने समीपमें बुलाकर फिर विचार करने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे पुण्डरीकाक्ष! तुमने हस्तिनापुरमें जाकर क्या क्या वचन कहे थे, वह विशेष रूपसे मेरे निकट वर्णन करो।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, मैं हस्तिनापुरमें जाकर जो उत्तम, पथ्य और हितकारी वचन थे, उसे ही कहा था; परन्तु नीचबुद्धि दुर्य्योधनने किसी प्रकारसे भी मेरे वचनोंको ग्रहण नहीं किया।

राजा युधिष्ठिरने पूछा, हे हृषीकेश जनार्दन! दुर्योधनके नीच मार्ग अवलम्बन करनेपर कौरवोंमें बूढ़े पितामह भीष्मने क्या कहा था? भरद्वाजनन्दन महात्मा द्रोणाचार्य्य, पिता धृतराष्ट्र तथा माता गान्धारीने क्या कहा था? धर्म्मात्मा विदुर जो सदा ही हम लोगोंके शोक और दुःखसे व्याकुल रहते हैं, उन्होंने दुर्योधनके निमित्त क्या वचन कहा था? और सभामें बैठे हुए सब राजाओंने कैसे वचन कहे थे? हे कृष्ण! कौरवोंमें श्रेष्ठ भीष्म, धृतराष्ट्र तथा दूसरे सभासदोंने जो नीचबुद्धि लोभी दुर्योधनसे उसके हितके निमित्त अप्रिय वचनोंको कहा था, वह सब तुमने मुझसे कहा परन्तु वह सब यथार्थ रूपसे मेरे हृदयङ्गम नहीं हुए हैं, इससे फिर उन लोगोंके वचनोंके सुननेकी मुझे अभिलाषा है। हे गोविन्द! जिसमें योग्य समय बीत न जावे, तुम उसका विधान करो। हे तात! हे कृष्ण! तुम एक मात्र हम लोगोंकी गति, प्रभु और गुरु-स्वरूप हो।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे राजेन्द्र! कौरवोंकी सभामें राजा दुर्योधनसे जैसा वचन कहा गया था, उसे मैं वर्णन करता हूं, तुम चित्त लगाकर सुनो। मेरा जो कुछ वक्तव्य था, उसके सुनानेपर धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन हंसने लगा, इससे भीष्म अत्यन्त ही क्रुद्ध होकर उससे कहने लगे। हे दुर्योधन! कुलकी रक्षाके निमित्त मैं जो तुमसे यह वचन कहताहूं, उसको अच्छी प्रकारसे हृदयमें धारण करो। हे राजशार्दूल! उसे सुनकर अपने कुलके हित साधनके निमित्त यत्न करो। हे तात! मेरे पिता शान्तनु लोकमें विख्यात थे; पहिले मैं ही उनके एक मात्र पुत्र था। पण्डित लोग एक पुत्रको पुत्र ही नहीं गिनते; इससे और एक पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त पिताको बहुत ही अभिलाषा हुई। कैसे मेरा कुल बढ़ेगा, किस प्रकारसे यश स्थिर रहेगा, इसी प्रकारकी उन्हें चिन्ता हुई। पिताके मनोरथको जानकर मैंने व्यासदेवकी माता योजनगन्धाके सङ्ग पिताका विवाह कराया। कुल-रक्षा और पिताके मनोरथकी पूर्ण करनेके निमित्त मैंने कठिन प्रतिज्ञा करके इस कार्य्यको सिद्ध किया था। उसी प्रतिज्ञाके कारणसे मैं राजा नहीं हो सका और सदासे ब्रह्मचर्य्य व्रत अवलम्बन किये हुए रहता हूं; वह तुम लोगोंको भली भांतिसे विदित है। मैंने राज्यपदको नहीं पाया, इसके निमित्त कभी भी मुझे विषाद तथा दुःख नहीं हुआ। अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेसे मैं हृष्ट-पुष्ट और सन्तुष्ट चित्तसे जीवन धारण करता हूं।

हे राजन्! समयके अनुसार इस सत्यवती माताके गर्भसे कुरुकुल-धुरन्धर धर्म्मात्मा महाबाहु विचित्रवीर्य्यका जन्म हुआ। पिताके स्वर्ग लोकमें जानेके अनन्तर मैंने अपने छोटे भाईको लक्ष्मीसे युक्त अपने राज्यपर अभिषिक्त किया। विचित्रवीर्य्य राजा हुए और मैं उनका अनुजीवी होकर राज्यकी रक्षा करता था। हे राजन्! विवाहका समय उपस्थित होनेपर मैंने योग्य कन्याके सङ्ग उनका विवाह किया। उस विवाहके विषयमें मैंने जो अनेक राजाओंको पराजित किया था; उसे तुमने कई बार सुना है। अनन्तर जब मैं परशुरामके साथ द्वन्द्व युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुआ था, तब सब प्रजा भयसे विकल होकर विचित्रवीर्य्यको दूसरे स्थानमें ले गई। वह बुद्धिहीन भ्राता स्त्रीके सङ्गमें अत्यन्त ही आसक्त होकर यक्ष्मा रोगसे मर गया। इस प्रकारसे कुरुराज्य राजासे रहित होने पर इन्द्र जल वर्षा करनेसे विरत हुए; तब सम्पूर्ण प्रजा भय और क्षुधासे पीड़ित होकर मेरे निकट आई। सब प्रजा इकट्ठी होकर मुझसे यह वचन कहने लगी, "हे शान्तनु-नन्दन भीष्म! राज्यके राजासे सूना रहनेके कारण तुम्हारी सम्पूर्ण प्रजा

नष्ट-प्राय हो रही हैं ; इससे हमलोगोंके कल्याणके निमित्त इस समय तुम राज्यके भारको ग्रहण करो! तुम्हारे राज्यभारको ग्रहण करनेसे हम लोगोंका मङ्गल होगा और इन्द्र जलकी वर्षा करेंगे। हे गङ्गानन्दन! महाघोर विपदमें पड़कर सम्पूर्ण प्रजा नष्ट हो रही है; जो सब पुरुष अबतक जीवित हैं उन्हीं के उबारनेके निमित्त आप राज्यके भारको ग्रहण कीजिये। हे पुरुषसिंह! इस समय विना तुम्हारी कृपाके हम लोगोंको रक्षा नहीं हो सकती। इससे सब प्रजाके ऊपर कृपा कर तुम राज्य ग्रहण करके प्रजाका पालन करो, तुम्हारे जीवित रहते ही जिसमें सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रजाका नाश न हो जावे।" प्रजा लोगोंसे इस प्रकारके अनेक दीन वचनको सुनने पर भी मेरा स्थिर चित्त तनिक भी विचलित नहीं हुआ, साधुपुरुषोंके चरित और सदाचारको स्मरण करके मैं अपनी पहिली प्रतिज्ञाकी रक्षा करनेहीमें तत्पर रहा। तब सम्पूर्ण पुरवासी और मेरी सौतेली माता सत्यवती, सेवक, पुरोहित और सब शास्त्रोंके जानने वाले ब्राह्मण लोग भी अत्यन्त दुःखित होके मुझको राज्यपद ग्रहण करनेके निमित्त बहुत ही अनुरोध करने लगे। हे महाबुद्धिमान्! हम लोगोंके हितके निमित्त तुम राजसिंहासन पर बैठो। तुम्हारे विद्यमान रहने पर भी तुम्हारे पितामह प्रतीप महाराजके रक्षित इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका विनाश हो रहा है, यह बहुत ही दुःखका विषय है।

उन लोगोंके इस वचनको सुनकर मैंने अत्यन्त दुःखित और शङ्कित होके हाथ जोड़कर उनसे निवेदन किया ; मैंने पिताके गौरव और कुलकी रक्षाके निमित्त राज्य-रहित होकर ब्रह्मचर्य्यव्रत करनेकी प्रतिज्ञा की है; इससे अब इस समयमें राज्यके भारका कैसे ग्रहण कर सकता हूं? साधारणरूपसे सबसे ऐसा वचन कहके माताको भी यह वचन कहके शान्त किया ;—"हे माता! मैं तुम्हारे ही कारणसे इस प्रतिज्ञा पाशमें बंधा हुआ हूं, इससे तुम मुझे अब राज्य भारको ग्रहण करनेकी आज्ञा मत करो। हे माता! कुरुवंशमें विशेष करके शान्तनुके वीर्य्यसे उत्पन्न होकर मैं किस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाका भङ्ग कर सकता हूं? केवल तुम्हारे ही निमित्त जब मैंने ऐसी प्रतिज्ञा की है; तब तुम ही अब किस प्रकारसे उस प्रतिज्ञाको तोड़नेकी आज्ञा दे रही हो? हे माता! इससे तुम्हारा उपजीवी तथा सेवक होकर भी मैं इस आज्ञाको किसी भांतिसे नहीं पालन कर सकूंगा। हे राजन्! मैं माता और पुरवासियोंसे ऐसी विनती करके अन्तमें भ्रातृ-जायाके गर्भसे पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त महामुनि व्यासदेवसे प्रार्थना की; उसके निमित्त माताने भी उनसे बहुत अनुरोध किया था। हे भरत सत्तम! व्यासदेवने हमलोगोंकी प्रार्थनासे प्रसन्न होकर तीन पुत्र उत्पन्न किये। उनमेंसे तुम्हारे पिता धृतराष्ट्र अन्धे उत्पन्न हुए थे; इससे जेठे पुत्र होकर भी इन्द्रिय-विकारके कारण राजा न होसके। सब लोकोंमें विख्यात महात्मा पाण्डु राजा हुए थे। वह जब राजा हुए थे,तब उनके पुत्र अवश्य ही उस राज्यके पानेके अधिकारी हैं। हे पुत्र! इससे तुम निरर्थक झगड़ा मत बढ़ाओ; राज्यका आधा भाग पाण्डवोंको अवश्य प्रदान करो। विचारकर देखो तो सही, मेरे जीवित रहते कौन पुरुष राज्यपदको ग्रहण करनेमें समर्थ हो सकता है? इससे तुम मेरे वचन मत टालो। मैं सदा तुम लोगोंमें केवल शान्तिकी इच्छा करता हूं। तुममें और पाण्डवोंमें मेरी समान ही प्रीति है। मैंने तुमसे जैसा वचन कहा है, तुम्हारे माता पिता और विदुरका

भी यही मत है। हे तात। बूढ़ोंके वचनको अवश्य सुनना और मानना चाहिये, इससे तुम मेरे इन वचनोंमें कुछ भी शङ्का न करके अपने और इस सम्पूर्ण पृथ्वीके कल्याण-साधनके निमित्त यत्न करो; निरर्थक सबके नाश करनेमें प्रवृत्त होना किसी प्रकारसे उचित नहीं है।

१४७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्मके ऊपर कहे हुए वचनोंके समाप्त होनेपर बुद्धिमान् द्रोणाचार्य्य भी दुर्य्योधनको सम्बोधन करके सब राजाओंके सम्मुख हो उससे यह वचन बोले। हे तात! प्रतीपनन्दन शान्तनु जैसे कुलकी रक्षामें लगे हुए थे और उनके पुत्र देवव्रती भीष्मने कुल-रक्षाके निमित्त जैसे प्रतिज्ञा करके उसका निर्व्वाह किया है; वैसे ही सत्यवादी धर्म्मात्मा पाण्डु राजा भी कुरुकुलमें धर्म्म-धुरन्धर थे, वह समाधिनिष्ठ सत्यव्रतसे युक्त धर्म्मात्मा पाण्डु स्वयं राजा होनेपर भी अपने जेठे भाई धृतराष्ट्र और छोटे भाई विदुरको अपना राज्याधिकार समर्पण किया था। कुरुश्रेष्ठ राजा पाण्डु धृतराष्ट्रको सिंहासन पर बैठाकर अपनी दोनों रानियोंके सङ्ग वनको चले गये थे। तब पुरुषसिंह विदुर अपनी स्वाभाविक सरलतासे धृतराष्ट्रके समीप खड़े होकर सेवककी भांति हाथमें चंवर लेकर उनकी उपासना करने लगे; और सम्पूर्ण प्रजा राजा पाण्डुकी भांति नियमके अनुसार उनका सम्मान करने लगी। पराये देशको जीतनेवाले पाण्डुराज धृतराष्ट्र और विदुरके हाथमें राज्यका भार समर्पण करके सम्पूर्ण पृथ्वीमें घूमने लगे; उसके अनन्तर सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले विदुर खजानेका सञ्चय करने, दान देने और सेवकोंका प्रतिपालन करनेमें नियुक्त हुए। और शत्रुनाशन महा तेजस्वी भीष्म सन्धि-विग्रह आदि कार्य्योंको देखने और विचारने लगे। महाबलसे युक्त राजा धृतराष्ट्रके सिंहासनपर बैठनेपर महात्मा विदुर सदा उनके समीप उपस्थित रहते थे। हे प्रजानाथ! इससे तुम उसी धृतराष्ट्रके कुलमें उत्पन्न होकर क्यों कुलके नाश करनेमें प्रवृत्त होरहे हो, ऐसी नीच प्रवृत्ति त्यागकर तुम भाइयोंके सङ्ग मिलके उत्तम राज्यके भोगोंका भाग करो। हे राजसत्तम! युद्धसे डरके अथवा धनके लाभमें पड़के मैं तुमसे यह वचन नहीं कहता हूं। मैं भीष्मके दिये हुए अन्नका भागकर रहा हूं, तुम्हारे दिये हुए अन्नका नहीं। हे राजन्! तुम्हारे समीप जीवनके निमित्त अन्न ग्रहण करनेकी मेरी कभी भी अभिलाषा न होगी। हे शत्रुनाशन! तुम यह निश्चय समझ रक्खो भीष्म जिस ओर रहेंगे, मैं भी उसी ओर रहूंगा। इससे यदि मेरा मत ग्रहण करनेकी तुम्हें इच्छा होवे, तो भीष्म जैसा कहते हैं, तुम वैसा ही कार्य्य करो;—पाण्डु-पुत्रोंको राज्यका आधा भाग दे डालो। हे तात! मैंने तुम्हारे और उन लोगोंके आचार्य्यका कार्य्य समान ही किया है; इससे दोनों ओर मेरी समान ही प्रीति है। मुझे अश्वत्थामा जैसा प्रिय है, अर्ज्जुन भी वैसा ही प्यारा है। इससे अधिक बातोंके कहनेकी क्या आवश्यकता है; जहांपर धर्म्म रहता है, वहींपर जय होती है।

श्रीकृष्ण बोले, महा तेजस्वी द्रोणाचार्य्यके वचन समाप्त होनेपर सत्यवादी सब धर्म्मोंके जाननेवाले बुद्धिमान् विदुर शान्तनुनन्दन भीष्मका मुंह देखकर यह वचन कहने लगे। हे देवव्रती भीष्म! मैं जो कुछ कहता हूं, उसे एक बार तुम एकाग्र चित्तसे सुनो। तुमने जो इस नष्टप्राय कौरवकुलका फिरसे उद्धार किया है; उसी निमित्त क्या हम लोगोंके बारबार विलाप और आर्त्तनादपर उपेक्षा कर रहे हो?

निष्कलङ्क कुरुकुलमें यह दोष लगानेवाला दुर्य्योधन कौन है? ऐसा विनय-रहित पापी पुरुष कभी इस कुलके योग्य नहीं हो सकता। परन्तु क्या ही आश्चर्यका विषय है, कि तुम इस लोभी, मूर्ख, दुष्ट पुरुषकी बुद्धि फेर रहे हो। जो अधम पुरुष धर्म्म अर्थ जाननेवाले पिताका आसन ग्रहण कर रहा है; उसके निमित्त जो यह सम्पूर्ण कौरवोंके कुलका नाश होवेगा, इसमें क्या सन्देह है? हे महाराज! जिसमें कुलका नाश न होवे, उसके निमित्त तुम अब भी सब भांतिसे उपाय करो। तुमने मुझे, धृतराष्ट्र तथा और दूसरे पुरुषोंको चित्रमें लिखे पुतलोंकी भांति कर रक्खा है। हे महाबाहो! प्रजापति ब्रह्मा जैसे सृष्टिको रचकर फिर समयके अनुसार उसका संहार करते हैं, वैसा करना तुमको उचित नहीं है। तुमने स्वयं जिस कुलकी रक्षा की है, अकस्मात् उसका नाश होता देखकर भी चुपचाप न बैठे रहो। अवश्य ही भावी-संहारका समय उपस्थित हुआ जानकर यदि तुम्हारी बुद्धिमें भ्रम उपस्थित होता हो, तो तुम मुझे और धृतराष्ट्रको संग लेकर वनवासके निमित्त प्रस्थान करो और नहीं तो आज ही इस नीचबुद्धि दुष्ट दुर्य्योधनको बांधकर पाण्डवोंके रक्षित इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका शासन करो। हे राजशार्दूल! देखो, कुरु-पाण्डव तथा दूसरे सब राजाओंके नाश होनेका समय उपस्थित हुआ है; इससे अब भी प्रसन्न होकर कार्य्यका विधान करो।

विदुरके दीन वचनोंके समाप्त होनेपर कुलनाशके भयसे डरी हुई, सुबलराजपुत्री गान्धारी राजाओंके सम्मुख ही दुष्ट पापबुद्धि दुर्य्योधनको सम्बोधन करके क्रोधसे भरे हुए धर्म्म अर्थसे युक्त यह वचन बोली। अरे नीचबुद्धि! इस सभामें जो सब राजा, ब्रह्मर्षि तथा दूसरे सभासद लोग बैठे हैं, सब वे कोई सुनें, मैं तेरे अपराधकी बात वर्णन करती हूं; सेवकोंके सहित तूने कितने पापकर्म्मका अनुष्ठान किया है, उसकी सीमा नहीं हो सकती। अरे नीचबुद्धि दुर्य्योधन! कौरवोंका राज्य सदासे कुल परम्पराके क्रमसे चला आता है; यही हम लोगोंके कुलका क्रमगत धर्म्म है। अरे नीचकर्म्म करनेवाले पापी! तू दुष्टनीतिके वशमें होकर उस धर्म्मको त्यागकर सदाके कुरुराज्यका नाश करनेमें प्रवृत्त हो रहा है। रे दुर्य्योधन! बुद्धिमान् धृतराष्ट्र और उनके भाई दीर्घदर्शी विदुर ये हो राज्यपदपर प्रतिष्ठित थे, इस समय तू मोहमें पड़कर कुलकी मर्य्यादाको लांघकर क्यों राज्यको ग्रहण करनेकी अभिलाषा करता है? भीष्मके जीवित रहते राजा धृतराष्ट्र और महा बुद्धिमान् विदुर भी स्वाधीन नहीं हो सकते; परन्तु इन पुरुषसिंह महात्मा गङ्गानन्दन भीष्म ने धर्म्मकी पालन करनेके निमित्त राज्यकी इच्छा छोड़ दी है। इसी कारण इस सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य पाण्डुराजके हाथमें समर्पण किया गया था। इससे अब उनके पुत्रोंके सिवाय कौन सब राज्यके स्वामी हो सकते हैं? केवल पाण्डव लोग ही पुत्र पौत्र आदिके क्रमसे इस सम्पूर्ण राज्यका भाग करनेके अधिकारी हैं, और किसीका इसमें अधिकार नहीं है। अत्यन्त बुद्धि और पराक्रमसे युक्त सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले, कौरवोंमें मुख्य, देवव्रती, महात्मा, पितामह भीष्म जो वचन कहते हैं; उसे स्वीकार करके सब भांतिसे उसीके अनुसार कार्य्य करना हम लोगोंका परम धर्म्म है। अपने धर्म्मका पालन करते हुए पाण्डवोंको राज्य प्रदान करना उचित है। अन्धराज और विदुर भी महाव्रत करनेवाले भीष्मको आज्ञाके अनुसार मेरे कहे हुए वचनको पुष्ट करें; ऐसा करनेहीसे यथार्थ सुहृद और धर्म्मका कार्य्य सिद्ध होगा। महाराज धृतराष्ट्र और भीष्मसे सम्मानित होकर धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर न्यायसे इस

कुरुराज्यकी धर्म्मके अनुसार बहुत दिनतक शासन करें।

१४८ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे महाराज! गान्धारी की बात समाप्त होनेपर, राजा धृतराष्ट्र सब राजाओंके बीचमें दुर्य्योधनसे यह वचन कहने लगे। हे पुत्र! यदि पिताके ऊपर तुम्हारी भक्ति होवे, तो मैं जो वचन कहता हूं, तुम उसीका अनुष्ठान करो। हे भरतश्रेष्ठ! देखो पहिले प्रजानाथ सोम कौरवों के वंश बढ़ानेवाले हुए थे; नहुषपुत्र राजा ययाति सोमसे छठी पीढ़ीमें उत्पन्न हुए थे। उनके राजऋषियोंमें मुख्य पांचपुत्र थे; उनमें महातेजस्वी यदु सबसे बड़े थे, इससे वही सबके स्वामी हुए थे। हे तात! उनके छोटे पुत्रका नाम पुरु था, वही हम लोगोंके वंशके बढ़ानेवाले हुए थे; वृषपर्व्वराजाकी पुत्री शर्म्मिष्ठाके गर्भसे उनका जन्म हुआ था। यदु देवयानीके पुत्र और महा तेजस्वी शुक्राचार्य्यके दौहित्र थे; उसी महावीर पुरुषसे यदुवंशियोंके कुलकी उत्पत्ति हुई है। दुष्ट बुद्धिके वशमें होकर उन्होंने अपने बल और अभिमानसे सम्पूर्ण क्षत्रियोंको अपमानित किया और बलके घमण्डसे मोहित होकर पिताकी आज्ञा उल्लङ्घन की थी। उस महा पराक्रमी अत्यन्त तेजस्वी यदुने पिता और भाइयोंका अनादर करते हुए सम्पूर्ण पृथ्वीको वशमें करके हस्तिनापुरमें निवास किया था। हे पुत्र! नहुषनन्दन ययातिने अत्यन्त ही क्रुद्ध होकर उस नीचबुद्धि पुत्रको शाप दिया और राज्यसे भी पृथक् कर दिया। पुरुषसिंह ययातिके जो और तीन पुत्र बलके अभिमानमें भरे हुए यदुके अनुयायी हुए थे उन्हें भी राजा ययातिने क्रुद्ध होकर शाप दिया था। अनन्तर उन्होंने अपने छोटे पुत्र पुरुको राज्य दिया। पुरु अत्यन्त ही विनीत स्वभावसे युक्त और पिताके आज्ञाकारी थे। इससे छोटे होकर भी अपने स्वाभाविक गुणसे सबके स्वामी हुए। इससे विचार करके देखो, श्रेष्ठ होनेपर भी दुष्टता तथा नीचबुद्धिताके कारण जेष्ठ पुत्र पिताके राज्यसे पृथक् किया जाता है, और कनिष्ठपुत्र भी विद्या विनय आदि गुणोंसे युक्त होने पर राज्यपद पाता है।

ऐसा ही और एक प्रमाण है। हमारे प्रपितामह पृथ्वीनाथ प्रतीप सब धर्म्मोंके जाननेवाले और तीनों लोकोंमें विख्यात होकर धर्म्मके अनुसार राज्य-शासन करते थे। हे तात! उन राजसिंहके वीर्य्यसे महा यशस्वी तीन पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें देवापि बड़े, वाह्लिक दूसरे और हमारे पितामह शान्तनु तीसरे पुत्र थे। महा तेजस्वी देवापि कोढ़नाम कुष्ठ रोगसे अत्यन्त ही पीड़ित थे; क्या बालक, क्या बूढ़े सब ही देवापीके संग अन्तःकरणसे प्रीति करते थे। वह परम धर्म्मात्मा, सत्यवादी, पिताकी सेवासे युक्त, पुरवासी और सेनाके प्यारे, साधु पुरुषोंके सत्कार करनेवाले, विनीत स्वभावसे युक्त, सत्यप्रतिज्ञा करनेवाले सब प्राणियोंके हित-कार्य्यमें रत, पिता और ब्राह्मणोंकी आज्ञामें चलनेवाले पुरुष थे। और महात्मा वाह्लिक भी शान्तनुके प्रिय भ्राता थे। उन महातेजस्वी तीनों भाइयोंमें अत्यन्त ही प्रीति थी। समयके अनुसार राजसत्तम महाराज प्रतीपने जेठे पुत्रके राज्याभिषेकके निमित्त सब सामग्री इकट्ठी की; राज्याभिषेकके योग्य सब उत्तम वस्तुएं इकट्ठी हुईं; परन्तु ब्राह्मणोंने पुरवासियोंके सङ्ग मिलकर बाधा डाली और उन्हें इस कार्य्यसे निवारण किया। राजाने पुत्रके राज्याभिषेकके रुकनेसे दुःखित होकर बहुत ही शोक किया। इस प्रकारसे देवापी विनीतभाव, धर्म्मात्मा, सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले और प्रजाके प्रीति पात्र

होकर भी केवल चर्म्म-दोषके कारणसे राज्य नहीं प्राप्त कर सके। राजाका शरीर विकल होनेसे देवताओंकी प्रसन्नता नहीं होती ; इसी कारण ब्राह्मणोंने उन्हें राज्यके ग्रहण करनेसे निषेध किया था। शरीरसे पीड़ित देवापि-पुत्रके राज्यपद न मिलनेपर महाराज प्रतीप दुःखित होकर वनको चले गये। हे राजन्! महाराज बाह्लिक अपने मातामहका राज्य पाकर भाइयोंको त्यागके पहिलेहीसे मातामह (नाना) के यहां रहते थे। इससे पिताके स्वर्ग-लोक गमन करनेपर शान्तनुने ही बाह्लिकको आज्ञाके अनुसार राज्यका भार ग्रहण किया। हे भारत! बाह्लिकने जैसे शान्तनुको अपना राज्य प्रदान किया था ; वैसे ही बुद्धिमान् पाण्डुने भी मुझको अपना राज्य समर्पण किया था। मैंने जेठ पुत्र होकर भी नेत्र न रहनेके कारण राज्यपदको नहीं पाया था ; इससे छोटे पुत्र होकर भी पाण्डुराज ही कुरु-राज्यके अधिकारी हुए थे। हे शत्रुनाशन! इससे अब राजा पाण्डुके न रहनेपर उनके पुत्रोंके अतिरिक्त और दूसरा कौन राज्यका अधिकारी हो सकता है? मैं जिस राज्यका भागी नहीं होसका ; उस राज्यकी तुम क्यों अभिलाषा करते हो? तुम राजाके पुत्र भी नहीं हो और न राज्यके अधिकारी ही हो। केवल मोह और लोभमें पड़ कर दूसरेका राज्य हरण करनेकी अभिलाषा करते हो। महात्मा युधिष्ठिर राजाके पुत्र हैं, इससे यह राज्य भी उन्हींको न्यायके अनुसार मिलना उचित है ; वही धर्म्मात्मा इस कुरुकुलका पालन-पोषण और शासन करनेवाले हैं। राजाके विषयमें क्षमा, सहन-शीलता, दम, दया, विनय, सत्य-निष्ठा, शास्त्रज्ञान, अप्रमाद, सब प्राणियोंके ऊपर कृपा, और नियमके अनुसार सबका शासन करना आदि जो सब गुण होने उचित हैं, सब ही युधिष्ठिरमें विद्यमान हैं। वह सत्यवादी सदा सावधान, भाइयोंका मान करनेवाले, प्रजाओंकी प्रीतिके पात्र, मित्रोंके ऊपर दया करनेवाले, जितेन्द्रिय और साधु पुरुषोंका पालन करनेवाले हैं। अरे विनय रहित दुर्य्योधन! तू राजाका पुत्र न होकर विशेष करके नीच पुरुषोंके चरित्रसे युक्त, महालोभी, और बन्धु-बान्धवोंकी बुराई करनेमें सदा तत्पर होकर क्रमसे आते हुए इस पाण्ड-वोंके राज्यको कैसे छीन सकेगा? यदि भाइ-योंके सहित कुछ दिनतक तुम्हारी जीनेकी इच्छा होवे, तो इस समय भी मोह और लोभ छोड़ कर पाण्डवोंको वाहन और सब वस्तु-ओंके सहित राज्यका आधा भाग प्रदान कर।

१४९ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, इसी प्रकारसे भीष्म, द्रोण, विदुर, गान्धारी और राजा धृतराष्ट्रने अपने अपने उपदेश-वचनोंको दुर्य्योधनसे कहा ; परन्तु उसने किसीकी बात ग्रहण न की। उसने सबकी बातोंका अनादर करके क्रोध पूर्व्वक सभासे प्रस्थान किया। जो सब राजा लोग उसके निमित्त अपने प्राणतक देनेमें भी उद्यत थे, वे भी उठकर उसके पीछे पीछे चले। दुर्य्योधनने इन मन्द-बुद्धि राजाओंको बारम्बार यही आज्ञा दी ; आज पुष्य नक्षत्र है, इससे आज ही तुम लोग कुरुक्षेत्रमें गमन करो। अनन्तर उन सब राजाओंने कालके वशमें होकर भीष्मको सेनापति बनाकर अत्यन्त हर्षके सहित अपनी सेनाके सहित युद्धके निमित्त यात्रा की। हे महाराज! कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी सेना युद्धके निमित्त इकट्ठी होकर तालचिन्हकी ध्वजासे युक्त महावीर भीष्मको सबके आगे करके विराजमान है। इससे अब इस समयमें जैसा योग्य और कर्त्तव्य कार्य्य करना स्थिर हो, आप उसका ही विधान कीजिये। हे भारत! मेरे जानेपर कौरवोंकी

सभामें जो कुछ हुआ था ;—भीष्म, द्रोण, विदुर, गान्धारी और राजा धृतराष्ट्रने मेरे सम्मुख दुर्य्योधनसे जो कुछ वचन कहे थे, वे सब मैंने आपसे कह दिये। हे राजन्! जिससे आप लोगोंमें भ्रातृभाव स्थापित होवे,—ऐसे प्रसिद्ध-वंशका नाश न होवे, वही समझकर मैंने पहिले सामवादका प्रयोग किया था ; परन्तु मैंने देखा, कि सामवादका ग्रहण नहीं होता है ; तब भेदके प्रयोग करनेमें बाध्य हुआ और आपके दैवी तथा मानषी सब बड़े बड़े कर्म्मोंको कह सुनाया। हे भारत! दुर्य्योधनने जब मेरे शान्तिके निमित्त कहे हुए वचनोंका अनादर किया, तबमैंने सब राजाओंमें भेद उत्पन्न करनेके निमित्त तनिक भी सङ्कोच नहीं किया और महा-घोर अमानुषी कर्म्म दिखानेमें भी मैंने कुछ त्रुटि न की। इकट्ठे हुए राजाओंकी बारम्बार वचन और युक्तिसे भेदित और निन्दा करके दुर्य्योधनको तुनके समान अनादर करके, कर्णको बार बार भय दिखाके, धृतराष्ट्र-पुत्रोंके जुएके खेलकी जड़ पापी शकुनिकी अत्यन्त ही निन्दा करके अन्तमें मैंने फिर शान्तिके निमित्त प्रस्ताव किया। कुरुवंशके मङ्गल और कार्य्यकी सिद्धिके निमित्त मैंने दुर्य्योधनको राज्य देनेकी बात भी कही। मैंने कहा "वह शूरवीर तेजस्वी पाण्डव मान और प्रभुताका त्यागकर तुम्हीको राज्य समर्पण करके धृतराष्ट्र, भीष्म और विदुरकी आज्ञाके अनुसार चलेंगे। तुम्हारे हितके निमित्त धृतराष्ट्र, भीष्म और विदुर जो कुछ कहें, वही होवे ; तुम्ही राज्यके अधि-कारी बनो ; केवल पांच गांव पाण्डवोंको प्रदान करो। हे राजसत्तम! वे लोग चाहे कैसे ही होवें, परन्तु तुम्हारे पिताको उनका पालन करना योग्य है। ऐसी विनती की बातें कहनेपर भी वह दुष्टात्मा किसी प्रकारसे राज्यका अंश देनेमें सम्मत नहीं हुआ। हे राजन्! इससे दुष्ट और पापीके विषयमें चौथे उपाय दण्डके अतिरिक्त और कुछ भी मैं नहीं देखता हूं। उसकी सहायताके निमित्त बुद्धिहीन राजा लोग भी कुरुक्षेत्रमें गये हैं। हे पाण्डव! कौरवोंकी सभामें जो कुछ हुआ था ; वे सब बातें मैंने तुम्हारे निकट वर्णन की। विना युद्धके दुर्य्योधन कभी तुमको राज्यका भाग न देगा। वह सब लोगोंके सहित जो मृत्युके वशमें होकर सबके नाश करनेका कारण हुआ है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१५० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णचन्द्रके वचन सुनकर धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिर उनके सम्मुख हो अपने भाइयोंसे बोले, हे पुरुषसिंहो! कौरवोंकी सभामें जो कुछ हुआ था, वह सब तुम लोगोंने सुना ; और श्रीकृष्ण-के वचन भी निश्चित कर लिये। इससे अब इस समय मेरी सेनाका विभाग होना उचित है। यह सात अक्षौहिणी सेना विजयके निमित्त इकट्ठी हुई है ; जो लोकमें विख्यात सात महारथी इसके नायक होंगे, उनका नाम सुनो। द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी, चेकितान और भीमसेन,—यही सात वीर पुरुष इस सेनाके नायक होंगे। ये सब लोग प्राणकी आशा त्याग करके युद्धके निमित्त उत्साह करते हैं, ये सब ही वेदको जाननेवाले शूरवीर, उत्तम—चरित्र और व्रतसे युक्त, लज्जा-शील, नीतिसे युक्त, युद्धविद्याको जाननेवाले, बाण आदि अस्त्र शस्त्रोंके चलानेमें निपुण, और सब ही सब प्रकारके अस्त्रोंको धारण करनेवाले वीर योद्धा हैं। परन्तु हे कुरुनन्दन सहदेव! जो पुरुष इन सात वीरोंका नायक होसके, और संग्राममें बाणरूपी शिखासे युक्त अग्निके समान तेजस्वी भीष्मका सामना कर सके ; सेनाके विभागको जाननेवाले ऐसे किसी योग्य पुरुषको तुम निश्चित करो।

सहदेव बोले, जिस धर्मात्मा पुरुषका आसरा करके हम लोग अपने पैतृक राज्यके अंशको पानेकी अभिलाषा करते हैं, वही सब लक्षणोंसे युक्त, सुख-दुःखको समान जाननेवाले सब शास्त्र और युद्धविद्यामें निपुण बलवान् मत्स्यराज विराट युद्धमें भीष्म तथा दूसरे महारथ वीरोंका सामना कर सकेंगे।

वैशम्पायन मुनि बोले, सहदेवके ऐसा कहनेपर पुरुषसिंह नकुल यह वचन बोले, जो अवस्था, शास्त्र, धीरज, कुल, और विनयसे युक्त लज्जाशील, बलसे युक्त,लक्ष्मीवान्, सब शास्त्रोंके जाननेवाले,पराक्रमी सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले हैं; जिन्होंने भरद्वाजनन्दन महात्मा द्रोणाचार्य्यसे शस्त्रशिक्षा सीखी है, जो महाबली पुरुष सदा भीष्म और द्रोणाचार्य्यसे युद्ध करनेकी अभिलाषा करते हैं; राजाओंमें अग्रणी और प्रशंसाके योग्य जो सेनापति पुत्र पौत्रके सहित सौ शाखाओंसे युक्त वृक्षकी भांति मालूम पड़ते हैं; जिस शत्रुनाशन पृथ्वीनाथने क्रोधमें भरकर द्रोणाचार्य्यके वध करनेके निमित्त स्त्रीके सहित महाघोर तपस्या की थी और जो महाराज ससुर होकर भी पिताके समान हम लोगोंका पालन करते हैं; वही द्रुपदराज हम लोगोंके सेना नायक बनें। मेरी समझमें वह भीष्म और द्रोणाचार्य्यके सम्मुख युद्ध कर सकेंगे; क्योंकि वह सब दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले, प्रतापी और द्रोणाचार्य्यके सखा हैं।

माद्रीपुत्रोंके अपने अपने अभिप्राय प्रकट करनेपर कुरुनन्दन इन्द्रपुत्र अर्जुन बोले; अग्निकी शिखाके समान वर्णसे युक्त यह जो महाबाहु पुरुष तपस्याके प्रभाव और ऋषियोंके सन्तोषसे उत्पन्न हुआ है, धनुष, कवच, खड्ग, और दिव्य घोड़ोंके रथसे युक्त तथा सावधान होकर रथके शब्दके सहित बादलके समान गर्जते हुए अग्निकुण्डसे उत्पन्न हुआ है; जिसकी मूर्त्ति, भुजा, कन्धा और गर्ज्जनका शब्द सिंहके समान है; जिसकी दोनों भौं,दांत, मुख और कपोलके ऊपरका हिस्सा भुजा, कन्धोंके मोढ़े, बड़ी आंख और पांव अत्यन्त सुन्दर हैं; जो महाबली, महा तेजस्वी, प्रतिष्ठित, रोगरहित, सब शस्त्रोंके जाननेवाले, मतवारे हाथीके समान अत्यन्त बलसे युक्त सत्यवादी, जितेन्द्रिय पुरुष द्रोणाचार्य्यके वधके निमित्त उत्पन्न हुआ है, मेरे विचारमें वही धृष्टद्युम्न भीष्मके वज्र समान खन करनेवाले, महा विषधर सर्पके समान मुखवाले, वेगमें यमदूतके समान, युद्धमें परशुरामको भी विकल करनेवाले और वज्रके समान महा कठोर उनके सब बाणोंको सह सकेंगे। हे महाराज! मुझे यह निश्चय बोध होता है, कि मैं एक मात्र धृष्टद्युम्नके आततायी और ऐसे किसी पुरुषको भी नहीं देखता हूं; जो युद्धमें महाव्रती भीष्मके बाणोंको सहनेमें समर्थ हो सके। इससे यही अभेद कवच धारण करनेवाला पुरुषसिंह यूथपति मतवारे हाथीके समान हम लोगोंका सेनापति बनाया जावे; यही मेरा मत है।

भीमसेन बोले, हे राजेन्द्र! सिद्ध और ऋषियोंने जिसको भीष्मके वधके निमित्त उत्पन्न हुआ वर्णन किया है। मनुष्य लोग संग्रामभूमिमें दिव्य अस्त्रोंके चलानेवाले जिस पुरुषसिंहके महात्माको रामके समान देखेंगे; युद्धमें सावधान, रथमें स्थित उस द्रुपदपुत्र शिखण्डीको शस्त्रसे मार सके; ऐसा कोई पुरुष मैं नहीं देखता हूं। हे महाराज! बल और पराक्रमसे युक्त शिखण्डीके अतिरिक्त और कोई पुरुष भी द्वैरथ युद्धमें महाव्रत करनेवाले भीष्मको नहीं मार सकता। इससे मेरे विचारमें वही शिखण्डी हम लोगोंका सेनापति बनाया जावे।

युधिष्ठिर बोले, हे तात! धर्मात्मा कृष्ण इस सम्पूर्ण जगत्‌के सार असार बलाबल और

अभिप्रायको जानते हैं। इससे दाशार्ह कृष्ण जिसको कहेंगे, सब शास्त्रोंका जाननेवाला होवे अथवा न होवे, बालक हो, चाहे बूढ़ा हो; वह निश्चय हमारा सेनापति बनाया जावेगा। हे तात! कृष्ण ही हम लोगोंके जय और पराजयके मूल हैं; हम लोगोंका प्राण, राज्य, भले-बुरे कर्म्म, सुख-दुःख इनहीमें प्रतिष्ठित हैं; हम लोगोंके यही धाता और विधाता हैं; इससे हमलोगोंको सिद्धि भी इनही से प्रतिष्ठित है, दाशार्ह कृष्ण जिसको कहेंगे,वही हमारा सेनापति बनेगा। अब रात्रिका समय उपस्थित हुआ चाहता है, इसी समय बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ कृष्ण उस पुरुषका नाम वर्णन करें; उसके अनन्तर हम लोग उस पुरुषके वशवर्त्ती होकर सेनापति, शस्त्र तथा सेनाके सब मङ्गल कर्म्मोंको सिद्ध करके युद्धके निमित्त यात्रा करेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,बुद्धिमान् धर्म्मराजके वचन सुनकर पुण्डरीकाक्ष जनार्द्दन कृष्ण अर्जुनके मुखको देखकर उनके मतको अनुमोदन करके युधिष्ठिरसे बोले, महाराज! तुमने जिन सब पराक्रमी महारथ योद्धाओंको अपनी सेनाका नायक बनाया है; उसमें मैं भी सहमत हूं; क्योंकि ये सब लोग तुम्हारे शत्रुओंके संहार करनेमें समर्थ हैं। लोभसे युक्त पापी धृतराष्ट्र-पुत्रोंकी बात ही क्या है; ये लोग युद्धमें इन्द्रको भी भयभीत कर सकते हैं। हे महाबाहो! तुम्हारे प्रियकार्य्यके साधन करनेके निमित्त मैंने वहांपर भी बहुत यत्न किया है; इससे धर्म्मके समीपमें भी मैं ऋणसे रहित होगया हूं; दोष देनेवाला कोई पुरुष भी हम लोगोंकी निन्दा न कर सकेगा। नीच-बुद्धि मूर्ख दुर्य्योधन अपनेको सब शस्त्रोंसे युक्त समझता है और आतुर होकर भी अपनेको बलवान् समझ रहा है; इससे शीघ्र ही सेना सजाकर युद्धके निमित्त यात्रा कीजिये; क्योंकि विना मरे वह किसी प्रकारसे भी तुम्हारे वशमें न होगा। अर्जुन, क्रोधी भीमसेन, युयुधान, शत्रुनाशन धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु, द्रौपदीके पांचो पुत्र, विराट, द्रुपद और सेनाके स्वामी दूसरे सब राजाओंको देखकर धृतराष्ट्रके पुत्र लोग कभी सम्मुखमें न खड़े हो सकेंगे; हम लोगोंकी यह तेजस्विनी बलवती सेना युद्धमें अवश्य ही दुर्य्योधनकी सेनाका नाश करेगी।

कृष्णके ऐसा कहने पर सम्पूर्ण राजा लोग अत्यन्त ही आनन्दित हुए। सबके हर्षयुक्त होनेपर उन लोगोंके बीच बड़ी भारी हर्षसे भरी हुई ध्वनि सुनाई पड़ी। आतुर होकर इधर उधर दौड़नेवाले कहने लगे;— "रथ चलाओ, सेना सजाओ" पुरुषोंका सिंहनाद और हाथी घोड़ोंका शब्द होने लगा, शङ्ख, भेरी, नगाड़े आदि जुझाऊ बाजोंके बजनेसे बड़ा भारी शब्द उत्पन्न हुआ। युद्धके निमित्त प्रस्थान करनेवाली वह पाण्डवोंकी सेना जलसे भरी हुई गङ्गाकी भांति दिखाई देने लगी। सेनाके अगाड़ी भीमसेन, कवचधारी नकुल, सहदेव, अभिमन्यु, द्रौपदीके पांचो पुत्र और धृष्टद्युम्न हुए और प्रभद्रक तथा पाञ्चाल योद्धा लोग भीमसेनको आगे करके चले। अनन्तर जैसे अमावस और पूर्णमासीको समुद्रकी तरङ्ग उठती है, वैसे ही उस प्रस्थान करनेवाली सेनाके महा कोलाहलसे युक्त शब्द आकाशमण्डलका स्पर्श करने लगा। शत्रुओंके बलको नाश करनेवाले सब वीर योद्धा लोग अत्यन्त ही प्रसन्न थे। उन लोगोंके बीचमें राजा युधिष्ठिरने शकट, वस्त्र आदि, सवारी, खजाना, गज, यन्त्र, आयुर्वेदको जाननेवाले अस्त्राचिकित्सक, परिवारके लोग, और असार, निर्बल और कृश सेनाका संग्रह करके गमन किया। द्रुपदनन्दिनी सत्यवादिनी द्रौपदी दास दासियोंसे युक्त होकर स्त्रियोंके सङ्ग विराट नगरको लौट आई। हे राजन्! पाण्डुनन्दन युधिष्ठिरने एक स्थानमें रहनेवाली और अनेक

स्थानोंमें गमन करनेवाली तथा रक्षा करनेवाली सेनासे धन और स्त्रियोंकी रक्षाका विधान किया तथा ब्राह्मणोंको गऊ, सुवर्ण, रत्न आदि दान करते और स्तुति सुनते हुए सुवर्ण और मणियोंसे भूषित रथपर चढ़के सेनाके सङ्ग चले। केकय-देशीय पांचो राजपुत्र, धृष्टकेतु, काशिराजपुत्र, श्रेणिमान्, वसुदान, अपराजित, शिखण्डी आदि वीर लोग राजा युधिष्ठिरको चारों ओरसे घेरकर उनका अनुगमन करते हुए चले। विराट, धृष्टद्युम्न, सुधर्म्मा, कुन्तिभोज, और धृष्टद्युम्नके पुत्र लोग चालीस हजार रथ, दो लाख घोड़े साठ हजार हाथी और दो लाख पैदल लेकर पोछे पोछे चले। अनाधृष्टि, चेकितान, चेदिराज और सात्यकी ये लोग अर्जुनके सहित कृष्णको-घेरकर चले। इस प्रकारसे व्यूह बनाकर शत्रुनाशन पाण्डव लोग कुरुक्षेत्रमें पहुंचकर गर्ज्जनेवाले वृषभोंके समूहकी भांति दिखाई देने लगे। वह शत्रुनाशन पुरुषसिंह कुरुक्षेत्रमें जाकर अपने अपने शङ्ख बजाने लगे और कृष्ण तथा अर्ज्जुनने भी अपने अपने शङ्ख बजाये। वज्रके समान पाञ्चजन्य शङ्खका शब्द सुनकर सब सैनिक-पुरुषोंके रोवें खड़े होगये। इसके अनन्तर सम्पूर्ण तेजस्वियोंके सिंहनादका शब्द शङ्ख नगाड़े आदि जुझाऊ बाजोंका शब्द समुद्रसे गर्जने लगा। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने तृण और काठसे युक्त समतल और सुन्दर भूमिमें अपनी सेना ठहरायी; महा बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरने श्मशान, देवालय, महर्षियोंके आश्रम, तीर्थ और मन्दिरोंको छोड़कर मनको हरनेवाली सुन्दर उपजाऊ और पवित्रभूमिमें अपनी सेनाका निवास स्थान ठहराया। इसके अनन्तर वाहन आदिको सुखसे विश्राम कराकर फिर उठके सैकड़ों, सहस्रों, राजाओंके सहित प्रस्थान किया। इधर अर्ज्जुनके सहित कृष्ण दुर्य्योधनके सैकड़ों सैनिक पुरुषोंको हटाते हुए चारों ओर घूमने लगे। द्रुपदनन्दन धृष्टद्युम्न, सात्यकी, महा पराक्रमी युयुधान, इन लोगोंने शिविरका स्थान निश्चित किया। हे भारत! श्रीकृष्णचन्द्रने कुरुक्षेत्रमें हिरण्वती नाम्नी सुन्दर जलसे भरी हुई कङ्कड़ और कीचड़से रहित पवित्र तीर्थको देखकर वहां पर जलके निमित्त परिखा स्थापित की। और उसकी रक्षाके निमित्त अदृश्य रूपसे प्रबन्ध कर दिया। महात्मा पाण्डवोंके शिविर बननेके विषयमें जैसा नियम था, श्रीकृष्णने राजाओंके निमित्त वैसा ही शिविर तैयार करवाया। हे राजेन्द्र! वहांपर राजाओंके लकड़ी और अन्न पानसे युक्त सैकड़ों सहस्रों महामूल्यवान् सब शिविर विमानकी भांति पृथ्वीपर दिखाई देने लगे। वहांपर नियमित वेतनके पानेवाले सैकड़ों शिल्पी और शास्त्रको जाननेवाले वैद्य उपस्थित थे। राजा युधिष्ठिर सब शिविरोंमें महा यत्नसे ढेरके ढेर धनुष, धनुषके रोदे, वर्म्म,शस्त्र, तूणीर, बाण, नाराच, तोमर, परशु, और मधु, घृत, जल, भक्षण करनेके योग्य पशु, उत्तम तृण, अग्नि आदि सब आवश्यकीय वस्तुओंको स्थापित किया। वहांपर लोहेके वर्म्मसे युक्त घण्टे और घौंसेके सहित सैकड़ों, सहस्रों हाथी पर्व्वतके समान दिखाई देने लगे। हे भारत! पाण्डवोंको कुरुक्षेत्रमें पहुंचा हुआ जानकर मित्र राजा लोग बल और सेनासे युक्त होकर उसी स्थानपर गये। ब्रह्मचर्य्यके अनुष्ठान और सोमपान करनेवाले तथा ब्राह्मणोंको बहुत दक्षिणा देनेवाले राजा लोग पाण्डवोंके विजयके निमित्त वहांपर जा पहुंचे।

१५१ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुनि! श्रीकृष्ण, पुत्रके सहित विराट, द्रुपद, केकय, और यदुवंशी आदि सैकड़ों राजाओंसे युक्त,

देवताओंमें इन्द्रके समान महारथ वीरोंसे रक्षित,राजा युधिष्ठिरका कुरुक्षेत्रमें पहुंचा हुआ सुनकर राजा दुर्य्योधनने क्या कार्य्य किया था? उस महा सेनाके कुरुक्षेत्रमें उपस्थित होनेपर जो जो वृत्तान्त हुआ था ; वह विस्तारपूर्व्वक मुझसे कहिये। पाण्डवलोग श्रीकृष्ण, विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी और अत्यन्त ही पराक्रमी महारथ वीरोंसे युक्त होकर देवताओंके सहित इन्द्रको भी भयभीत कर सकते थे। हे महामुनि! इससे कौरव पाण्डवोंमें जो जो वृत्तान्त हुआ था, वह तुम विस्तारपूर्व्वक वर्णन करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णके कुरु-सभासे चले जानेपर राजा दुर्य्योधन कर्ण, दुःशासन और शकुनिसे यह वचन बोले, "हे राजेन्द्र! कृष्ण जब यहांसे निराश होकर पाण्डवोंके समीपमें गये हैं, तब वह अवश्य ही क्रोधमें भरके पाण्डवोंको उत्तेजित करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पाण्डवोंके सहित हम लोगोंका युद्ध होवे,यह कृष्णको अत्यन्त ही अभिलाषा है। भीम-अर्ज्जुन भी कृष्णके मतमें सम्मत हैं; और युधिष्ठिर,भीम अर्ज्जुनके अत्यन्त ही वशमें हैं। पहिले वह भाइयोंके सहित मुझसे अपमानित किये गये थे; मैंने जिनके सङ्ग शत्रुता की थी, वह विराट और द्रुपद भी कृष्णके वशमें होकर युधिष्ठिरकी सेनाके नायक हुए हैं; इससे अब रोवें खड़े करनेवाला महाघोर संग्राम उपस्थित होगा, इससे तुम लोग आलस्यको छोड़कर युद्धके योग्य सब वस्तुओंको इकट्ठी करो। कुरुक्षेत्रमें बहुत दूरतक शत्रुओंसे पृथक, अन्न,जल, काठ, बहुतसी भोजन करनेकी वस्तु,बहुतसे शस्त्र और ध्वजा पताकासे युक्त सैकड़ों सहस्रों शिविर तैयार कराओ। नगरके बाहर सेनाके गमन करने योग्य सब मार्गोंको समान तथा साफ करा दो। आज ही ढिंढोरा दे दो कि कल्ह युद्धके निमित्त यात्रा की जायगी।" वह सब राजा लोग प्रसन्न होकर बोले, "ऐसा ही होगा।" ऐसी प्रतिज्ञा करके दूसरे दिन राजाओंके निवासके निमित्त सब कार्य्यको समाप्त किया। अनन्तर इकट्ठे हुए सब राजा लोग राज-शासनको सुनकर उठे; मणि सुवर्णसे भूषित चन्दन-चर्चित परिघके समान अपनी भुजाको धीरे धीरे स्पर्श करने लगे और अपने कर-कमलोंसे वस्त्र आभूषण पहिरने लगे। मुख्य मुख्य रथी लोग रथ, घुड़सवार घोड़े और हाथियोंको शिक्षामें निपुण पुरुष हाथियोंको सजाने लगे। उसके अनन्तर वीरोंने सुवर्ण-भूषित वर्म्म और सब शस्त्रोंको धारण किया। पैदल चलनेवाले वीरोंने भी अपने शरीरपर कई प्रकारके शस्त्र और कवचोंको धारण किया। हे भारत! अत्यन्त ही प्रसन्न चित्तसे वीर पुरुषोंके इकट्ठे होनेपर वह नगर उत्सवके समयकी भांति मालूम होने लगा। हे राजन्! उस समय वीर योद्धारूपी चन्द्रमाके उदय होनेपर कुरुराजरूपी समुद्र यथार्थमें समुद्रकी भांति दिखाई देने लगा। उस महा समुद्रसे सब सेना जल और तरङ्ग रूप हुई; रथ,घोड़े और हाथी—मगर,मच्छ और घड़ियाल रूपसे दीख पड़ते थे। शंख, भेरी और नगाड़े तथा घोषोंका शब्द समुद्रकी लहरके समान बोध होने लगा; खजाना रत्नके स्थानमें बोध होता था; विचित्र भूषण वर्म्म तथा सब शस्त्र समुद्रके फेनके समान दिखाई देने लगे; ऊंचे मन्दिरोंका समूह समुद्रके तीर पर रहनेवाले पर्व्वत और उस सेनाके चलनेका मार्ग ह्रदरूपी दीखता था।

१५२ अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिरने श्रीकृष्णचन्द्रके पहिले कहे हुए वचनोंको स्मरण करके फिर उनसे पूछा; हे कृष्ण! मूर्ख दुर्य्यो-

धनने किस प्रकारसे इस वचनको कहा था ? और इस उपस्थित समयमें कैसे कार्य्यका अनुष्ठान करनेसे मैं धर्म्म और अर्थसे पतित न होऊंगा। हे महाबाहो ! तुम दुर्य्योधन, कर्ण, शकुनि और भाइयोंके सहित मेरे अभिप्रायको भी जानते हो। हे महाबुद्धिमन् ! तुमने विदुर, भीष्म और माता कुन्ती-देवीके अभिप्रायको अच्छे प्रकारसे सुना है। इससे तुम उन सब बातोंको भली भांतिसे विचार करके जिस कार्य्यके करनेसे मेरा मङ्गल होवे, वैसी ही युक्ति मुझसे वर्णन करो।

श्रीकृष्णचन्द्र राजा युधिष्ठिरके धर्म्म और अर्थसे भरे हुए ऐसे वचन सुनकर बादल और नगाड़ेके समान गम्भीर शब्दसे यह वचन बोले, तुमने जो धर्म्म अर्थसे युक्त हित वचनोंको कहा था, नीच बुद्धि दुर्य्योधनने उनको नहीं ग्रहण किया उस दुष्टात्माने भीष्म, विदुर मेरे तथा किसीके वचनोंको भी नहीं स्वीकार किया। वह सबकी बातोंको उल्लङ्घन करके इच्छाके अनुसार कार्य्य करता है। वह दुष्टबुद्धि न धर्म्मकी इच्छा करता है और न यशकी अभिलाषा करता है; वह कर्म्मका आसरा करके मैंने "सबको जीत लिया" अपने मनमें ऐसा ही समझता है। उस पापबुद्धि दुर्य्योधनने मुझको भी कैद करनेकी आज्ञा दी थी; परन्तु उसकी वह अभिलाषा सफल नहीं हुई। उस विषयमें भीष्म, द्रोण आदि किसीने भी युक्तिसे पूरित वचनोंको नहीं कहा था। एक मात्र विदुरके अतिरिक्त और सब लोग उसके अनुगामी हुए थे। नीच बुद्धि शकुनि, कर्ण और दुःशासनने तुम्हारे विषयमें अनेक प्रकारके बुरे वचनोंको कहा था। दुर्य्योधनने जिन सब वचनोंको कहा है, उनके वर्णन करनेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं हैं; उसका संक्षेप मर्म्म यही है, कि वह तुमको उचित रीतिसे राज्य न देगा और न तुम्हारे संग उत्तम व्यवहार करेगा। इससे तुम्हारी सेनामें इकट्ठे हुए सब राजाओंमें जो कुछ पाप तथा बुरे कर्म्म नहीं हुए हैं; वह सब उस नीच बुद्धि दुर्य्योधनमें विद्यमान हैं। हम लोग भी लक्ष्मीको त्याग कर किसी प्रकार भी कौरवोंके संग शान्ति नहीं स्थापित कर सकते; इससे अब ऐसी अवस्थामें युद्ध ही करना उचित है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत ! श्रीकृष्णचन्द्रके इस वचनको सुनकर सम्पूर्ण राजा लोग कुछ भी न कहके महाराज युधिष्ठिरके मुंहकी ओर देखने लगे। तब राजा युधिष्ठिरने सब राजाओंके अभिप्रायको जानकर भीम, अर्ज्जुन और नकुल, सहदेवके संग विचार करके युद्धकी तैयारी करनेकी आज्ञा दी। अनन्तर पाण्डवोंकी सेनामें महा घोर कोलाहल होने लगा। युद्धकी तैयारीकी आज्ञाको सुनकर सेनाके पुरुष अत्यन्त ही आनन्दित और प्रसन्न हुए। परन्तु धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर अवध्य पुरुषोंके वधको देखनेके निमित्त लम्बी सांस लेकर भीम अर्ज्जुनसे यह वचन बोले, जिसको त्यागनेके निमित्त मैंने वनवास स्वीकार करके अत्यन्त क्लेश सहन किया था; वही महा अनर्थ प्रयत्नके क्रमसे हम लोगोंमें उपस्थित होरहा है। इस विषयमें हम लोगोंने जो यत्न किया, वह निष्फल हुआ और कुछ भी यत्न न करनेपर भी यह महा भयङ्कर संग्राम उपस्थित हुआ है, वन्दना करने योग्य माननीय पुरुषोंके संग कैसे युद्ध हो सकता है ? वृद्ध गुरु आदि पुरुषोंके वध करनेसे हो मेरे किस प्रकारसे विजय होगी ?

धर्म्मराज युधिष्ठिरके वचनको सुनकर परन्तप अर्ज्जुन श्रीकृष्णके कहे हुए सब वचनोंको स्मरण कराके यह वचन बोले, हे राजन् ! देवकीनन्दन कृष्णने कुन्ती और विदुरके कहे हुए जिन सब वचनोंको सुनाया; वह सम्पूर्ण रूपसे तुमने निश्चय किया है; मुझे यह निश्चय

बोध होता है, कि वह लोग किसी प्रकारसे भी अधर्म्मसे युक्त वचन न कहेंगे, विशेष करके विना युद्ध किये हम लोगोंको निवृत्त होना उचित नहीं है। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने श्रीकृष्ण और अर्ज्जुनके वचनको सुनकर हंसके कहा "यही ठीक है" ऐसा कहनेसे उन लोगोंके वचनको पुष्टता होगई। हे महाराज! इसके अनन्तर पाण्डवोंने युद्ध करनेके निमित्त सङ्कल्प करके सेनाके पुरुषोंके सहित परम सुखसे निवास करके रात बिताई।

१५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! अनन्तर रातके बीतनेपर राजा दुर्य्योधनने अपनी ग्यारह अचौहिणी सेनाको नियमके अनुसार विभाग किया और मनुष्य, हाथी घोड़े रथ आदिका उत्तम, मध्यम विचार करके आगे पीछे और सेनाके बीचमें रहनेके निमित्त आज्ञा दे दी। अनुकर्ष, तूणीर, वरूथ (रथको ढकनेके निमित्त व्याघ्र आदिके चमड़े) तोमर, उपासंग, शक्ति, निषंग, ध्वजा, पताका, ऋष्टि, धनुष, तोमर, कई प्रकारके रस्से, फांसे, तेल, गुड़, बालू, सर्पसे युक्त घड़े, धूपके चूर्ण, घण्टफलक (घण्टासे युक्त चोखे शस्त्र) लोहेकी गोली, जलसे युक्त पत्थर, शूलसे युक्त भिन्दिपाल, मोम, मुद्गर, कांटेसे युक्त दण्ड, लांगल, विषादग्ध तोमर, शूप, पिटक, परशु, अङ्कुशके तोमर, दण्डसे युक्त करपत्र, वासी, वृचादन, (लोहेके कांटे) बाघ आदिके चमड़ेसे घिरे हुए रथ, माला कुठार आदि बहुतसे शस्त्र, तेलसे युक्त वस्त्र (जिसको भस्म घावपर लगाई जाती है) घावको शोधनेके वास्ते पुराना घृत आदि अनेक प्रकारकी युद्धके योग्य सब सामग्री और अनेक सैनिक वीरोंके सुवर्ण तथा रत्नोंसे भूषित होनेपर वह सेना जलती हुई अग्निके समान दीखने लगी। कवच धारण करनेवाले, उत्तम शिक्षा. तथा घोड़ोंके तत्वोंको जाननेवाले वीर लोग सारथीके कार्य्यपर नियुक्त हुए। रथमें उत्तम जातिके चार चार घोड़े जोते गये; अशुभ लक्षणोंके निवारणके वास्ते यन्त्र, औषधि; घोड़ोंके भूषित करनेके निमित्त घण्टा, माला, मोतियोंकी लड़ी, ध्वज, पताका, मुकुट, भूषण, तरवार, पट्टिश, प्रास और एक एक सौ धनुष रथोंमें रक्खे गये। रथके अगाड़ीके दोनों घोड़ोंके निमित्त एक सारथी और रथके चक्रके पीछे दोनों घोड़ोंके निमित्त दो सारथी नियुक्त किये गये। ऐसे ही रथके ऊपर दो उत्तम सारथी, रथी और घोड़ोंके तत्वोंको जाननेवाले वीर पुरुषोंसे रचित सुवर्णकी मालासे युक्त सहस्रों रथ चारों ओर दीखने लगे। रथहीके अनुसार सुवर्णके भूषणोंसे भूषित किये गये, हाथियोंके हौदेमें सात सात वीर पुरुषोंके चढ़ने पर ऐसी शोभा हुई जैसे रत्नोंके सहित पर्वत शोभायमान होता है। इन सात वीरोंमें दो अंकुश ग्रहण करनेवाले, दो धनुषधारी, दो तरवार चलाने वाले और एक एक शक्ति तथा त्रिशूल चलाने वाले वीर योद्धा रक्खे गये। हे महाराज! राजा दुर्य्योधनकी वह सेना अनेक प्रकारके वर्म्म और तूणीरसे युक्त तथा विचित्र रूपके कवच, पताका, और उत्तम भूषणोंसे भूषित होकर मतवारे हाथियोंके झुण्डसे घिर गई। विचित्र रूपके कवच, पताका, उत्तम भूषणसे युक्त असवारोंके सहित, सब दोषोंसे रहित, उत्तम शिक्षासे युक्त, दश दश हजार तथा लाख लाख घोड़ोंका समूह असवारोंके वशमें चलने लगा; नाना प्रकारके भूषण, शस्त्र सुवर्णकी माला और कवचोंसे युक्त होकर अगणित पैदल चलनेवाले वीर योद्धा सजके खड़े हुए। एक एक रथ पर दश दश हाथी, एक एक हाथी पर दश दश घोड़े और एक एक घोड़ेके निमित्त दश दश पैदल चलनेवाले

वीर योद्धा पादरक्षक बनाये गए। रथसे पचास गुने हाथी, हाथीसे सौगुणे घोड़े, और घोड़ोंसे सौगुणे मनुष्य रक्खे गये। इसके अतिरिक्त छिन्न-भिन्न सेना फिरसे सजाई जाने लगी, पांचसौ रथ और पांच सौ हाथियों पर एक सेना, दश सेनाओं पर एक पृतना, दश पृतनाओं पर एक वाहिनी रक्खी गई; और सेना वाहिनी, पृतना, ध्वजिनी, चमू, वरूथिनी आदिके क्रमसे एक अक्षौहिणी कही गई। बुद्धिमान् राजा दुर्य्योधनने इसी प्रकारसे सेनाके व्यूहकी रचना की। दोनों ओरकी सम्पूर्ण सेना अठारह हुई; उदमेंसे पाण्डवोंकी सात अक्षौहिणी और कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी। पचपन मनुष्योंकी एक पत्ति, तीन पत्तियोंका एक सेनामुख वा गुल्म होता है और तीन गुल्मोंसे एक गण कहा जाता है; दुर्य्योधनकी सेनाके बीच ऐसे लाखों गण युद्धके निमित्त हर्षित और उत्साहित होकर उपस्थित हुए। महाबाहु राजा दुर्य्योधनने अच्छे प्रकारसे विचार पूर्वक पराक्रमी बुद्धिमान् मनुष्योंको अपनी सेनाका सेनापति बनाया। कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, शल्य, जयद्रथ, काम्बोजराज सुदक्षिण, कृतवर्म्मा, अश्वत्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, शकुनि और बाह्लिक,—इन सब राजाओंको नियमके अनुसार पृथक् पृथक् अक्षौहिणीका नायक बनाकर सबका यथा उचित सम्मान किया और प्रतिदिन तथा हर घड़ी अपने सम्मुख इन लोगोंकी अनेक प्रकारसे पूजा करने लगे। हे राजन्! इसी प्रकारके नियममें बद्ध होकर वह सब पराक्रमी राजा और उनके पृष्ठरक्षक वीर योद्धा लोग राजा दुर्य्योधनके प्रिय कार्य्यके साधन करनेके निमित्त उत्साही हुए।

१५४ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा दुर्य्योधन सब राजाओंके सङ्ग मिलकर शान्तनुनन्दन भीष्मसे यह वचन बोले, हे पितामह! सेनापतिके बिना अत्यन्त बड़ी सेना भी युद्धमें पहुंच कर चींटियोंके पृथक् रूपसे गमन करनेके अनुसार शत्रुओंसे पीड़ित होकर तितर बितर होजाती है; क्योंकि दो पुरुषोंकी बुद्धि कभी समान नहीं होती। हे महाबुद्धिमन्! सुना जाता है, कि ब्राह्मणोंने कुश उखाड़ कर महातेजस्वी हैहयवंशियोंके विरुद्ध युद्धके निमित्त यात्रा की थी; उस समयमें वैश्य और शूद्र लोग भी उनके अनुगामी हुए थे। इसी प्रकारसे एक ओर क्षत्रिय और दूसरी ओर तीनों वर्ण थे। अनन्तर युद्धके आरम्भ होनेपर ब्राह्मण आदि तीनों वर्णोंका बार बार पराजय होने लगा, और क्षत्रियोंने एक पक्ष होकर भी इस तीनों वर्णोंको जीत लिया। तब उन ब्राह्मणोंने क्षत्रियोंसे इसका कारण पूछा और धर्म्मात्मा क्षत्रियोंने भी उन लोगोंसे यही यथार्थ उत्तर दिया, कि हम लोग युद्धमें एक महाबुद्धिमान् मनुष्यके वचनके अनुसार चलते हैं और आप लोग सब कोई अपनी अपनी बुद्धिके वशमें होकर कार्य्य करते हैं। हे पितामह! इसके अनन्तर उन ब्राह्मणोंने नीति जाननेवाले एक महा पराक्रमी और बुद्धिमान् ब्राह्मणको अपना सेनापति बनाया और इससे क्षत्रियोंको युद्धमें जीता था। ऐसे ही जो पुरुष नीतिसे युक्त, पराक्रमी, हितैषी, पाप रहित किसी पुरुषको अपना सेनापति बनाते हैं; वह शत्रुओंको जीत लेते हैं। आप शुक्राचार्य्यके समान नीतिज्ञ, सब शास्त्रोंके जाननेवाले और धर्म्मात्मा हैं; विशेष करके हमारे हितकी अभिलाषा करनेवाले हैं। इससे जैसे तेजस्वी पदार्थोंमें आदित्य और औषधियोंमें चन्द्रमा, यक्षोंमें कुवेर, देवताओंमें इन्द्र, पर्वतोंमें सुमेरु, वसुओंमें अग्नि मुख्य नायक हैं; उसी प्रकारसे तुम हम

लोगोंके प्रधान सेनापति बनो। क्योंकि इन्द्रसे रक्षित देवताओंकी भांति हम लोग तुम्हारे बाहु-बलसे रक्षित होकर देवताओंसे भी न जीतने योग्य होवेंगे; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। तुम देवताओंमें अग्रणी स्वामि-कार्त्तिककी भांति हम लोगोंके आगे आगे चलो, हम लोग महा-वृषभके पीछे बछड़ोंकी भांति तुम्हारे पीछे गमन करेंगे।

भीष्म बोले, हे महाबाहो! तुम जो कुछ वचन कहते हो, वह सब ठीक है; परन्तु मेरे पक्षमें जैसे तुम लोग हो;वैसे ही पाण्डव भी हैं। हे राजेन्द्र! इससे मुझे उन लोगोंके निमित्त भी कल्याणके वचन कहने पड़ेंगे और अपनी प्रति-ज्ञाके अनुसार तुम्हारे निमित्त युद्ध भी करना पड़ेगा। उस एक मात्र अर्जुनके अतिरिक्त मैं इस पृथ्वीमें ऐसा कोई वीर योद्धा भी नहीं देखता हूं, जो मेरे समान हो सके। महा बुद्धिमान् पाण्डुपुत्र अर्जुन अनेक दिव्य अस्त्रोंको जानता है; इससे वह युद्धमें मेरे समान हो सकता है; परन्तु वह रणभूमिमें प्रकाशित होकर कभी मेरे सङ्ग युद्ध न कर सकेगा। मैं अपने शस्त्रोंके बलकी सहायतासे क्षण भरमें देवता, असुर और राक्षसोंके सहित इस सम्पूर्ण जगत्को मनुष्यहीन कर सकता हूं। परन्तु हे प्रजानाथ! पाण्डुपुत्रोंको मैं किसी प्रकारसे नष्ट करनेमें उत्साही न होऊंगा। इससे मैं अपने शस्त्रोंको चलाकर प्रतिदिन दूसरे दश हजार वीर योद्धाओंको मारूंगा। रणभूमिमें यदि पहिले ही वह लोग मुझे न मारेंगे, तो इसी प्रकारसे उन लोगोंके सम्पूर्ण वीर योद्धाओं-का नाश कर दूंगा। हे राजन्! मैं दूसरे एक नियमसे इच्छाके अनुसार तुम्हारा सेना-पति होऊंगा; वह नियम यह है;—चाहे पहिले कर्ण युद्ध करे अथवा मैं प्रथम युद्ध करूं; क्योंकि यह सूतपुत्र सदा युद्धमें मेरे सङ्ग बहुत ही ईर्षा किया करता है।

कर्ण बोले, हे राजन्! गङ्गानन्दन भीष्मके जीते रहते, मैं किसी प्रकारसे भी युद्ध न करूंगा; भीष्मके मारे जानेपर गाण्डीवधारी अर्जुनके सङ्ग युद्ध करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा दुर्य्योधनने ब्राह्मणोंको बहुतसी दक्षिणा देकर भीष्मको विधिपूर्व्वक सेनापति बनाया। अन-न्तर राजाकी आज्ञा पाकर बाजे बजानेवाले पुरुष अनेक प्रकारके बाजे शङ्ख भेरी आदि बजाने लगे; वीरोंके सिंहनाद और हाथी घोड़ोंके शब्द सुनाई देने लगे। विना बादल-के रुधिरकी वर्षा होकर पृथ्वी कीचड़से युक्त होगई। अकस्मात् भूकम्प और हाथियोंकी भयङ्कर चिङ्घाड़ सम्पूर्ण वीर योद्धाओंके अन्तः-करणको पीड़ित करने लगी। आकाशसे देव-वाणी और उल्कापात होने लगा। सियारोंके झुण्ड भी बारम्बार महा घोर शब्द करने लगे। हे राजन्! राजा दुर्य्योधनने जब भीष्म-को सेनापति बनाया, तब इसी प्रकारसे सैकड़ों भयङ्कर उत्पात दीख पड़े थे।

शत्रुनाशन शान्तनुपुत्र भीष्मको सेनापति बनानेके अनन्तर राजा दुर्य्योधनने अनेक गौ और धन देकर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराया और उनके आशीर्व्वादसे बर्द्धित होकर सैनिक-पुरुषोंके सङ्ग यात्रा की और भाइयोंके सहित इस महासेनाको लेकर कुरुक्षेत्रमें आ-पहुंचे। अनन्तर कर्णके सङ्ग उन्होंने सम्पूर्ण कुरुक्षेत्रमें घूमकर समान भूमिमें शिविर स्थापित कराया। अनेक तृण काठसे युक्त उर्वरा भूमिमें स्थापित हुए वे सब शिविर हस्तिनापुरकी भांति प्रकाशित होने लगे।

१५५ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले;—बुद्धिमें बृहस्पति, क्षमामें पृथ्वी, गम्भीरतामें समुद्र, स्थिरतामें हिमालय, उदारतामें प्रजापति ब्रह्मा, तेजमें

सूर्य, धाणोंकी वर्षासे इन्द्रकी भांति शत्रुओंके संहार करनेवाले, सब राजाओंमें अग्रणी, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ, महात्मा, गंगानन्दन, पितामह भीष्मको महाभयङ्कर रोवेंको खड़े करनेवाले यज्ञमें सदासे दीक्षित सुनकर सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महाबाहु युधिष्ठिर इस विषयमें क्या बोले, भीम तथा अर्जुनहोने क्या कहा और कृष्णहोने क्या उत्तर दिया था?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म अर्थको जाननेवाले, बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ, महा बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिर भाइयोंके सहित कृष्णको बुलाकर मोठे वचनसे ऐसा कहने लगे, तुम लोग तैयार तथा सज्जित होकर सावधानीसे सब सेनामें भ्रमण करो। पहिले ही पितामह भोष्मके सङ्ग तुम लोगोंका युद्ध होगा; इससे मेरी सात अचौहिणी सेनामें सात सेनापति नियत करो।

श्रीकृष्ण बोले, हे भरतर्षभ! इस उपस्थित समयमें आपके समान पुरुषको जैसा कहना उचित है, आपने वैसे ही अर्थसे भरे हुए वचन् कहे हैं। हे महाबाहो! यह सम्पूर्ण रूपसे हम लोगोंको उत्तम बोध होता है, इससे शीघ्र इस कर्त्तव्य-कर्म्मका अनुष्ठान होना उचित है, अपनी सेनामें सात पुरुषोंको सेनाका नायक बनाइये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा युधिष्ठिरने द्रुपद, विराट, सात्यकि, धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु, और मगधराज सहदेव,—युद्धको अभिलाषा करनेवाले इन सात महात्मा वीरोंको बुलाकर विधि पूर्व्वक अपनी सेनाका नायक बनाया। जो यज्ञको अग्निसे द्रोणाचार्य्यके बधके निमित्त उत्पन्न हुए थे, उस धृष्टद्युम्नको सम्पूर्ण सेनाका सेनापति बनाया और इन सबके ऊपर अर्जुनको नियुक्त किया। बलदेवके भाई महाबाहु श्रीमान् कृष्ण अर्जुनके भी नायक तथा उनके सारथी बने। हे महाराज! नोलाम्बरधारी, कैलास पर्व्वतके शिखरके समान, मतवारे लाल नेत्रसे युक्त, सिंहके समान चलनेवाले महाबाहु श्रीमान् हलधारी बलदेव जीने इस सब प्राणियोंका नाश करनेवाले उपस्थित युद्धको शीघ्र ही होता हुआ जानके देवतोंसे रक्षित इन्द्रके समान अक्रूर, उद्धव, गद, शाम्ब, प्रद्युम्न और चारुदेष्ण आदि बलसे युक्त मुख्य मुख्य यदुवंशियोंसे रक्षित होकर पाण्डवोंके समीपमें आकर उपस्थित हुए! अनन्तर राजा युधिष्ठिरने अपने हाथोंसे उनके करतलको स्पर्श किया और कृष्ण आदि सब पुरुषोंने उन्हे प्रणाम किया। शत्रुनाशन बलराम अवस्थामें बूढ़े द्रुपद और विराटको प्रणाम करके युधिष्ठिरके सहित आसनपर बैठे। अनन्तर सब राजाओंके चारों ओर बैठ जानेपर रोहिणीनन्दन बलदेवजी श्रीकृष्णके मुखकी ओर देखकर यह वचन बोले,—इस महा भयङ्कर युद्धमें प्राणियोंका नाश होगा; मैं बोध करता हूं, दैवकी ऐसी हो इच्छा है; कोई इसको किसी प्रकारसे नहीं रोक सकेगा। इस समयमें मैं यही चाहता हूं, कि तुमको सुहृद-पुरुषोंके सहित इस युद्धसे उत्तीर्ण, अरोग तथा घावसे रहित देखूं। पृथ्वीके सम्पूर्ण क्षत्रिय लोग कालके वशमें होके इस युद्धमें इकट्ठे हुए हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मांस और रुधिरसे पृथ्वी अवश्य हो पूरित होवेगी। हे भरतनन्दन युधिष्ठिर! मैंने एकान्तमें कृष्णसे बार बार कहा था, कि हे मधुसूदन! पाण्डव लोग हमारे जैसे सम्बन्धी हैं, राजा दुर्य्योधन भी वैसे ही हैं, इससे समान सम्बन्धियोंको समान ही सहायता देनी उचित है; दुर्य्योधनको भी सहायता दो, क्योंकि उस ही निमित्तसे वह बार बार यहांपर आरहे हैं। परन्तु तुम्हारे निमित्त कृष्णने मेरी बात नहीं ग्रहण की। अर्जुनके स्नेहसे ये तुम्हारी ही ओर सब प्रकारसे रत हैं। पाण्डवोंका जो निश्चय जय होगा,

यह मुझे खूब ही विदित है, क्योंकि कृष्णको ऐसी ही इच्छा है। मैं भी कृष्णके विना इस संसारमें नहीं रह सकता; इसी कारणसे कृष्णके अभिप्रायके अनुसार ही चलता हूं। गदायुद्धको जाननेवाले भीम और दुर्य्योधन दोनों ही मेरे शिष्य हैं, इससे दोनोंके ऊपर मेरी समान प्रीति है। इससे अब मैं सरस्वती तीर्थ करनेके निमित्त गमन करता हूं; कौरवोंको अपने सम्मुख नष्ट हुआ देखकर उपेक्षा न कर सकूंगा। महाबाहु बलराम ऐसा कहके पाण्डवोंसे विदा हुए और कृष्णको लौटा कर तीर्थ यात्राके निमित्त प्रस्थान किया।

१५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इसी अवसरमें साक्षात् इन्द्रके मित्र अत्यन्त यशस्वी हिरण्यरोमा भोजराज महात्मा भीष्मकके पुत्र, पृथ्वीमें रुक्मी नामसे विख्यात था; उस सत्य-सङ्कल्प करनेवाला महाबाहु रुक्मी विजय धनुषको पाकर मानों सम्पूर्ण पृथ्वीको भयभीत करता हुआ पाण्डवोंके समीपमें गमन किया। उसने गन्धमादनवासी किंपुरुषसिंह द्रुमके शिष्य होकर उनके समीपसे चारों पादसे युक्त धनुर्वेदको सम्पूर्ण रूपसे पढ़ा था, और तेजमें वरुणका गाण्डीव, इन्द्रका विजय और विष्णुका शार्ङ्ग ये तीनों धनुष ही दिव्य और अत्यन्त तेजस्वी कहके विख्यात हैं। उनमेंसे शत्रुओंका नाश करनेवाला भयङ्कर शार्ङ्ग धनुष कृष्ण धारण करते थे; इन्द्रतनय अर्ज्जुनने खाण्डव वनमें अग्निके समीपसे गाण्डीव-धनुष पाया था, और महा तेजस्वी रुक्मीने द्रुमके निकट जाकर विजय-धनुष प्राप्त किया था। श्रीकृष्णने मुर दैत्यके अस्त्रमय सब पाशोंको काटके और भूमिपुत्र नरकासुरको असुरोंके सहित मारकर अदितिके मणिजटित दोनों कुण्डल, सोलह हजार कुमारी-कन्या और शार्ङ्ग धनुषको प्राप्त किया था। अपनी भुजाओंके बलसे गर्व्वित रुक्मीने कृष्णके रुक्मिणी हरणको न सहकर यह प्रतिज्ञा की थी, कि "मैं कृष्णको बिना मारे शान्त न होऊंगा" ऐसी प्रतिज्ञाकर बढ़ी हुई गंगाकी भांति अपनी चतुरंगिणी महा सेनाके सहित कृष्णसे लड़नेको चढ़ गया था। अनन्तर वृष्णि-नन्दन योगेश्वर कृष्णके समीप पहुंचकर उनसे लड़कर पराजित हुआ और लज्जित होकर कुन्तीराजके निकटमें गमन किया था। शत्रुनाशन रुक्मी जिस स्थानपर कृष्णसे लड़कर हार गये थे, वहांपर उन्होंने भोजकट नामक एक नगर बसाया था। हे महाराज! अनेक हाथी घोड़े और सेनासे युक्त वह नगर भोजकट नामसे विख्यात है। वही महा तेजस्वी भोजराज बहुतसी सेनामेंसे एक अक्षौहिणी सेना लेकर अकस्मात् पाण्डवोंके समीपमें उपस्थित हुए। अनन्तर वह कवच, बाण, तलवार और शरासनको धारण करनेवाले रुक्मीने पाण्डवोंमें विदित होकर कृष्णके प्रियकार्य्य करनेकी इच्छासे सूर्य्यके वर्णवाली ध्वजाके सहित उस महासेनामें प्रवेश किया। तब राजा युधिष्ठिरने दूरहीसे उठकर उनकी यथा उचित पूजा की। रुक्मीने पाण्डवोंसे यथा उचित पूजित और सम्मानित होकर उन लोगोंमें भी अवस्थाके अनुसार सबकी यथायोग्य पूजा करके सेनाके सहित विश्राम किया। अनन्तर वीरोंमें श्रेष्ठ अर्ज्जुनसे यह वचन बोले; हे पाण्डव! इस युद्धके निमित्त यदि तुम शत्रुओंसे डरते हो, तो मैं तुम्हारी सहायता करूंगा। इस पृथ्वीके बीच ऐसा पराक्रमी कोई भी पुरुष नहीं है, जो मेरे समान हो सके। हे पाण्डव! युद्धमें तुम मुझे जो अंश प्रदान करोगे, मैं उसहीको युद्धमें मारूंगा। द्रोण, कृपाचार्य्य, भीष्म, कर्ण आदि सबका ही वध करूंगा। अथवा ये सम्पूर्ण राजा लोग चुप चाप बैठे रहें, मैं अकेला ही युद्धमें शत्रुओं

को मारकर यह सम्पूर्ण पृथ्वी तुम्हें प्रदान करूंगा। बुद्धिमान् अर्जुन धर्मराज युधिष्ठिर, कृष्ण तथा दूसरे राजाओंके बीचमें रुक्मीके यह वचन सुन कृष्ण और युधिष्ठिरके मुखकी ओर देख कर हंसते हुए धीरभावसे उससे यह वचन बोले,—"हे वीर! मैं कौरवकुलमें उत्पन्न विशेष करके राजा पाण्डुका पुत्र होके और कृष्णकी सहायता पाकर तथा गाण्डीव धनुषको धारण करके "डर गया हूं" ऐसी बात किस प्रकारसे कह सकता हूं? घोषयात्राके समयमें जब महाबली गन्धर्वोंके सङ्ग मैंने युद्ध किया था, तब किसने मेरी सहायता की थी? खाण्डव वनमें देवता और दानवोंसे जब मैंने घोर युद्ध किया था, उस समय किसने मेरी सहायता की थी? जब निवातकवच और कालकेय दानवोंके सङ्ग मैंने युद्ध किया था, तब कौन मेरा सहाय हुआ था? और भी जिस समय विराट नगरमें मैंने अनेक कौरवोंसे युद्ध किया था, उस समयहीमें किसने मेरी सहायता की थी? युद्धके निमित्त रुद्र, कुबेर, यम, वरुण, अग्नि, कृपाचार्य, द्रोणाचार्य और कृष्णकी आराधना करके दिव्य तेजसे युक्त दृढ़ गाण्डीव धनुषको धारण करके तथा अक्षय तूणीर और दिव्य-शस्त्रोंसे युक्त होकर भी "डर गया हूं" यह यशको लोप करनेवाला वचन साक्षात् इन्द्रसे भी मेरे समान पुरुष कैसे कह सकता है? हे पुरुषसिंह! न मुझे कुछ डर है, और न मुझे सहायताकी अवश्यकता है, हे महाबाहो! इससे यदि तुम्हारी इच्छा हो तो यहांसे दूसरे स्थान पर गमन करो अथवा इस ही स्थान पर निवास करो।

हे भरतर्षभ! अनन्तर रुक्मी उस समुद्रके समान अपनी सेनाको लौटाकर राजा दुर्य्योधनके समीप भी उसी प्रकारसे गये; उनसे भी वैसे ही वचन बोले; और उस शूरमानी दुर्य्योधनने भी उनसे कहा, कि मुझको सहायतकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है। इससे वृष्णिकुलमें उत्पन्न हुए रोहिणी-पुत्र बलराम और राजा रुक्मी;—ये दो पुरुष इस युद्धसे पृथक् हुए थे। बलरामको तीर्थ-यात्राके निमित्त गमन करने और रुक्मीके लौट जाने पर पाण्डव लोग फिर विचार करनेके निमित्त इकट्ठे हुए। हे महाराज! राजाओंसे भरी हुई वह सभा तारोंसे चित्रित आकाश मण्डलकी भांति शोभित होने लगी।

१५७ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे द्विजसत्तम! कुरुक्षेत्रमें इस प्रकारसे सम्पूर्ण सेनाके व्यूह-बद्ध होने पर काल प्रेरित कौरवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! सब सेनाके इस प्रकारसे व्यूह बद्ध होके खड़ी होने पर राजा धृतराष्ट्रने सञ्जयसे यह वचन कहा; हे सञ्जय! कुरु पाण्डवोंकी सेनाके कुरुक्षेत्रमें इकट्ठी होने पर वहां जो कुछ वृत्तान्त हुआ, वह सम्पूर्ण तुम मुझसे वर्णन करो। मैं पुरुषार्थको व्यर्थ जान कर दैवको ही श्रेष्ठ समझता हूं; क्योंकि विनाशका परिणाम और युद्धके दोषको भली भांतिसे जान कर भी नीचबुद्धि दुष्ट पुत्रोंको नियममें नहीं स्थिर कर सकता हूं। हे सूत! मेरी बुद्धिसे दोषोंका भी बोध हो रहा है परन्तु दुर्य्योधनके मिलने-पर फिर मेरी बुद्धि पलट जाती है। हे सञ्जय! इससे ऐसी अवस्थामें जो होना है; वही होगा; युद्धमें शोक करना भी क्षत्रियोंका प्रशंसनीय धर्म्म नहीं है।

सञ्जय बोले, हे महाराज! तुम जो इच्छा करते हो वह तुम्हारे योग्य ही प्रश्न है,यह ठीक है; परन्तु इस दोषको दुर्य्योधनके ऊपर आरोपित करना तुमको उचित नहीं है। हे राजन्! मैं जो वचन कहता हूं, उनको सुनो, जो मनुष्य अपने किये हुए बुरे कर्म्मका अशुभ-फल पाता है,

उस काल तथा ईश्वरके ऊपर दोष लगाना उचित नहीं है। हे महाराज! मनुष्योंमें जो पुरुष निन्दनीय कर्म्मोंका अनुष्ठानकरते हैं,वह बुरे कर्म्मोंके आचरण करनेसे सब लोगोंसे ही वध करनेके योग्य होजाते हैं। हे राजेन्द्र! पाण्डवोंने जुएमें हारकर केवल तुम्हारे शासन और प्रतिज्ञाहीसे इष्ट मित्रोंके सहित सब प्रकारसे अपमान और तिरस्कार सहन किया था। युद्धमें घोड़े, हाथी और महातेजस्वी राजाओंके नाश होनेका जो सूत्रपात हुआ, उसे तुम पूर्ण रीतिसे सुनो। हे महाबुद्धिमन्! प्राणियोंके नाश करनेवाले इस महायुद्धके वृत्तान्तको सुनकर ऐसा निश्चय कीजिये, कि पुरुष कभी शुभ तथा अशुभ कर्म्मोंका स्वयं कर्त्ता नहीं हो सकता कठपुतलीको भांति दूसरेके वशमें होकर कर्म्म करता है। शुभ और अशुभ कर्म्मके विषयमें तीन प्रकारके मतभेद हैं। कोई कोई कहते हैं, कि मनुष्य ईश्वरके वशमें होकर सब कर्म्म करता है, कोई कहते हैं, पुरुष अपनी इच्छाके अनुसार कर्म्म करता है और कोई कोई कहते हैं, कि वर्त्तमान कर्म्मोंके अनुष्ठानके विषयमें पूर्व्व जन्मके कर्म्म हो उन कर्म्मोंके कारण होते हैं।

१५८ अध्याय समाप्त।

अब उलूक दूत-गमन पर्व्व लिखते हैं।

सञ्जय बोले, हे राजन्! महात्मा पाण्डवोंके हिरण्वती नदीके किनारे शिविर स्थापित करने पर कौरवोंने भी उचित स्थानमें अपनी सेनाको एकत्रित किया। प्रतापी राजा दुर्य्योधनने वहां पर अपने शिविरको स्थापित करके सब राजाओंको सम्मानित किया और रक्षक सेना खड़ी करके योद्धाओंकी रक्षा करने योग्य वस्तुओंको रक्षाका विधान कर दिया। अनन्तर कर्ण, दुःशासन और शकुनिको बुलाकर विचार करने लगे। हे भारत! दुर्य्योधनने कर्णके संग बातचीत करके अन्तमें कर्ण, दुःशासन और शकुनिकी सम्मतिसे एकान्त स्थानमें उलूकको बुलाकर यह वचन कहा "हे कितव-नन्दन उलूक! तुम सोमकवंशियोंसे युक्त पाण्डवोंके समीपमें जाओ और वहां पर पहुंच कर कृष्णके सम्मुख अर्जुनसे मेरे इस वचनको कहना, कि कई वर्षोंसे जो विचार हो रहा था, वह महाभयङ्कर कुरु-पाण्डवोंका युद्ध इस समयमें उपस्थित हुआ है। हे अर्जुन! तुमने कृष्णके संग मिलकर भाइयोंके सहित गर्जन करते हुए जो अपनी अत्यन्त बड़ाई की थी, जिसको सञ्जयने आकर कौरवोंमें प्रकाशित किया था, उसका समय यही उपस्थित हुआ है; इससे तुम लोगोंने जिस प्रकारसे प्रतिज्ञा की थी, इस अवसरमें उसका प्रतिपालन करो।' हे उलूक! भाइयों तथा सम्पूर्ण सोमक और केकयवंशियोंमें बैठे हुए राजा युधिष्ठिरसे भी यह वचन कहना, "प्रसिद्ध धर्म्मात्मा होकर तुम क्यों अधर्म्ममें चित्त लगाते हो? धूर्त्त और दुष्ट पुरुषकी भांति क्यों जगत्का नाश करनेका विचार करते हो? मैं समझता हूं, कि तुम सब प्राणियोंके अभय-दाता ही होगे। हे भरतर्षभ! सुना जाता है, कि पहिले समयमें देवता लोगोंने जब दानवोंसे राज्यको हरण किया था, उस समयमें प्रह्लादने यह एक श्लोक पढ़ा था, "हे देवगण! जिसके धर्म्मके चिह्न ऊंची ध्वजाकी भांति सदा प्रकाशित रहते हैं; परन्तु पापकर्म्म सब गुप्त रीतिसे उसके अन्तःकरणमें निवास करते हैं; उसके उस व्रतको विड़ालव्रत कहते हैं।" हे प्रजानाथ! इस विषयमें नारद मुनिने मेरे पिताके समीप जो उत्तम उपाख्यान वर्णन किया था, इस समय मैं तुम्हारे समीपमें उस विषयको कहता हूं। चित्त लगाकर सुनो। "हे राजन्! किसी समयमें एक धूर्त्त विड़ाल सब हिंसा आदि कर्म्मोंसे विरक्त हो गङ्गाके तीरपर ऊर्द्ध्वबाहु होकर निवास करता

था, वह सब जीवजन्तुओंमें विश्वास उत्पन्न करनेके निमित्त सबसे यही वचन कहा करता था, कि "मैं धर्मका आचरण कर रहा हूं" हे राजन्! इसी प्रकारसे कुछ दिनोंके अनन्तर सब पक्षी उसका विश्वास करने लगे और सबोंने मिलकर उसकी बहुत ही प्रशंसा करनी आरम्भ की पक्षियोंको भोजन करनेवाले धूर्त्त बिड़ालने पक्षियोंमें पूजित होके यह सोचा, कि कि इतने दिनके अनन्तर अब मेरी तपस्याका फल उदय हुआ है; अब मेरा कार्य्य सफल हुआ। हे भारत! अनन्तर कुछ दिनोंमें चूहे भी वहांपर उपस्थित हुए और उस व्रत करनेवाले धार्म्मिक दम्भसे युक्त धूर्त्त बिड़ालको महाव्रतमें रत देखा। हे राजन्! ऐसा निश्चय होनेपर उन चूहोंको ऐसी बुद्धि हुई, कि हम लोगोंके बहुतसे शत्रु हैं, इससे वे हम लोगोंके मामा बनकर हमारी सदा रक्षा किया करें। ऐसा विचार कर वे सब चूहे बिड़ालके समीप जाकर यह वचन बोले, कि तुम्हारे आसरेमें हम लोग सुखपूर्व्वक सब स्थानोंमें भ्रमण करनेकी इच्छा करते हैं,तुम ही हम लोगोंकी परम गति और तुम ही हमारे परम-बन्धु हो; इसी कारणसे हम सब लोग मिलकर तुम्हारे शरणागत हुए हैं; तुम धर्म्मात्मा हो और सदा धर्म्महीके कार्य्यमें लगे रहते हो; इससे हे महाबुद्धिमन्! जैसे इन्द्र देवताओंकी रक्षा करते हैं वैसे ही तुम भी हम लोगोंकी रक्षा करो। हे राजन्! वह चूहोंको भक्षण करनेवाला बिड़ाल उन सबके वचनोंको सुनकर बोला, कि तपस्या और रक्षा ये दोनों कार्य्य एक ही समयमें नहीं हो सकते। परन्तु हित साधन करनेके निमित्त तुम्हारे इस वचनकी रक्षा मुझको अवश्य ही करनी पड़ेगी, और मेरी बात भी तुम लोगोंको नित्य ही प्रतिपालन करनी उचित है, मैं इस दृढ़ व्रतमें स्थित होके तपस्यासे क्षीर्ण होगया हूं; विशेष रूपसे विचारने पर भी मुझमें चलनेकी कुछ भी शक्ति नहीं दीख पड़ती; संप्रति दिनके समय तुम लोग मुझे नदी-किनारे पर ले चलना। हे भरतर्षभ! चूहोंने कहा, "ऐसा-ही होगा" ऐसी प्रतिज्ञा करके सब चूहोंने उस बिड़ालके समीपमें बूढ़े और बच्चोंको समर्पण किया। अनन्तर वह पापबुद्धि दुष्टात्मा बिड़ाल चूहोंको धीरे धीरे भक्षण करके मोटे शरीर,उत्तम वर्ण और खूब ही पुष्ट होने लगा। इसी प्रकारसे सब चूहोंका नाश होने लगा और वह बिड़ाल तेजस्वी और बलवान् होता जाता था। अनन्तर एक दिन सब चूहे इकट्ठे होकर आपसमें यह वचन कहने लगे, कि मामा नित्य ही मोटे ताजे और बलवान् हुए जाते हैं, और हम लोगोंके कुलका अत्यन्त ही नाश हो रहा है। हे राजन्! अनन्तर डिण्डिक नामक किसी बुद्धिमान् चूहेने उन सबोंसे यह वचन कहा, कि तुम लोग विशेष रूपसे इकट्ठे होकर नदीके तीरपर जाना और मैं मामाके सङ्ग ही तुम लोगोंके पीछे पीछे चलूंगा। तब सब चूहे "धन्य धन्य" कहके उसकी प्रशंसा करने लगे। और डिण्डिकके इस अर्थयुक्त वचनको न्यायके अनुसार रक्षा करने लगे। अनन्तर बिड़ालने यह सब बात न जानकर डिण्डिकको भक्षण किया; तब सब चूहे इकट्ठे होके एकान्त स्थानमें विचार करने लगे। हे राजन्! कोकिल नामका एक बूढ़ा चूहा सब चूहोंके बीचमें यह यथार्थ वचन कहने लगा, कि मामा धर्म्मात्मा नहीं है, हम लोगोंके शत्रु होकर भी केवल छल करनेके निमित्त मित्र भावका अवलम्बन किये हुये हैं. जो पुरुष फल मूल भोजन करता है, उसकी विष्ठा कभी रोवोंसे युक्त नहीं होती; इसका शरीर नित्य ही बढ़ रहा है, और चूहोंके कुलका धीरे धीरे नाश हुआ चला जा रहा है, विशेष करके आज सात आठ दिन हुआ डिण्डिकका दर्शन नहीं मिलता है। कोकिलका वचन सुनकर सब चूहे इधर उधर

भाग गए और वह दुष्टात्मा धूर्त्त बिड़ाल भी वहांसे चला गया। अरे दुष्टात्मा! इससे तुमने भी उस ही बिड़ालव्रतका अवलम्बन किया है; चूहोंके बीचमें बिड़ालने जैसा आचरण किया था, तू भी जातियोंके बीच वैसा ही आचरण कर रहा है, तुम्हारे वचन और भांति सुन पड़ते हैं; और कर्म्म दूसरी प्रकारके दीख पड़ते हैं; तुम्हारे वेद-विहित कर्म्म और धर्म्म-का दम्भ लोक दिखानेके निमित्त है। हे राजन्! तुम धर्म्मात्मा कहके विख्यात हो; इससे अब तुम इस कपट-व्यवहारको त्यागकर क्षत्रिय धर्म्मके अनुसार सब कार्य्य करो। हे भरतसत्तम! अपने बाहुबलसे पृथ्वीका राज्य ग्रहण करके ब्राह्मण और पितरोंका यथा उचित दान करो। तुम्हारी माता कई वर्षसे क्लेश तथा दुःख सह रही है, इससे उसके हित-साधनके निमित्त यत्न करके युद्धमें शत्रुओंको जीत करके उसके आंसूका बन्द करो। तुमने युक्तिसे पांच गांव मांगे थे, परन्तु हम लोग "पाण्डवोंको किस प्रकारसे क्रोधित करेंगे? कैसे उनसे रणभूमिमें युद्ध करेंगे?" यही विचार-कर नहीं प्रदान किया। तुम्हारे निमित्त दुष्ट अभिप्राय, विदुरका त्याग, और जतुगृहमें तुम लोगोंको जलाना आदि विषयोंको स्मरण करके अब इस समयमें तुम पुरुषार्थ अवलम्बन करो। हे भारत! तुमने कौरवोंकी सभामें आनेके समय कृष्णसे कहा था, कि हे राजन्! मैं शान्ति और युद्ध दोनोंके निमित्त तैयार हूं ऐसी बात कहला भेजी थी; वही युद्धका समय अब उपस्थित हुआ है। हे युधिष्ठिर! इस ही निमित्त मैंने सब सामान ठीक कर रक्खा है। क्षत्रिय पुरुष युद्धके अतिरिक्त और किस विषयको उत्तम समझेंगे? हे भरतर्षभ! तुम क्षत्रियकुलमें उत्पन्न होकर पृथ्वीमें विख्यात हुए हो, और द्रोणाचार्य्य तथा कृपाचार्य्यसे सब अस्त्र शस्त्रकी शिक्षा पाकर समान जन्म, बल और तेजको धारण करके तुमने वसुदेव पुत्र कृष्णका आसरा क्यों ग्रहण किया है?

हे उलूक! तुम पाण्डवोंके समीपमें कृष्णसे भी यह वचन कहना, कि तुम अपनी और पाण्डवोंकी रक्षामें यत्नवान् होकर हम लोगोंके सङ्ग युद्ध करो। पहिले तुमने सभामें मायासे जो रूप धारण किया था, अब फिर उस रूपको प्रकट करके अर्ज्जुनके सहित मेरे सम्मुखमें आकर युद्ध करो। इन्द्रजाल, माया, और बाजीगरी सब देखनेमें भयङ्कर होती हैं, यह ठीक है, परन्तु रणभूमिमें शस्त्रधारी पुरुषके सम्मुख भयङ्कर होनी तो दूर रहे; वह उलटे क्रोधको उत्पन्न करती हैं। मैं भी निज शरीरसे अनेक रूप प्रकट करके स्वर्ग और आकाशमें गमन करने-का उत्साह कर सकता हूं और पाताल तथा इन्द्र लोकमें भी जानेमें समर्थ हो सकता हूं। परन्तु माया और भय दिखाना तथा वशीकरण आदि सब मायाके कार्य्योंसे जो सिद्धि होवेगी, वह पुरुषार्थको प्रकाशित करनेवाले पुरुषोंके सम्मुख नहीं चलती। क्योंकि विधाता ही अपनी इच्छाके अनुसार सब प्राणियोंको अपने वशमें कर सकता है, दूसरा नहीं कर सकता। हे कृष्ण! तुम जो कहा करते हो, कि मैं युद्धमें धृतराष्ट्रपुत्रोंको मारकर यह सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य पाण्डवोंको समर्पण करूंगा और सञ्जयने मेरे समीप तुम्हारे इस वचनको कहा था, कि "मेरे सहित उस अर्ज्जुनसे तुम्हारी शत्रुता हुई है" अब पाण्डवोंके निमित्त उन वचनोंको पालन करके सत्य-प्रतिज्ञ बनो। रणभूमिमें यत्नपूर्व्वक युद्ध करो! हम लोग देखें, तुम एकबार पुरुष बनो। जो पुरुष शत्रुओंको विशेष रूपसे जानकर अपने यथार्थ पुरुषार्थको अवलम्बन करके उनको शङ्कित और दुःखित करते हैं, वे ही उत्तम जीवन धारण करके जीते रहते हैं। हे कृष्ण! पृथ्वीके बीच अकस्मात् तुम्हारा यश विख्यात हुआ है, किन्तु नपुंसकता

इस समय सबको विदित होजावेगो। हे कंसके दास! मेरे समान किसी राजाने कभी तुमसे युद्ध नहीं किया है।

हे उलूक! उस सोंगसे रहित, बैलके समान बहुत भोजन करनेवाले, विद्याशून्य, और मूर्ख भीमसेनसे भी बार बार मेरे इस वचनको कहना, कि हे पार्थ! पहिले विराटनगरमें जो बल्लव नामक प्रसिद्ध रसोई बनानेवाले सूपकार हुए थे, वह सब मेरा ही पराक्रम था। सभाके बीचमें तुमने जो प्रतिज्ञा की थी, वह जिसमें मिथ्या न होजावे; यदि शक्ति हो, तो दुःशासनका रुधिर पान करो। हे कौन्तेय! तुम जो कहा करते हो, कि युद्धमें मैं धृतराष्ट्रके पुत्रोंको शीघ्र ही मारूंगा; उसका समय अब उपस्थित हुआ है। हे भारत! तुम खाने पीने और भोजन करनेहीमें पुरुष हो; भोजनको बात अलग है और भोजनसे युद्धका बहुत अन्तर है। आओ पुरुष होकर युद्ध करो। हे भारत! तुम प्राणरहित होकर निश्चय ही पृथ्वीमें शयन करोगे। हे भीम! तुमने सभामें बहुत ही अपनी बड़ाई की थी, वह अत्यन्त ही तुच्छ है।

हे उलूक! तुम नकुलसे भी मेरा यह वचन कहना, "हे भारत! युधिष्ठिरकेऊपर अनुराग मुझसे द्वेष और द्रौपदीका क्लेश स्मरण करके इस समय युद्ध करो। राजाओंके बीचमें सहदेवसे भी मेरा यह वचन कहना, कि हे पाण्डव! अब इस समय सब क्लेशोंको स्मरणकर यत्नवान् होके युद्ध करो।

हे उलूक! विराट और द्रुपदको भी मेरी ओरसे यह वचन कहना, कि जबसे प्रजाकी सृष्टि हुई है, तबसे महागुणवान् सेवकोंने स्वामीको कभी विशेष रूपसे नहीं देखा है और राजाने भी कभी सेवकोंको नहीं जाना है, यह राजा अपनी बड़ाई नहीं करता, ऐसा समझकर तुम लोग मेरे बध करनेके निमित्त आये हो; इस समय सब कोई मिलकर पाण्डव और अपने हितके निमित्त मेरे सङ्गमें युद्ध करो।

पाञ्चालनन्दन धृष्टद्युम्नको भी मेरी ओरसे यह वचन कहना; यही अब तुम्हारा समय आगया है और तुम भी युद्धमें प्रवृत्त होजाओ; युद्धमें द्रोणाचार्य्यके सम्मुख होकर अपने उत्तम हितको सिद्ध करनेके निमित्त यत्न करो। आओ दुष्ट मित्रोंके सङ्ग मिलकर युद्ध करके अपने निमित्त कठिन-कर्म्म करो।

हे उलूक! अनन्तर शिखण्डीको मेरी ओरसे यह कहना, कि सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महाबाहु कुरुनन्दन गङ्गापुत्र भीष्म तुम्हें स्त्री समझके तुम्हारा वध नहीं करेंगे। इससे आओ अब तुम निर्भय होके युद्ध करो। रणभूमिमें यत्नपूर्व्वक युद्धके कर्म्मको करो और हम लोग तुम्हारे पराक्रमको देखें।

ऐसा कहकर राजा दुर्य्योधन हंसते हुए फिर उलूकसे बोले, कि तुम कृष्णके सम्मुख अर्जुनसे फिर हमारे इस वचनको कहना, "हे वीर! या तो तुम हम लोगोंको मारकर इस पृथ्वीको शासन करोगे, अथवा हम लोगोंके हाथसे मरकर पृथ्वीमें शयन करोगे। हे पाण्डव! राज्यसे निकाले जाने पर वनवासका दुःख और द्रौपदीका क्लेश स्मरण करके इस समयमें तुम अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। क्षत्रियोंकी माता जिस कार्य्यके वास्ते पुत्रको उत्पन्न करती है, उसका समय अब उपस्थित हुआ है। इससे युद्धमें बल, वीर्य्य, पराक्रम और अत्यन्त शीघ्रतासे अस्त्र चलाकर अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। ऐश्वर्य्यसे भ्रष्ट, बहुत दिन तक वनवासमें अत्यन्त ही क्लेश पाकर किसका हृदय दुःखित न होगा? कौन पुरुष मेरे कुलमें उत्पन्न हुए शूरवीर पराये धनको लेनेवाले किसी पुरुषको सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको आक्रमण करके उसे क्रोधित न करेगा?

तुमने जो अपनी बहुत बड़ाई की थी, इस समयमें कर्म्मसे उसको पूरा करो। बिना कर्म्म किये मिथ्या अपनी बड़ाई करनेपर पण्डित लोग उसे अधम-पुरुष कहते हैं। शत्रुओंके वशमेंसे छुटकारा पाना और राज्यका फिरसे उद्धार करना; इन दोनों विषयोंके निमित्त युद्ध करनेवाले पुरुषका प्रयोजन होता है; इससे बल और पराक्रमको प्रकाशित करके उसे पूर्ण करो। तुम भी जुएमें हारे थे और द्रौपदी भी सभामें बुलाई गई थी; इससे बलवान् पुरुषको अवश्य ही क्रोध उत्पन्न हो सकता है। हे पाण्डव! तुमने राज्यसे भ्रष्ट होकर बारह-वर्ष वनमें और एक वर्षतक विराटनगरमें दासवृत्तिको अवलम्बन करके वास किया था, इससे राज्यसे भ्रष्ट होना, वनवास और द्रौपदीके दुःखको स्मरण करके पुरुष बनो। और भी शत्रुओंके तुल्य कठोर वचनोंको बार बार कहनेवाले दुःशासन आदि पुरुषोंके वचनको स्मरण करके भी तुमको क्रोध करना उचित है। हे पार्थ! युद्धमें तुम्हारा क्रोध बल, वीर्य्य, ज्ञान और शीघ्र शस्त्रका चलाना प्रकाशित होवे, तुम युद्ध करो, पुरुष बनो। तुम्हारे शस्त्रोंका संस्कार आदि भी हुआ है, और कुरुक्षेत्रकी भूमि भी बिना कीचड़के स्वच्छ और सुन्दर है, घोड़े पुष्ट हैं और सेनाके पुरुषोंको भी वेतन मिला हुआ है; इससे अब कृष्णके सङ्ग मिलकर कलही युद्ध करनेके निमित्त प्रवृत्त होजाओ। हे कौन्तेय! तुम युद्धमें भीष्मके सम्मुख बिना संग्राम किये हो व्यर्थ अपनी बड़ाई क्यों करते हो? जैसे कोई मनुष्य गन्धमादन पर्व्वतपर चढ़नेकी इच्छा करता है, तुम भी वैसा ही व्यर्थ गर्व्व कर रहे हो। इससे अपने मुखसे अपनी बड़ाई त्यागकर अब इस समयमें पुरुष बनो। संग्राममें वीरधुरीण सूतपुत्र कर्ण, बलवानोंमें श्रेष्ठ शल्य, इन्द्रके समान द्रोणाचार्य्यको बिना पराजित किये हो तुम क्यों राज्य ग्रहण करनेकी इच्छा करते हो? हे पार्थ! तुम जो वेदमन्त्र और धनुर्वेद दोनों विद्याओंके आचार्य्य वो शिरोमणि महा पराक्रमी अत्यन्त तेजस्वी सेनापति द्रोणाचार्य्यको जीतनेकी अभिलाषा करते हो, वह तुम्हारा उद्योग अत्यन्त ही व्यर्थ है; क्योंकि वायुसे सुमेरु पर्व्वत उड़ जावे; ऐसा कभी नहीं सुना गया है। यदि वायु कभी सुमेरु पर्व्वतको भी उड़ा सके, स्वर्ग पृथ्वीसे मिल जावे अथवा कालचक्रका परिवर्त्तन होजाय-तब हो तुम मुझको जो कहो, वह सम्भव हो सकता है; क्योंकि भीष्म और द्रोणाचार्य्यके शस्त्रकी चोटसे कौन मनुष्य जीते बचनेकी अभिलाषा करेगा? अर्ज्जुन हो होवे अथवा दूसरा हो कोई क्यों न होवे, कौन पुरुष युद्धमें इनके सम्मुखसे कुशलपूर्व्वक लौटकर अपने घरको जा सकेगा? युद्धमें ये लोग जिसको मारनेकी इच्छा अर्थात् अपने महा भयङ्कर अस्त्रोंसे उसके शरीरपर प्रहार करते हैं, पांवसे पृथ्वीपर गमन करनेवाला ऐसा कौन मरण धर्म्मशील मनुष्य जोवित रह सकता है? हे मन्दबुद्धि! तू कूएमें रहनेवाले मेढ़कको भांति मूढ़ होकर देवताओंसे रक्षित स्वर्गपुरीकी साक्षात् देवताओंकी राजाओंसे रक्षित प्राच्य सेनाके समान बलवान् इकट्ठी हुई प्रतीच्य, दाक्षिणात्य, औदीच्य, काम्बोजक शक, खश, शाल्व, मत्स्य, म्लेच्छ, द्राविड़, अन्ध, और काञ्चि देशीय आदि इस सम्पूर्ण राज सेनाका बोध करनेमें क्यों नहीं समर्थ होता है? अरे अल्पबुद्धि मूढ़! तू इस अपार गङ्गाके वेगके समान पूर्ण रूपसे बढ़े हुए नाना भांतिके अनेक वीर योद्धाओंके सहित और नावलके समान बोचमें स्थित मेरे सङ्ग युद्ध करनेको किस प्रकारसे अभिलाषा करता है? रे पार्थ! तेरे जो अक्षय दोनों तूणीर, अग्निका दिया हुआ दिव्य रथ और पताका है; वह रणभूमिमेंही जानो जावेगी। रे अर्ज्जुन! तू झूठी बड़ाईको

त्यागके अब युद्ध करके पराक्रम दिखा; निरर्थक बहुत ही वृथा गर्व्व क्यों करता है? केवल बातोंहीसे युद्ध सिद्ध न होता, पूर्ण रीतिसे पराक्रमको प्रकाशित करनेहीसे इसकी सिद्धि होती है। हे अर्ज्जुन! इस संसारमें यदि अपनी बड़ाई करनेहीसे यह कर्म्म सिद्ध होजावे ऐसा होनेसे सब ही कृतकार्य्य हो सकते हैं। क्योंकि व्यर्थ गर्व्वको प्रकाशित करनेमें कौन दरिद्र है? मैं तुम्हारे सहायक कृष्णको भी जानता हूं और ताल प्रमाण गाण्डीव धनुषको भी जानता हूं तथा तुम्हारे समान कोई वीर योद्धा नहीं है, उसे भी जानता हूं और जानकर ही तुम्हारे राज्यको ग्रहण कर रहा हूं। रे अर्ज्जुन! मनुष्य छल कपटसे कभी भी सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकता; एक मात्र विधाता ही अनुकूल होकर सबको उसके वशमें कर लेता है। मैंने तेरह वर्षतक तुम्हारे राज्यको भोग किया और तुम लोग विलाप करते हुए देखते ही रहे; अब इसके अनन्तर तुमको भाईयोंके सहित मारकर बहुत दिनतक इस राज्यका शासन करूंगा। रे अर्ज्जुन! जब तू दासभावसे परासे पराजित हुआ था, उन समयमें तेरा गाण्डीव धनुष कहां था और भीमसेनका बल भी क्या होगया था? उस समयमें एक मात्र निन्दारहित द्रौपदीके अतिरिक्त गदाधारी भीम और गाण्डीवधारा अर्ज्जुनसे तुम लोगोंको मुक्ति नहीं हुई थी। तुम लोग अमानुषी दासभावको प्राप्त होकर हम लोगोंके दास कर्म्ममें स्थित हुए थे; पाञ्चालनन्दिनी द्रौपदीहीने तुम लोगोंको मुक्त किया था। मैंने जो तुमको षण्ड कहा था, वह ठीक ही है; क्योंकि उस समयमें तुमने विराटनगरमें वेणी धारण की थी। और भी विराटकी पाकशालामें जो भीम भोजन बनाया करता था, वह मेरा ही पराक्रम था। रे अर्ज्जुन! क्षत्रियोंके निमित्त क्षत्रिय लोग इसी प्रकारसे दण्ड दिया करते हैं; देखो तुम नपुंसकके वेशमें वेणी धारण करके कन्याओंको नाचाना और गाना सिखाते थे। रे अर्ज्जुन! मैं कृष्णके भयसे अथवा तेरे भयसे कभी राज्य प्रदान न करूंगा; इससे कृष्णके सङ्ग मिलकर तुम युद्ध करो। क्योंकि संग्राममें शस्त्रधारी पुरुषके सम्मुखमें माया, इन्द्रजाल और बाजीगरी कभी भयङ्कर नहीं हो सकती, बल्कि क्रोधको ही उत्पन्न करती हैं। शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ मेरे सम्मुखमें आकर सहस्रों कृष्ण और सैकड़ों अर्ज्जुन दशो दिशामें भाग जावेंगे। रे नीचबुद्धि! तुम भीष्मके सङ्ग युद्ध करो, वा मस्तकके धक्केसे पर्व्वत तोड़ो, अथवा बाहुसे नीचे कहे हुए इस अगाध पुरुष-सागरको तर जाओ अर्थात् मस्तकसे पर्व्वत तोड़नेकी भांति ये दोनों कार्य्य असम्भव हैं। इस अगाध पुरुष-सागरमें कृपाचार्य्य महामीन, विविंशति महासर्प, भीष्म वेग, द्रोणाचार्य्य भयङ्कर ग्राह, कर्ण, शल और शल्य मकरी, काम्बोज बाड़वानल, वृहद्दल महा तरङ्ग, भूरिश्रवा तिमिंगल, युयुत्सु और दुर्म्मर्षण जल, भगदत्त वायु, श्रुतवायु और कृतवर्म्मा आरपार, दुःशासन प्रवाह, सुषेन और चित्रायुध नाग, जयद्रथ दूसरे किनारे पर रहनेवाले पर्व्वत, पुरुमित्र गम्भीरता, और शकुनि दूसरा किनारास्वरूप है। हे पार्थ! इस अक्षय अस्त्र प्रवाहसे युक्त अगम्य पुरुषसागरको तरते हुए जब तुम परिश्रमसे चेतरहित होजाओगे और तुम्हारे सब बन्धुबान्धव मारे जावेंगे, तभी तुम्हारे मनमें शोक उत्पन्न होगा और पापी मनुष्यका मन जैसे स्वर्गको अभिलाषासे निवृत्त होजाता है, उसी भांतिसे पृथ्वीको शासन करनेकी तुम्हारी अभिलाषा जाती रहेगी; क्योंकि तपसे हीन पुरुषको स्वर्गलोक पानेकी इच्छाके समान इस प्रशंसनीय पृथ्वीके राज्यको पाना तुम्हारे निमित्त बहुत ही कठिन कार्य्य है।

१५९ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले कितवनन्दन उलूक पाण्डवोंकी सेनामें पहुंचकर पाण्डवोंके समीप जाके राजा युधिष्ठिरसे यह वचन बोले, कि तुम दूतके कर्म्मको जानते हो, इससे दुर्य्योधनने मुझसे जो कुछ कहा है, वह कहूंगा, सुनकर मेरे ऊपर क्रोध न कीजियेगा।

युधिष्ठिर बोले, हे उलूक! तुम्हें कुछ भय नहीं है, अदीर्घदर्शी लोभी दुर्य्योधनका जो कुछ अभिप्राय है, तुम स्थिरचित्तसे उसे वर्णन करो।

अनन्तर उलूक महातेजस्वी महात्मा पाण्डव सञ्जय, मत्स्य, यशस्वी कृष्ण, पुत्रोंके सहित द्रुपद और विराटके समीप तथा सब राजाओंके बीचमें ये वचन कहने लगा;—हे युधिष्ठिर! महात्मा राजा दुर्य्योधनने सब कौरवोंके सम्मुख तुमको यह वचन कहा है; तुम सुनो। "हे पाण्डव! तुम स्वयं जुएमें पराजित हुए थे और द्रौपदी भी सभामें बुलाई गई थी, इससे पराक्रमी पुरुष अवश्य क्रोधित हो सकता है। तुमने राज्यसे भ्रष्ट होकर बारह वर्ष वनमें और एक वर्षतक दासवृत्ति अवलम्बन करके विराटके घरमें वास किया था। इससे राज्यका हरण, वनवास और द्रौपदीके दुःखका स्मरण करके पुरुष बनो। हे पाण्डव! निर्ब्बल होके भी भीमने जो प्रतिज्ञा की थी, उसके अनुसार उसे यदि शक्ति है, तो दुःशासनके रुधिरको पान करे। तुम्हारे सब शस्त्रोंके संस्कार हो चुके हैं, कुरुक्षेत्र भी इस समय कीचड़से रहित है, मार्ग भी समतल है, घोड़े भी हृष्ट-पुष्ट हैं, इससे कल्हि कृष्णके सङ्ग मिलकर युद्ध करो। हे कौन्तेय! तुम युद्धमें विना भीष्मके सम्मुख हुए हो अपनी व्यर्थ बड़ाई क्यों करते हो? कोई बुद्धिहीन मनुष्य जैसे गन्धमादन पर्व्वतके शिखरपर चढ़नेकी इच्छा करता है, तुम भी वैसे ही व्यर्थ अपनी बड़ाई करते हो; इससे अपने मुखसे अपनी बड़ाईका करना छोड़कर अब पुरुष बनो। संग्राममें महावीर कर्ण, बलवानोंमें श्रेष्ठ शल्य, इन्द्रके समान द्रोणाचार्य्यको विना पराजित किये ही तुम क्यों राज्य ग्रहण करनेकी इच्छा करते हो! हे पार्थ! तुम जो मन्त्रवेद और धनुर्वेदको जाननेवाले वीरधुरीण अपराजित महा पराक्रमी, महा-तेजस्वी सेनापति द्रोणाचार्य्यको जीतनेकी अभिलाषा करते हो, वह सब तुम्हारा उद्योग अत्यन्त ही व्यर्थ है। क्योंकि वायुके झकोरसे सुमेरु पर्व्वत उड़ जावे, ऐसा कभी नहीं सुना गया है। यदि वायु कभी सुमेरु पर्व्वतको उड़ा सके, स्वर्ग पृथ्वीसे मिल जावे अथवा कालचक्र परिवर्त्तित हो जावे, तब ही तुम मुझसे जो कुछ कहो, सब सम्भव हो सकता है। क्योंकि युद्धमें इस शत्रुनाशन द्रोणके सम्मुख होकर कौन पुरुष जीवित रह सकता है? घुड़सवार, गजपति, रथी अथवा कोई पुरुष क्यों न होवे, कौन युद्धमें उनके सम्मुखसे जीवित रहकर कुशलपूर्व्वक घरको लौट सकता है? युद्धमें भीष्म द्रोणके अस्त्रकी चोटसे विद्ध होकर पांवसे पृथ्वीको स्पर्श करनेवाला कौन मरण-धर्म्मशील मनुष्य जीतेजी निस्तार पा सकता है? रे मन्द बुद्धि! तू कूएमें रहनेवाले मेढककी भांति मूढ़ होकर देवताओंसे रक्षित स्वर्गपुरीकी भांति, प्रतीच्य दाक्षिणात्य, औदीच्य, काम्बोज, शक, शाल्व, म्लेच्छ, द्राविड़, आन्ध्र, और काञ्ची देशीय पुलिन्दगण आदि असंख्य राजाओंसे रक्षित साक्षात् देवताओंकी सेनाके समान महाबलवान् इस इकट्ठी हुई राजसेनाको बोध करनेमें क्यों नहीं समर्थ होता है? रे अल्पबुद्धिवाले! तू संग्राममें इस अपार गङ्गावेगके समान पूर्णरूपसे बढ़े हुए नाना भांतिके असंख्य वीर योद्धाओं और हाथियोंकी सेनाके बीच स्थित मेरे सङ्ग युद्ध करनेकी किस प्रकारसे अभिलाष करता है?

उलूक धर्म्मनन्दन युधिष्ठिरसे ऐसे वचन कहकर फिर अर्जुनकी ओर मुख फेरकर कहने लगा, "रे अर्जुन! तू झूठी बड़ाई त्यागकर

युद्ध क्यों नहीं करता ? निरर्थक बहुतसा वृथा गर्व्व क्यों करता है ? केवल बातोंहीसे युद्ध नहीं सिद्ध होता, पूरी रीतिसे पराक्रमको प्रकाशित करनेपर उसकी सिद्धि होती है। रे अर्ज्जुन ! लोकमें यदि अपनी बड़ाई करनेहीसे सब कर्म्म सिद्ध होजावें, तो ऐसा होनेसे सब ही कृतकार्य्य हो सकता है ; क्योंकि वृथा गर्व्व प्रकाशित करनेमें कौन दरिद्र है ? मैं तेरे सहाय कृष्णको भी जानता हूं, तालके प्रमाण गाण्डीव धनुषको भी जानता हूं और तेरे समान कोई वीर योद्धा नहीं है, इसे भी जानता हूं, और जान कर ही तेरे राज्यको धारण करताहूं। रे पार्थ ! मनुष्य कुल आदि कर्म्मोंसे कभी सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकता ; विधाता ही एक मात्र अपने सङ्कल्पसे सबको उसके वशमें करता है। मैंने इस तेरह वर्ष-तक तेरे राज्यको भोग किया ; तुम लोग केवल विलाप करते हुए देखते ही रहे ; अब तुमको बन्धुबान्धवोंके सहित मारकर बहुत दिनतक इस सम्पूर्ण राज्यका शासन करूंगा। रे अर्ज्जुन ! जब तू दासभावसे पराजित हुआ था, उस समय तेरा गाण्डीव धनुष कहां था और भीमसेनका बल कहां चला गया था ? उस समयमें निन्दा-रहित द्रौपदीके अतिरिक्त गदाधारी भीम और गाण्डीवधारी अर्ज्जुनसे तुम लोगोंकी मुक्ति नहीं हुई थी ; तुम लोग अमानुषी दासभावको प्राप्त कर हम लोगोंके दासकर्म्ममें स्थित थे ; उस समयमें पाञ्चालनन्दिनी द्रौपदीने ही तुम लोगोंको मुक्त किया था। मैंने जो तुमको षण्ड कहा था, वह यथार्थ ही है ; क्योंकि उस समय तुमने विराटनगरमें वेणी धारण की थी और विराटकी पाकशालामें भीम जो रसोई बनाता था, वह मेरा ही पराक्रम था। इससे क्षत्रिय लोग सदा क्षत्रियोंको इसी प्रकारसे दण्ड दिया करते हैं ; देखो तुम नपुंसकके वेशमें वेणी धारण करके कन्याओंको नाचना और गाना सिखाते थे। रे अर्ज्जुन ! मैं कृष्ण अथवा तेरे भयसे कभी राज्य न दूंगा इससे कृष्णके सङ्ग मिलकर मुझसे युद्ध कर ; क्योंकि संग्राममें शस्त्रधारी पुरुषोंके सम्मुख माया, इन्द्रजाल और बाजीगरी कभी भयङ्कर नहीं हो सकती ; बल्कि वह क्रोधहीको उत्पन्न करती है। शस्त्र-धारियोंमें श्रेष्ठ मेरे सम्मुख आकर सहस्रों कृष्ण और सैकड़ों अर्ज्जुन दशों दिशामें पलायन करेंगे। रे नीचबुद्धि अर्ज्जुन ! तू भीष्मके सङ्गमें संग्राम कर वा मस्तकसे पर्व्वतको तोड़ अथवा बाहुसे नीचे कहे हुए पुरुषसागरको तर जा। इस अगम पुरुषसागरमें कृपाचार्य्य महामीन, विविंशति महासर्प, वृहद्बल महातरङ्ग, भूरिश्रवा तिमिङ्गिल, भीष्म वेग, द्रोणाचार्य्य भयङ्कर ग्राह, कर्ण, शल और शल्य मकरी, काम्बोज बाड़वानल, युयुत्सु और दुर्म्मर्षण जल ; भगदत्त, श्रुतायु और कृतवर्म्मा आर-पार, दुःशासन प्रवाह, सुषेण और चित्रायुध नाग, जयद्रथ दूसरे किनारे पर रहनेवाले पर्व्वत, पुरुमित्र गम्भीरता और शकुनि दूसरा किनारा-स्वरूप है। रे पार्थ ! इस अक्षय शस्त्रप्रवाहसे युक्त पूर्ण रीतिसे बढ़े हुए पुरुषसागरको तरता हुआ जब तू परिश्रमसे थक कर चेतनारहित होजावेगा और तेरे बन्धु-बान्धव मारे जावेंगे तब ही तेरे मनमें बाध उत्पन्न होगा और पापी मनुष्यका चित्त जैसे स्वर्गकी अभिलाषसे निवृत्त होजाता है, वैसे ही पृथ्वीको शासन करनेकी अभिलाषासे तेरा अन्तःकरण भी निवृत्त होजावेगा, क्योंकि तपसे हीन पुरुषके स्वर्ग पानेकी आशाके समान इस प्रशंसनीय राज्यका प्राप्त करना तेरे निमित्त बहुत ही कठिन कार्य्य है।

१६० अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे महाराज ! उलूकने क्रोधसे पूरित विषधारी सर्पके समान वचनरूपी शलाकासे पाण्डवोंको पूर्ण रीतिसे पीड़ित करते हुए

दुर्य्योधनके कहे हुए सब वचनोंको फिर कहना आरम्भ किया। पाण्डव लोग पहिलेहीसे क्रुद्ध हो रहे थे; इस समय उसके उन वचनोंको सुनकर विशेष करके कितवपुत्रके समीप भी तिरस्कृत होकर एकवारगी अत्यन्त ही क्रोधमें भर गये। सब लोग अपने आसनों-परसे उठके खड़े होगये और भुजाओंको फटकारने लगे तथा एक दूसरेके मुखकी ओर देखने लगे। भीमसेन नीची गर्द्दन करके महाविषधारी सर्पकी भांति सांस लेते हुए लाल नेत्र करके कृष्णकी ओर देखने लगे। तब कृष्णने भीमसेनको अत्यन्त क्रुद्ध और व्याकुल देखकर हंसकर कितवपुत्रसे कहा, कि हे उलूक! तुम शीघ्र यहांसे जाकर दुर्य्योधनसे कहो, कि तुम्हारा वचन भी सुना गया और अर्थ भी ग्रहण किया गया। तुम्हारा जैसा अभिप्राय है, वैसा ही होगा। हे राज-सत्तम! महाबाहु कृष्ण उलूकसे ऐसा कहकर फिर महाबुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरकी ओर देखने लगे। उलूकने भी सम्पूर्ण सृञ्जय, यशस्वी कृष्ण, पुत्रोंके सहित द्रुपद, और विराटके समीप तथा सब राजाओंके बीच अपने वचनरूपी शलाकासे क्रोधसे युक्त विषैले सर्पके समान अर्जुनको पीड़ित करते हुए दुर्य्योधनके कहे हुए सब वचनोंको फिर वर्णन किया और कृष्ण आदि सब राजाओंसे भी दुर्य्योधनके कहे हुए यथार्थ वचनोंको कह दिया। अर्जुन उलूकके कहे हुए महाकठोर तथा दारुण वचनोंको सुनकर अत्यन्त ही क्रुद्ध हुए और मस्तकसे पसीना पोंछने लगे। हे महाराज! उस सम-यमें वह राजसभा अर्जुनकी ऐसी अवस्थामें देखकर अत्यन्त ही अधीर हो गई; पाण्डवोंके महारथ वीर लोग महात्मा कृष्ण और अर्जुनके अपमानको सुनकर किसी प्रकारसे भी धीरज न धर सके। स्वाभाविक स्थिरचित्त होकर भी ये पुरुषसिंह वीर लोग उलूकके वचनको सुनकर क्रोधसे प्रज्वलित होगये। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी, केकयराजके पांचो पुत्र, राक्षस घटोत्कच, द्रौपदीके पांचो पुत्र, अभिमन्यु, धृष्टकेतु, भीमसेन और नकुल, सहदेव आदि सब ही वीर लोग चन्दनचर्चित सब भूषणोंसे भूषित भुजाओंको उठाकर आसनोंसे कूदकर खड़े होगये। भीमसेन उन सबके आकार और इशारेको जानकर क्रोधसे जलते हुए दांतसे दांत पीसते और ओठोंको काटते हुए वेगसे उठ खड़े हुए। वह अकस्मात् दोनों नेत्र लाल करके हाथसे हाथ रगड़ते और दांतोंको कट कटाते हुए उलूकसे यह वचन बोले, रे मूर्ख! दुर्य्योधनने तुझसे जो सब वचन कहे थे, अस-मर्थकी भांति हमलोगोंकी उत्तेजनाके निमित्त तेरे वह वचन सुने गये। इस समय तू जाकर सूतपुत्र कर्ण और दुष्टात्मा शकुनिके सम्मुख दुर्य्योधनसे जो वचन कहेगा, उसे सुन मैं कहता हूं। "रे दुराचारी! मैंने जेठे भाईकी प्रीतिके वशमें होकर तेरी दुष्टताको सहा था; परन्तु तू उस बातको नहीं समझता है, धर्म्मराज युधिष्ठिरने कुलकी हितकामनासे ही शान्तिकी इच्छा करके कौरवोंके बीच कृष्णको भेजा था; परन्तु तू अत्यन्त ही कालके वशमें होकर यम-पुरीमें जानेकी अभिलाषा करता है; इससे अब आ हम लोगोंसे युद्ध कर; युद्ध भी कल्ह ही होगा। रे पापी! मैंने जो भाइयोंके सहित तेरे मारनेकी प्रतिज्ञा की है, वह अवश्य उसी भांतिसे सिद्ध होगी; उस विषयमें तू कुछ भी सन्देह मत कर। समुद्र यदि अपनी मर्य्या-दाको लांघकर शीघ्र पृथ्वीको डुबा दे, पर्व्वत सब टुकड़े टुकड़े होजावें, तौभी मेरे वचन कभी मिथ्या न होंगे। रे नीचबुद्धि दुर्य्योधन! जो यम, कुवेर और साक्षात् रुद्र आकर तेरी सहायता करें, तौभी पाण्डव लोग अपनी प्रति-ज्ञाका अवश्य पालन करेंगे। मैं अपनी इच्छाके अनुसार अवश्य दुःशासनका रुधिर पीऊंगा और

उस समय जो कोई क्षत्रिय क्रुद्ध होकर मेरे सम्मुख आवेगा, वह चाहे भीष्मको भी आगे करके आवे, तौभी उसको यमपुरीमें भेज दूंगा। मैंने क्षत्रियोंके बीचमें जो कुछ वचन कहा है, उस विषयमें मैं अपने आत्माकी शपथ करके कहता हूं, कि वह वचन अवश्य ही सत्य होंगे। भीमसेनकी बातको सुनकर शत्रुनाशन सहदेव भी क्रोधसे लाल नेत्र करके अहंकारी शूरवीरकी भांति सेनाके पुरुषोंके बीच उलूकसे यह बोले;—रे पापी! तू अपने पितासे जो वचन कहेगा, वह मुझसे सुन। "यदि तुम्हारे सङ्ग धृतराष्ट्रका सम्बन्ध न होता, तो हम लोगोंकी कौरवोंसे कभी जुदाई न होती। रे पापी! तू धृतराष्ट्रके कुल, अपने कुल और सब लोगोंके विनाशके निमित्त साक्षात् वैरकी मूर्त्तिवाले पुरुषरूपसे उत्पन्न हुआ है। रे उलूक! तेरा पापी पिता जन्मसे ही हम लोगोंके सङ्ग बुराई कर रहा है, इससे मैं उसी शत्रुताके सम्बन्धसे इस कठिन कर्म्मको करूंगा; कि शकुनिके सम्मुख पहिले तुझे मारकर पीछे इच्छाके अनुसार सब धनुर्द्धारिओंके सम्मुख ही शकुनिको मारूंगा। भीम और सहदेवकी बात सुनकर अर्जुन हंसते हुए भीमसेनसे यह वचन बोले, हे भीम! तुम्हारे संग जिसकी शत्रुता होती है, वह जीता नहीं बचता; घरमें सुखसे सोता हुआ वह पापी मृत्युके वशमें ही हो रहता है; परन्तु हे पुरुषसिंह! उलूकको कठोर वचन कहना तुम्हें उचित नहीं है; क्योंकि दूत लोग क्या अपराध करते हैं? वह यथार्थ कहे हुए वचनको ही कहते हैं। महाबाहु अर्जुन पराक्रमी भीमसे ऐसा कहकर सुहृद वीरपुरुषोंसे बात चीत करते हुए धृष्टद्युम्न आदिसे बोले; आप लोगोंने उस पापी दुर्य्योधनकी कटूक्ति विशेष करके कृष्णकी और मेरी निन्दा सुनी है और सुनकर हम-लोगोंके हितकी इच्छासे सब कोई क्रुद्ध होगये हैं। मैं कृष्णके प्रभाव और आप लोगोंकी सहायतासे पृथ्वी मात्रके क्षत्रियोंको कुछ नहीं गिनता हूं। इस समय इस वचनका जो उत्तर होगा;—उलूक दुर्य्योधनसे जो कहेगा; आप लोगोंकी अनुमतिसे मैं वह सब उलूकसे कह दूंगा। इस वचनका जो उत्तर है, वह कल्ह सेनाके सम्मुख गाण्डीव धनुषसे वर्णन करूंगा। क्योंकि नपुंसक और असमर्थ लोग ही वचनसे उत्तर दिया करते हैं।

अनन्तर वह सब राजसत्तम राजा लोग अर्जुनकी बात सुनकर विस्मित होके उनकी प्रशंसा करने लगे। तब धर्म्मराज युधिष्ठिर अवस्थाके अनुसार सबको विनीत भावसे शान्त करके अपनी ओरसे दुर्य्योधनसे कहनेके निमित्त उलूकसे यह वचन बोले;—कोई राजा अपनेको अपमानित समझ कर शान्त नहीं रह सकते; इससे मैं तुम्हारे वचनोंको सुननेमें रत था; अब उसका प्रत्युत्तर करूंगा। हे भरतर्षभ! धर्म्मात्मा युधिष्ठिर दुर्य्योधनके उस वचनको सुनकर क्रोधमें भर कर गर्व्वित-पुरुषकी भांति लाल नेत्र करके विषधारी सर्पके समान लम्बी सांस छोड़ते और दांतोंको पीसकर कृष्ण और भाइयोंके मुखकी ओर देख अपनी प्रचण्ड भुजाको उठाकर कितवनन्दनसे बोले, हे तात उलूक! तुम कुलघाती, कृतघ्न, वैरकी मूर्त्ति, नीचबुद्धि दुर्य्योधनके समीप जाकर उससे यह वचन कहो, कि रे पापी! तू पाण्डवोंके निमित्त सदा ही कुटिल आचरण करता रहता है। रे मूर्ख! जो पुरुष अपने बल और पराक्रमसे शत्रुओंको आवाहन करता है और निर्भय होकर अपना वचन पूरा करता है; उसको ही क्षत्रिय पुरुष कहते हैं। रे कुलघाती! इससे तू क्षत्रिय होकर युद्धमें हम लोगोंको आवाहन क्यों नहीं करता? मानके पात्र इष्टमित्रोंको आगे करके क्या युद्धकी अभिलाषा करता है? रे कौरव! तू अपने बल और सेवकोंके परा-

क्रमके आसरेसे पाण्डवोंको युद्धमें आवाहन करके सब भांतिसे क्षत्रिय पुरुष क्यों नहीं बनता? रे अधम पुरुष! जो पराये बलके अवलम्बसे शत्रुओंको आवाहन करता है और स्वयं उसके सन्मुख होनेमें असमर्थ रहता है; उसे बुद्धिमान् लोग नपुंसकोंमें गिनते हैं; इससे जब तू स्वयं असमर्थ होकर दूसरेके पराक्रमसे अपनेको बलवान् समझता है, तो फिर किस प्रकारसे हम लोगोंके सङ्ग इतना तर्जन गर्जन कर रहा है?

कृष्ण बोले, हे उलूक! तुम मेरे इस वचनको भी दुर्य्योधनसे कहना, कि रे नीचबुद्धि दुर्य्योधन! तूने कहा है, कल युद्ध होगा; तो इस समय उस कर्म्मको करके अब पुरुषार्थ अवलम्बन कर। रे मूढ़! तू जो ऐसा समझता है, कि पाण्डवोंने कृष्णको केवल सारथी-कर्म्मके वास्ते वरण किया है,—इससे वह युद्ध न करेंगे; ऐसा समझ कर ही जो तू निर्भय हो रहा है, वैसा किसी कालमें भी न होगा; क्योंकि क्रुद्ध होनेपर मैं तृणसमूहको भस्म करनेवाले आगकी भांति सब राजाओंको भस्म कर सकता हूं। किन्तु युधिष्ठिरकी आज्ञासे युद्धमें प्रवृत्त हुए विजयी अर्जुनके रथका सारथी ही बनूंगा। तू यदि तीनों लोकको लांघकर भाग जावे अथवा पृथ्वीके बीच प्रवेश करे, तोभी कल उसी उसी स्थानपर अर्जुनके रथको देखेगा। तुम भीमसेनके वचन व्यर्थ समझते हो; परन्तु इस समय यह निश्चय कर रक्खो, कि दुःशासनका रुधिर पान हो चुका है और यह भी जान रक्खो, कि विरुद्ध वचन बोलने पर अर्जुन, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव कोई भी तुम्हें कुछ भी समर्थ नहीं समझते हैं।

१६१ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे भरतर्षभ! महायशस्वी अर्जुन दुर्य्योधनके वचनोंको सुनकर कृष्णके मुखको ओर देखकर उलूककी ओर लाल नेत्र करके यह वचन बोले, जो पुरुष अपने पराक्रमके आसरेसे शत्रुओंको आवाहन करके निर्भय होकर युद्ध करता है, उसको ही पुरुष कहा जाता है; परन्तु जो पराये बलके आसरे शत्रुओंको आवाहन करता है, उसे पुरुषोंमें असमर्थ अधम क्षत्रिय-पुरुष कहते हैं। रे मूर्ख! तू भी पराये बलसे अपनेको बलवान् समझ रहा है और स्वयं कापुरुष होकर भी शत्रुओंके जीतनेकी अभिलाष करता है। रे नीचबुद्धि मूर्ख! तू जो सब राजाओंमें बूढ़े, हित करनेवाले, इन्द्रियोंको जीतनेवाले, महाबुद्धिमान् भीष्मको मरनेके निमित्त तैयार करके वृथा बड़ाई कर रहा है; उसका अभिप्राय हम लोगोंको विदित है। रे दुष्ट! तेरा यह अभिप्राय है, कि अर्जुन दया करके गंगानन्दन भीष्मको नहीं मारेगा। रे दुर्य्योधन! तू जिसके बलके आसरेसे वृथा गर्व्व कर रहा है; उस भीष्मको मैं इच्छापूर्व्वक सब धनुर्द्धारियोंके सन्मुख पहिले ही मारूंगा।

हे उलूक! तुम कौरवोंके बीचमें जाकर दुर्य्योधनसे यह वचन कहो, कि सव्यसाची अर्जुनने भी यही वचन कहा है;—रात बीतनेपर सवेरे ही युद्ध आरम्भ होगा। महापराक्रमी सत्यप्रतिज्ञ करनेवाले भीष्म कुरुगणके बीच सबके आनन्दको बढ़ाते हुए "मैं सृञ्जयोंकी सेना और शाल्वके लोगोंको युद्धमें मारूंगा, इसका भार मेरे ही ऊपर है। मैं द्रोणाचार्य्यको छोड़कर अकेला ही सब लोगोंका संहार कर सकता हूं; इससे पाण्डवोंसे तुम्हें कुछ भय नहीं है।" यह जो वचन कहा है, उससे तुम्हें ऐसा ज्ञान हुआ है, कि सब राज्य मेरा हुआ और पाण्डव लोग सदाके लिये आपद्ग्रस्त हुए। तुम इससे

अभिमान द्वारा मतवारे होकर अपनेमें जो सब अनर्थ विद्यमान हैं, उन्हें नहीं देख सकते हो। इससे तुम्हारे सम्मुख ही मैं भीष्मको युद्धमें सबसे पहिले मारूंगा। सूर्य्यके उदय होते ही तुम रथी और ध्वजधारी होकर सत्यप्रतिज्ञा करनेवाले भीष्मकी रक्षा करो, क्योंकि तुम लोगोंके सम्मुख ही मैं द्वीप अर्थात् रक्षकस्वरूप महावीर भीष्मको अपने तेज बाणोंकी सहायतासे रथमेंसे पृथ्वीपर गिरा दूंगा। दुर्य्योधन कल पितामह भीष्मको मेरे बाणोंसे छिपा हुआ देखकर बड़ाईका वचन कैसा है, विशेष रूपसे जान जावेगा। रे दुर्य्योधन! भीमसेनने क्रोधसे भर कर सभाके बीचमें तुम्हारे भाई नीच, अधर्मी, सदा बैरी, पापी, दुष्ट, अधम पुरुष दुःशासनको जो कुछ वचन कहा था, उस सत्य प्रतिज्ञाको तू शीघ्र ही पूरी होते देखेगा। और अभिमान गर्व्व, क्रोध, कड़ा वचन, निठुरता, अपनी बड़ाई, निर्दयता, टेढ़ापन, धर्म्मसे द्वेष, अधर्म्म, निन्दा, बूढ़ोंके वचनोंका अनादर आदि सब बुरे कर्मोंका फल भी भली भांति देखेगा। रे अधम पुरुष! रे मूढ़! कृष्णको सहाय बनाकर मेरे क्रुद्ध होनेपर तेरे प्राण और राज्यकी कैसे आशा की जा सकती है? मैं जिस समय भीष्म और द्रोणाचार्य्यको शान्त करूंगा और सूतपुत्र कर्णको मारूंगा तब ही तू जीते जी राज्य और पुत्रसे निरास हो जावेगा। रे दुर्य्योधन! तू भाई और पुत्रोंका मरना सुनकर और स्वयं भीमसेनकी गदाके दारुण चोटसे विकल होकर अपने किये हुए सब पापोंको स्मरण करेगा। रे धूर्त्त! मैं दोबार कभी प्रतिज्ञा नहीं करता, तुझसे सत्य ही कहता हूं, कि मैंने जो कुछ वचन कहे हैं, सब ही सत्य होंगे।

युधिष्ठिर भी उलूकसे यह वचन बोले, हे तात उलूक! तुम दुर्य्योधनके समीप जाकर मेरे इस वचनको कहना, कि अपने चरित्रके दृष्टान्तसे मेरे चरित्रको बोध करना तुमको उचित नहीं है। दोनोंका अन्तर और सत्य तथा मिथ्याका प्रभेद मुझे विदित है। हे तात! मैं किस भांतिसे जातीय लोगोंके वधकी अभिलाषा करूंगा? मैं कभी कोट और चींटी आदिका भी अनिष्ट करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। रे नीच बुद्धि मूर्ख! किसी प्रकारसे तेरी महाविपद देखनी न पड़े, इसी निमित्त मैंने पहिले केवल पांच ही गांव मांगे थे, परन्तु तू मूढ़ता युक्त लोभमें पड़ कर वृथा गर्व्व कर रहा है, और कृष्णके भी उत्तम वचन तूने नहीं ग्रहण किये। इस समय अब बहुत बातोंके व्यय करनेका क्या प्रयोजन है? बन्धुबान्धवोंके सहित मिल कर युद्ध कर। हे उलूक! मेरी बुराई करनेवाले दुष्ट दुर्य्योधनसे कहना, कि तुम्हारे वचन भी सुने गये और अर्थ भी ग्रहण किया गया; तुम्हारा जैसा अभिप्राय है, वैसा ही होगा।

अनन्तर भीमसेन फिर बोले, हे उलूक! उस नीच-बुद्धि, पापी बुरे कर्म्म करनेवाले, शठ दुष्ट राजपुत्र दुर्य्योधनसे मेरा यह वचन कहना, कि या तो तुम गिद्धके पेटमें जाओगे अथवा हस्तिनापुरमें निवास करोगे। रे पुरुषाधम! मैं तेरे निकट यह शपथ करके कहता हूं, मैंने सभाके बीच जो कुछ प्रतिज्ञा की है, उसे अवश्य पूरी करूंगा; युद्धमें दुःशासनका रुधिर पान करूंगा और तुम्हारी भी दोनों जङ्घाओंको तोड़के तुम्हारे सब भाइयोंको मारूंगा। रे दुर्य्योधन! मैं सब धृतराष्ट्रके पुत्रों और अभिमन्यु सब राजपुत्रोंका साक्षात् मृत्युस्वरूप हूं। रे दुर्य्योधन! मैं अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार तुम सबको तो सन्तुष्ट करूंगा ही; परन्तु उसके अतिरिक्त और भी मेरी एक बात सुनो, मैं तुमको भाइयोंके सहित मारकर धर्म्मराजके सम्मुख ही अपने पांवसे तुम्हारे सिरपर आघात करूंगा।

हे राजन्! अनन्तर नकुल यह वचन बोले,

हे उलूक! तुम कौरवोंमें नीच दुर्य्योधनसे कहना, कि तुम्हारी सब बातें सुनी गईं। हे कौरव! मुझे जैसी आज्ञा दी है, मैं उसको पूर्ण करूंगा। हे राजन्! सहदेवने भी ऐसे ही वचन कहे, कि दुर्य्योधन? तुम्हारी जैसी बुद्धि है, वैसे ही हम लोगोंके इस क्लेशको देखकर तुम आनन्दित होकर अपनी बड़ाई कर रहे हो, परन्तु पुत्र, भाई और जातिके लोगोंके सहित शोकित तथा दुःखित होओगे।

बूढ़े राजा विराट और द्रुपदने भी उलूकसे यह वचन कहा, कि धर्म्मात्मा पुरुषके सेवक बनें, यह हम लोगोंके निमित्त बहुत ही उत्तम है; परन्तु हम लोग दास हैं, वा प्रभु और जिसका जैसा पराक्रम है, वह कल्ह ही प्रकाशित होजावेगा।

अनन्तर शिखण्डीने उलूकसे यह वचन कहा, कि पापी राजा दुर्य्योधनसे तुम यह वचन कहा, कि "हे राजन्! मैं युद्धमें कैसा भयङ्कर कर्म्म करता हूं, उसे तुम प्रत्यक्ष देखोगे जिसके बलकी आशासे तुम अपनी विजयका निश्चय करते हो, तुम्हारे उसी पितामहको मैं रथसे पृथ्वीपर गिराऊंगा; विधाताने मुझे भीष्मके वध करनेहीके निमित्त उत्पन्न किया है; इससे मैं सब धनुर्द्धारियोंके सम्मुख भीष्मको अवश्य ही मारूंगा; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

धृष्टद्युम्न भी कितव-पुत्र उलूकसे यह वचन बोले, कि तुम मेरी ओरसे जाकर दुर्य्योधनसे यह वचन कहना, कि मैं बन्धु बान्धवोंके सहित द्रोणाचार्य्यको मारूंगा और ऐसा कर्म्म करूंगा, कि जैसा कोई भी कभी नहीं कर सकेगा।

अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिर करुणा प्रकाशित करके उलूकसे बोले, हे राजन्! मैं किसी प्रकारसे भी जातिके लोगोंके वधकी इच्छा नहीं करता हूं; परन्तु तुम्हारी नीचबुद्धिके दोषसे यह सब भांतिसे करना ही पड़ेगा; धृष्टद्युम्न आदि वीरोंके प्रतिज्ञा पालन करनेके विषयमें मुझे अवश्य आज्ञा देनी पड़ेगी। हे उलूक! इससे इच्छा हो शीघ्र जाओ, अथवा यहांपर ही निवास करो; क्योंकि हम लोग भी तुम्हारे बन्धु हैं।

हे राजन्! अनन्तर उलूक, धर्म्म-पुत्र युधिष्ठिरकी आज्ञा लेकर दुर्य्योधनके समीप गये। वहांपर क्रोधी दुर्य्योधनके निकट पहुंचकर उन्होंने अर्ज्जुनके कहे हुए यथार्थ वचनोंको वर्णन किया। श्रीकृष्ण, भीम, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न और शिखण्डीके वचन तथा कृष्ण अर्ज्जुनके यथार्थ सन्देसेको सुनकर दुःशासन, कर्ण और शकुनिसे बोले, कि तुम लोग राजाओं और अपनी सेनाओंमें यह आज्ञा प्रचार करो, कि सूर्य्यके उदय होनेके पहिले ही सम्पूर्ण सेना युद्धके निमित्त सजके खड़ी रहे। अनन्तर कर्णकी आज्ञा पाते ही दूत लोग रथ, ऊंट, और कोई घोड़ोंपर चढ़के कर्णकी आज्ञाके अनुसार सब सेनामें घूमकर सूर्य्यके उदय होनेके पहिले सेनाको युद्धके निमित्त सजाकर तयार रखनेके निमित्त गये।

१६२ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, उलूककी बात सुनकर कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर धृष्टद्युम्नको आगे करके चलनेवाली सेनाको युद्धके निमित्त यात्रा करनेकी आज्ञा दी। धृष्टद्युम्नके वशमें चलनेवाली, पृथ्वीके समान स्थिर, घोड़े, हाथी और पैदलोंसे युक्त वह चतुरङ्गिनी सेना अर्ज्जुन भीम आदि महारथ वीरोंसे रक्षित होकर अगम समुद्रकी भांति दीखने लगी। महाधनुर्द्धारी द्रोणाचार्य्यके वधकी इच्छा करनेवाले शत्रुनाशन धृष्टद्युम्न उस सेनाके आगे होकर सैनिक पुरुषोंका निर्व्वाचन करके सबको आकर्षण करते हुए चलने लगे। इस अग्निवर्णवाले महाधनुर्द्धारी धृष्टद्युम्नने बल और उत्साहके अनुसार रथियोंको युद्ध करनेके निमित्त निश्चित किया, कर्णसे

अर्जुन, दुर्य्योधनसे भीम, शल्यसे धृष्टकेतु, कृपाचार्य्यसे उत्तमौजा, अश्वत्थामासे नकुल, कृतवर्म्मासे शैव्य और जयद्रथके निमित्त वृष्णिवंशीय युयुधानको नियुक्त किया। भीष्मके सम्मुख शिखण्डीको स्थापित किया। शकुनिसे सहदेव, शलसे चेकितान और त्रिगर्त्तसे युद्ध करनेके निमित्त द्रौपदीके पांचों पुत्रोंको निश्चित किया। वृषसेन और शेषराजाओंके निमित्त अभिमन्युको नियुक्त किया; क्योंकि उसको वह अर्जुनसे भी युद्ध करनेमें अधिक सामर्थ्यवान् समझते थे। तेजस्वी सेनापति धृष्टद्युम्न सब योद्धाओंको पृथक् पृथक् और इकट्ठे विभाग करके द्रोणाचार्य्यको अपने अंशमें निश्चित किया और उसी प्रकारसे व्यूह बनाकर युद्धके निमित्त तैयार होकर सम्पूर्ण सेनाको सजाके पाण्डवोंके जयके निमित्त रणभूमिमें आकर खड़े हुए।

१३४ अध्याय समाप्त।

अब रथी-अतिरथो सख्या
निरूपण करेंगे।

राजा धृतराष्ट्र बोले, अर्जुनने युद्धमें भीष्मके वध करनेकी प्रतिज्ञा की, इसको सुनकर मेरे नीचबुद्धि पुत्रोंने क्या किया? मुझे बोध होता है, कि कृष्णकी सहायतासे युक्त दृढ़ धनुर्द्धारी अर्जुन युद्धमें जेठे पिता गङ्गानन्दन भीष्मको अवश्य ही वध करेगा। हे सञ्जय! अर्जुनकी प्रतिज्ञा सुनकर वह महाबुद्धिमान्, महाधनुर्द्धारी शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कौरव धुरन्धर महातेजस्वी और पराक्रमसे युक्त भीष्मने ही क्या कहा और सेनापति बनकर किस प्रकारसे उद्योग किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सञ्जयने अत्यन्त तेजस्वी कौरवोंमें बूढ़े भीष्मने जैसा वचन कहा था, वह सम्पूर्ण वृत्तान्त धृतराष्ट्रसे वर्णन किया।

सञ्जय बोले, हे राजन्! भीष्म सेनापति होकर दुर्य्योधनको आनन्दित करते हुए यह वचन बोले, मैं शक्तिको ग्रहण करनेवाले सेनापति स्वामकार्त्तिकको नमस्कार करके आज तुम्हारा सेनापति बनूंगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मैं सेनाका कर्म्म और अनेक भांति व्यूह रचनेमें अभिज्ञ हूं और वेतन पानेवाले तथा मित्रतासे इकट्ठे हुए सैनिक पुरुषोंसे जैसा कर्म्म कराना उचित है, वह भी जानता हूं। हे महाराज! युद्धयात्रा, और दूसरेके शस्त्रोंका निवारण तथा प्रतीकार करनेमें मैं वृहस्पतिके समान बुद्धिमान् हूं। मैं जो देवता, गन्धर्व और मनुष्य सम्बन्धीय सब व्यूहको रचना करना जानता हूं, उसहीसे पाण्डवोंको मोहित करूंगा; इससे तुम अपनी सब चिन्ता दूर करो। हे राजन्! तुम्हारी सेनाकी सब प्रकारसे रक्षा करते हुए मैं शास्त्रके अनुसार निष्कपट चित्तसे युद्ध करूंगा, इससे तुम अपनी सब चिन्ता और शोक दूर करो।

दुर्य्योधन बोले, हे महाबाहो गङ्गानन्दन भीष्म! मैं तुमसे यह सत्य वचन कहता हूं कि सम्पूर्ण देवता और असुरोंसे भी मुझे कुछ भय नहीं है; तुम्हारे समान महावीर पुरुषके सेनापति होने और पुरुषसिंह द्रोणाचार्य्यके प्रसन्नतापूर्व्वक युद्धमें स्थित रहनेपर जो भय नहीं रहेगा, इसमें कौनसा सन्देह है? हे भरतश्रेष्ठ! पुरुषोंमें मुख्य आप दोनों महावीर पुरुषोंके स्थित रहनेपर मेरा निश्चय ही विजय होगा; विजयकी तो बात ही क्या है, देवताओंका राज्य भी मुझे दुर्लभ नहीं है। हे कौरव! अब इस समयमें शत्रुओं और तुम्हारी सेनामें कितने रथी और अतिरथी हैं, उनको मैं जाननेकी इच्छा करता हूं। हे पितामह! तुम अपने और शत्रुपक्षके वीरोंको खूब ही जानते हो, इससे मैं इन सम्पूर्ण राजाओंके सहित इस वृत्तान्तको सुननेकी अभिलाषा करता हूं।

भीष्म बोले, हे गान्धारीनन्दन राजेन्द्र! अपनी सेनाके बीच रथियोंकी संख्या सुनो, जो

लोग रथी और अतिरथी हैं, वह मैं सब वर्णन करता हूं। हे राजन्! तुम्हारी सेनाके बीच कई सहस्र, कई लाख और अनेक अर्बुद रथी हैं; उनमें जो मुख्य हैं, उनका नाम कहता हूं, तुम सुनो। पहिले दुःशासन आदि सौ भाइयोंके सहित तुम ही एक प्रधान रथी हो; तुम लोग सब ही शस्त्र चलानेके विषयमें कृतकार्य्य और छेदन, भेदन आदि सब विषयोंकी जाननेवाले हो। तुम लोग रथ और हाथियों पर चढ़के जैसे लड़नेवाले हो, वैसे ही गदा, प्रास, तलवार आदि शस्त्रोंके भी चलानेवाले हो; तुम लोग शस्त्रको चलाने और भार उठानेमें समर्थ और अस्त्र शस्त्र तथा मन्त्रमें द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यके शिष्य हो। यह मनस्वी धार्त्तराष्ट्रगण पाण्डवोंके ऊपर क्रुद्ध होकर युद्धमें मतवारे पाञ्चाल-वीरोंको मारेंगे। हे भरतश्रेष्ठ! तुम सबका सेनापति मैं भी तुम्हारे शत्रु पाण्डवोंका पराजय साधन करता हुआ सबका नाश करूंगा। हे राजन्! अपना गुण सम्पूर्ण रूपसे वर्णन करना मुझे उचित नहीं है, मैं जैसा हूं, उसे तुम जानते ही हो। शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ अतिरथी भोजराज कृतवर्म्मा भी युद्धमें तुम्हारी अर्थसिद्धि करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है; यह शस्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ दृढ़शस्त्र और दूरतक अस्त्रोंके चलानेमें समर्थ हैं, इससे इन्द्र जैसे दानवोंका संहार करते हैं, वैसे ही यह शत्रुओंकी सेनाको नष्ट करेंगे। मेरी समझमें महाधनुर्द्धारी मद्रराज शल्य भी एक मुख्य अतिरथी हैं, यह राजसत्तम युद्धमें कृष्णके सङ्ग सदा लड़नेकी इच्छा करते हैं, विशेष करके अपने भागिनेयोंका त्याग करके तुम्हारा पक्ष अवलम्बन किये हुए हैं; इससे यह समुद्रकी तरङ्गके समान अपने बाणोंसे शत्रुओंको दूर करते हुए महारथ पाण्डवोंके सङ्ग युद्ध करेंगे। महाधनुर्द्धारी रथयूथपतियोंका भी यूथपति सोमदत्तके पुत्र भूरिश्रवा कृतास्त्र भी हैं और तुम्हारे हितकारी मित्र भी हैं; इससे यह शत्रुओंकी सेनाका खूब ही विध्वंस करेंगे। हे महाराज! सिंधुराज जयद्रथको मैं द्विगुणरथ समझता हूं; यह राजसत्तम! सम्पूर्ण रूपसे पराक्रम प्रकाशित करके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे; हे राजन्! द्रौपदीहरणके समयमें पाण्डवोंने जो इन्हें अत्यन्त क्लेश दिया था, उसे पूर्ण रीतिसे स्मरण करके यह शत्रुनाशी वीर युद्धमें प्रवृत्त होंगे। हे राजन्! उस समयमें इन्होंने बहुत कठिन तपस्या करके महादेवसे अत्यन्त दुर्लभ वर पाया था; इससे हे तात! यह राज-शार्दूल जयद्रथ युद्धमें उस वैरका स्मरण करके अपने प्रिय प्राणको त्याग करके भी पाण्डवोंके संग युद्ध करेंगे।

१६४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजसत्तम! काम्बोज-राज सुदक्षिण एकगुणी रथी हैं; तुम्हारी अर्थसिद्धिकी इच्छा करके यह शत्रुओंसे युद्ध करेंगे। कौरव लोग युद्धमें तुम्हारे निमित्त शस्त्र चलानेवाले इस रथसिंहका इन्द्रके समान पराक्रम देखेंगे; क्योंकि इनके रथके समूह शलभपुञ्जकी भांति तीव्र वेगसे युक्त काम्बोज वीरोंका विस्तार दीख पड़ेगा। हे महाराज! माहिष्मतीवासी नीलवर्म्मा नीलराज भी रथी है; ये अपने रथके समूहसे तुम्हारे शत्रुओंका नाश करेंगे; हे कुरुनन्दन! पहिले सहदेवने इनके संग शत्रुताकी थी, इससे तुम्हारे निमित्त ये स्थिर होके युद्ध करेंगे। हे तात! महाबलवान्, पराक्रमी, युद्ध-कर्म्मको जाननेवाले अवन्तिदेशीय विन्द और अनुविन्द उत्तम रथी कहके विख्यात हैं। हे महाराज! युद्धमें क्रीड़ा करनेवाले दो मतवारे हाथियोंकी

भांति युद्धकी इच्छासे ये पुरुषसिंह रणभूमिमें कालके समान घूमते हुए अपने हाथसे गदा, प्रास,तलवार और तोमर आदि शस्त्रोंको चलाकर शत्रुओंकी सेनाको भस्म करते रहेंगे। हे राजेन्द्र। त्रिगर्त्त लोग पांचों भाई मेरे मतमें रथश्रेष्ठ हैं। विराट-नगरमें पाण्डवोंने इनके सङ्ग शत्रुता की थी इससे घड़ियार मगर जैसे तरङ्गसे युक्त भरी हुई गङ्गाको मथते हैं, युद्धमें ध्वजाधारी पाण्डवोंकी सेनाको भी ये लोग वैसे ही तितर बितर करेंगे। इन पांच रथियोंके बीच सत्यरथ मुख्य है। हे भारत? पहिले अर्ज्जुनने दिग्विजयमें प्रवृत्त होकर इन लोगोंका अनिष्ट किया था, उसको पूरी रीतिसे स्मरण करके, ये लोग युद्ध करेंगे; पाण्डवोंके सम्मुख होकर ये लोग महा धनुरद्धारी महारथ मुख्य मुख्य क्षत्रियोंका वध करेंगे। हे राजन्! तुम्हारा पुत्र लक्ष्मण और दुःशासनका पुत्र, ये दोनों मेरे मतसे उत्तम रथी हैं,तरुण और सुकुमार राजकुमार होकर भी ये पुरुषसिंह युद्धमें पीछे नहीं हटते, महातेजस्वी युद्धके कार्य्य जाननेवाले और शस्त्र चलानेमें निपुण हैं। ये दोनों वीर क्षत्रिय धर्म्ममें स्थित होकर बहुत कठिन युद्धके कर्म्म करेंगे। हे पुरुषश्रेष्ठ महाराज! दण्डधार एक गुणी रथी हैं, ये अपनी सेनासे रक्षित होकर तुम्हारे निमित्त युद्ध करेंगे। हे तात! महावेगवान्, पराक्रमी रथसत्तम शाल्वराज वृहद्बल भी मेरे मतमें रथी हैं। धृतराष्ट्रपुत्रोंके हितकार्य्यमें रत होकर ये अस्त्र शस्त्रको धारण करनेवाले महाधनुर्द्धारी रणभूमिमें अपने बन्धु बान्धवोंको आनन्दित करते हुए युद्ध करेंगे। हे राजन्! रथयूथपति कृपाचार्य्य अपना प्रियप्राण त्याग कर भी तुम्हारे शत्रुओंका नाश करेंगे; तात! अजेय स्वामि कार्त्तिकके समान जो शरस्तम्बसे महर्षि गौतमके वीर्य्य द्वारा उत्पन्न हुए थे, वे बड़ा वीरवर पुरुष हैं; युद्धमें धनुष और शस्त्रोंको धारण करके शत्रुओंकी सेनाको भस्म करते हुए साक्षात् अग्निके समान ये रणभूमिमें घूमेंगे।

१६५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे नरनाथ! तुम्हारा मामा शकुनि भी एकरथी है; पाण्डवोंके सङ्ग शत्रुता करके यह अवश्य युद्ध करेगा; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। युद्धमें शत्रुओंके विरुद्ध गमन करनेवाले इस वीरकी सेना अनेक शस्त्रोंको धारण करनेवाली और अत्यन्त बलवान् है। महाधनुर्द्धारी महारथ द्रोणाचार्य्यके पुत्र अश्वत्थामा सब धनुर्द्धारियोंमें श्रेष्ठ, युद्धमें महावीर योद्धा और दृढ़ शस्त्रधारी हैं। हे राजन्! गाण्डीव धनुषको धारण करनेवाले अर्ज्जुनकी भांति इसके शरासनसे छूटे हुए सब बाण शत्रुओंका नाश करते हैं। मैं इस रथसत्तम महावीर पुरुषके गुणोंकी संख्या करनेमें असमर्थ हूं, यह महारथ इच्छा करनेसे तीनों लोकको भस्म कर सकता है। इसने आश्रमवासी होकर तपस्यासे क्रोध और तेज दोनोंको बढ़ाया है और उदारबुद्धिसे युक्त होनेसे द्रोणाचार्य्यकी कृपासे सब दिव्य-अस्त्र शस्त्रोंको प्राप्त किया है; परन्तु इसमें एक ही दोष ऐसा है, कि जिससे मैं इसे रथी वा अतिरथी कुछ भी नहीं कह सकता हूं। हे राजन्! यह ब्राह्मण सदा आयुकी इच्छा करता है; इससे जीवन इसे अत्यन्त ही प्यारा है; जो हो, दोनों सेनाओंके बीच कोई योद्धा भी इसके समान विद्यमान नहीं है;—यह महा पराक्रमी अश्वत्थामा एक रथसे देवताओंकी सेनाका भी वध कर सकता है और पर्व्वतोंको भी तोड़नेमें समर्थ है, इससे यह अत्यन्त गुणशाली, महातेजस्वी, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ वीरवर दण्डधारी कालके समान असह्य होकर शत्रुओंकी सेनामें भ्रमण करेगा; क्रोधमें प्रलयकालकी अग्निके समान यह महातेजस्वी पुरुषसिंह अश्वत्थामा पाण्डवोंकी सेना-

को भस्म करेगा। इसके पिता द्रोणाचार्य्य बूढ़े होकर भी तरुण पुरुषोंसे श्रेष्ठ हैं, संग्राममें जो ये अत्यन्त ही बड़े कार्य्य करेंगे, उसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है। सेनारूपी तृण-काठ अस्त्रशस्त्रोंके वेगरूपी पवनसे बढ़े हुए द्रोणरूपी अग्निमें निःसन्देह युधिष्ठिरकी सेना भस्म होजावेगी; इससे रथयूथप यूथ समूहोंके भी यूथपति यह पुरुषश्रेष्ठ भरद्वाज-नन्दन तुम्हारा अत्यन्त ही हितकार्य्य सिद्ध करेंगे सब धनुर्द्धारियोंके मुकुटमणि यह बूढ़े आचार्य्य, सम्पूर्ण सृञ्जयोंके काल-स्वरूप होसकते हैं; परन्तु अर्जुन इनको बहुत ही प्यारा है। यह महाधनुर्द्धारी द्रोणाचार्य्य अपने आचार्य्य कर्म्मको स्मरण करके युद्धमें कभी अर्जुनको नहीं मार सकेंगे। हे वीर! अर्जुनके गुणोंसे मोहित होकर आचार्य्य द्रोण सदा उसकी प्रशंसा किया करते हैं और पुत्रसे भी उसके ऊपर इनको अधिक प्रीति है। यह अत्यन्त प्रतापी महावीर द्रोणाचार्य्य एक रथसे ही अपने दिव्य अस्त्रोंकी सहायतासे देवता, गन्धर्व्व और सम्पूर्ण मनुष्योंका वध कर सकते हैं। हे राजन्! तुम्हारे शत्रुओंको नाश करनेवाले यह पुरुषसिंह मेरे मतसे रथश्रेष्ठ हैं। यह अपनी सेनाको कंपाते हुए अग्नि जैसे सूखे तृण और लकड़ियोंको जला देती है; वैसे ही ये पाञ्चाल वीरोंको भस्म कर देंगे। हे भारत! सत्यकीर्त्ति, एक-रथ राजपुत्र बृहद्बल साक्षात् कालके समान शत्रु-ओंकी सेनामें भ्रमण करेंगे, इसके विचित्र कवच और शस्त्रोंको धारण करनेवाले वीर योद्धा लोग तुम्हारे शत्रुओंको मारते हुए रण-भूमिमें भ्रमण करेंगे।

हे राजन्! कर्णका पुत्र वृषसेन तुम्हारा एक मुख्य रथी है। वह बलवानोंमें श्रेष्ठ पुरुष तुम्हारे शत्रुओंकी सेनाका अच्छी प्रकारसे नष्ट करेगा। हे राजन्! तुम्हारे रथश्रेष्ठ शत्रु-नाशन महातेजस्वी मधुवंशीय जलसन्ध प्राण देकर भी युद्ध करेंगे, हाथी और रथ दोनों वाहनोंपर चढ़के ये युद्ध कर सकते हैं; यह महाबाहु संग्राममें शत्रुओंकी सेनाको विच्छिन्न करते हुए युद्ध करेंगे; हे महाराज! यह राज-सत्तम मेरे मतमें उत्तम रथी हैं; तुम्हारे निमित्त संग्राममें यह अपनी सेनाके सहित प्राणत्याग करेंगे; यह संग्राममें महापराक्रमी योद्धा हैं, इससे निर्भय होकर शत्रुओंसे युद्ध कर-नेमें प्रवृत्त होंगे। हे राजन्! युद्धमें अपराजित साक्षात् कालके समान अत्यन्त बली और महा पराक्रमी बाह्लिक मेरे मतमें अतिरथी हैं, क्योंकि रणभूमिमें जाकर यह किसी प्रकारसे भी निवृत्त नहीं होते, वायुकी गतिके समान गमन करके यह सब शत्रुओंका अवश्य ही वध करेंगे। हे महाराज! तुम्हारे सेनापति महारथ सत्यवान् युद्धमें अद्भुत कर्म्म करनेवाले रथी और शत्रुओंको पीड़ित करनेवाले हैं; युद्ध देखकर इनको किसी प्रकारसे भी भय नहीं होता, वह रथोंके मार्गमें स्थित शत्रु-ओंको विस्मित करते हुए सहसा उनके ऊपर पतित होते हैं; शत्रुओंको नाश करनेवाले यह पुरुषसिंह तुम्हारे निमित्त सत्पुरुषोंके योग्य अत्यन्त बड़े कार्य्य करेंगे। हे राजन्! क्रूर कर्म्म करनेवाला महारथ राक्षसेन्द्र अल-म्बुष पहिला वैर स्मरण करके शत्रुओंको मारेगा। यह सम्पूर्ण राक्षसोंकी सेनाके बीच रथसत्तम, मायावी और दृढ़ शत्रुता कर-नेवाला है; इससे रणभूमिमें घोर रूप धारण करके शत्रुओंकी सेनामें भ्रमण करेगा। हे राजेन्द्र! प्राग्ज्योतिषपुरके राजा भगदत्त हाथियोंपर अंकुश धारण करके चढ़ने और रथविद्यामें भी निपुण हैं; पहिले गाण्डीव धनुष-धारी अर्जुनके सङ्ग इनका युद्ध हुआ था, दोनोंने अपने अपने जयकी अभिलाषासे बहुत दिनतक युद्ध किया था, पीछे पाकशासन इन्द्रका मध्यस्थ मानके इन्होंने महात्मा पाण्डवोंके संग सन्धि

किया था ; हाथीपर चढ़के युद्ध करनेवाले यह राजा भगदत्त देवताओंके बीच ऐरावत हाथीपर चढ़े हुए इन्द्रको भांति शत्रुओंसे युद्ध करेंगे।

१६६ अध्याय समाप्त ।

———

भीष्म बोले, हे राजन् ! गान्धारोंमें प्रधान, तरुण, देखने योग्य, महाबली, पराक्रमी, दृढ़-क्रोधी, पुरुषसिंह अचल और वृषभ दोनों भाई रथी हैं; ये दोनों मिलकर तुम्हारे शत्रु-ओंको नष्ट करेंगे। हे भारत ! तुम्हारा प्यारा मित्र, मन्त्री, नायक, अभिमानी, बन्धु, अत्यन्त ऊंचो अभिलाषा करनेवाला, अपनी प्रशंसा करनेवाला, सदा युद्धको चाहनेवाला, नीच-पुरुष, सूर्य्यपुत्र कर्ण जो सदा ही तुमको पाण्ड-वोंके संग युद्ध करनेके निमित्त उत्साहित करता रहता है ; इसको संग्राममें रथो वा अतिरथी कुछ भी नहीं कह सकते। यह अन-भिज्ञ और अत्यन्त दयालु होनेके कारण अपने संग गर्भसे उत्पन्न हुए कवच और कुण्डलसे रहित हो गया है ; इससे परशुरामके शाप, ब्राह्मणके वचन और कवच कुण्डल आदि साध-नोंसे रहित होनेसे मेरे मतमें यह अर्द्ध रथी है। युद्धमें अर्जुनके सम्मुख होकर यह कभी जीता न बचेगा।

अनन्तर सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्य बोले, हे गंगानन्दन भीष्म ! तुमने जो कुछ कहा, सब सत्य हैं, इसमें कुछ भी मिथ्या नहीं है ; कर्ण प्रति बार युद्धमें अभिमानी होता है ; परन्तु युद्धसे विमुख होते भी दीख पड़ता है ; इससे यह घृणित और प्रमादी पुरुष मेरे मत-में भी अर्द्धरथी ही है।

अनन्तर इस वचनको सुनकर कर्ण क्रोधसे दोनों नेत्र लाल करके अंकुशके समान वचनोंसे भीष्मको पीड़ित करते हुए यह वचन बोले, हे पितामह ! मैं निरपराधी हूं इसपर भी तुम केवल द्वेषके कारण ऐसे वचनरूपी बाणोंको सहायतासे मुझको पद पदमें छेदन करते रहते हो, तौ भी दुर्य्योधनके निमित्त मैं तुम्हारी सब बातोंको सहता रहता हूं। "मेरे समीप तुम अर्द्धरथकी गिनतीमें हो" ऐसा कहकर जो तुम मुझे कापुरुषकी भांति तुच्छ समझते हो इसमें क्या सन्देह है ? हे गंगानन्दन ! मैं मिथ्या नहीं कहता हूं, तुम सम्पूर्ण जगत विशेष करके कौरवोंके सदा अहितकारी कर्म्म कर रहे हो; परन्तु राजा दुर्य्योधन उसको नहीं जानते हैं। गुणके ऊपर द्वेष करके तुम जैसी मेरी बुराई करनेकी इच्छा करते हो, युद्धमें समान गुणोंसे युक्त उदार राजाओंके बीच भेद करनेकी इच्छामें कौन पुरुष इस प्रकार दूसरोंको तेज-होन करता है ? हे कौरव ! अवस्था, पके हुए केश, धन अथवा बन्धुवान्धवोंसे क्षत्रियोंकी महारथत्वकी संख्या कोई नहीं कर सकता है। क्षत्रिय बल, ब्राह्मण मन्त्र, वैश्य धन और शूद्र अवस्थाके क्रमसे बड़े तथा श्रेष्ठ कहके विख्यात होते हैं। परन्तु तुम केवल मोहसे युक्त और काम क्रोधसे आसक्त होकर अपनी इच्छाके अनुसार रथी और अतिरथी-संख्याकी व्याख्या करके सबमें भेद उत्पन्न कर रहे हो; हे महाबाहो दुर्य्योधन ! तुम पूर्ण रीतिसे विचार करके देखो, इस दुष्ट अभिप्रायवाले भीष्मको शीघ्र ही परित्याग करो ; क्योंकि एकबार पृथक् होनेसे सेनाको फिरसे जोड़ना बहुत ही कठिन हो जावेगा। हे राजेन्द्र ! जो अनेक देशोंसे पृथक् पृथक् होकर सब राजा एक ही कार्य्यके निमित्त यहांपर आके उप-स्थित हुए हैं ; उनको बात तो दूर है, भेद होनेसे मूल सेना भी, उत्साहरहित हो जावेगी। हे भारत ! भीष्म इन सम्पूर्ण योद्धा-ओंके सम्मुख ही हमे तेज-हीन कर रहे हैं; इससे युद्ध विषयमें इन सैनिक पुरुषोंके हृदयमें अत्यन्त संशय उत्पन्न हुआ है। हा ! कहां रथियोंका ज्ञान और कहां अल्पबुद्धि भीष्म ? मैं

ही अकेले पाण्डवोंकी सम्पूर्ण सेनाका नाश करूंगा। शार्दूलके समीप आये हुए वृषभ आदि पशुओंकी भांति पाण्डव और पाञ्चाल योद्धा लोग अव्यर्थ-बाणोंकी चलानेवाले मेरे सम्मुख आके दशों दिशामें भाग जावेंगे। कहां युद्ध, शस्त्र, मन्त्र, और उत्तम वचन; और कहां बूढ़ा मन्दात्मा कालप्रेरित भीष्म; यह अकेले ही सब जगतके सङ्ग युद्ध करनेकी अभिलाषा करता है और ऐसा असत्यदर्शी होता है, कि किसीको भी पुरुष नहीं समझता। शास्त्रमें ऐसा आज्ञा है, कि बूढ़ोंके वचन सुनना उचित है, सो सब ठीक है; परन्तु अति वृद्ध पुरुषोंके वचन नहीं सुनने चाहिये; क्योंकि पण्डितोंके विचारमें वह फिर बाल-भावको प्राप्त होजाते हैं। हे राजशार्दूल! मैं अकेले ही इस युद्धमें पाण्डवोंकी सम्पूर्ण सेनाको मारूंगा; परन्तु यश भीष्महीको मिलेगा। हे राजेन्द्र! तुमने इस भीष्मको सेनापति किया है, इससे यश सेनापतिहीमें गमन करता है; योद्धाओंको यश नहीं होता। इससे हे राजन्! गङ्गानन्दन भीष्मके जीवित रहते, मैं किसी प्रकारसे भी युद्ध न करूंगा, भीष्मके मारे जानेपर सब महारथ वीरोंके सहित युद्धमें प्रवृत्त होऊंगा।

भीष्म बोले, रे सूतपुत्र! दुर्य्योधनने संग्रामके निमित्त इस समुद्रके समान बड़ी सेनाका सम्पूर्ण भार मेरे ऊपर समर्पण किया है, मैं कई वर्षसे इसकी चिन्ता कर रहा था, इससे उस रोवेंको खड़े करनेवाले भयङ्कर युद्धका समय उपस्थित होनेपर आपसमें भेद करना मेरा कर्त्तव्य कर्म्म नहीं है, इसी निमित्त तूं जीता बचा है, मैं बूढ़ा होकर भी बालकरूपी तुम्हारे ऊपर अपना पराक्रम प्रकाशित करके तुम्हारी युद्धकी लालसा और जीनेकी आशा मेट सकता हूं; परन्तु इसी कारणसे मैंने पराक्रम प्रकाशित नहीं किया। रे सूतपुत्र! तू मेरा क्या करेगा, तेरे गुरु परशुरामजी अपने सब महा अस्त्र-शस्त्रोंको चला कर मुझे पराजित नहीं कर सके। रे दुष्ट पुरुषाधम! सत्पुरुष लोग कभी अपने मुंहसे अपनी प्रशंसा नहीं करते, परन्तु मैं क्रुद्ध होकर तुझसे कहता हूं; काशिराजके स्वयम्बरमें इकट्ठे हुए सम्पूर्ण क्षत्रिय राजाओंको मैंने इक रथसे ही जीतकर कन्याओंको बलपूर्व्वक हरण किया था और भी रणभूमिमें ऐसे सहस्रों तथा इनसे भी श्रेष्ठ सेनाओंके सहित अनेक क्षत्रिय राजाओंको अकेले ही पराजित किया था। इससे साक्षात् वैररूपी तुझे पाकर कौरवोंमें बहुत बड़ा अनर्थ उपस्थित हुआ है; इस समय शत्रुओंके नाशके निमित्त यत्न कर; पुरुष बन। रे नीचबुद्धि कर्ण! जिसके सङ्ग तू सदा युद्धकी अभिलाषा किया करता है, उस अर्ज्जुनके सङ्ग रण-भूमिमें युद्ध कर। मैं इस युद्धमें तुझे इकबारगी मारा हुआ देखूंगा।

अनन्तर प्रतापी राजा दुर्य्योधनने गङ्गापुत्र भीष्मसे कहा; कि हे पितामह! मेरी ओर दृष्टि कीजिये; देखिये यह बहुत बड़ा कार्य्य उपस्थित हुआ है; इससे जिसमें मेरा मङ्गल होवे, आप एकाग्रचित्त होकर उसीका अनुष्ठान करें। आपलोग दोनों ही हमारे बहुत बड़े कार्य्य करेंगे। अब मैं शत्रुओंके रथसत्तम पुरुषोंके नाम सुननेकी इच्छा करता हूं; वहांपर जो सब अतिरथी और यूथपति हैं, उनका वृत्तान्त वर्णन कीजिये। हे कौरव! मैं शत्रुओंके बलाबलको जाननेकी अभिलाषा करता हूं, क्योंकि रात्रिके बीतनेपर सबेरे ही यह युद्ध आरम्भ होगा।

१६७ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! तुम्हारे इन सब रथी अतिरथी और अर्द्धरथियोंका वर्णन किया

गया; अब पाण्डवोंके रथी आदिका वर्णन सुनो। हे राजन्! पाण्डवोंके बलके जाननेकी तुम्हें इच्छा है, तो सब राजाओंके सहित उन लोगोंको रथ संख्या सुनो। हे तात! स्वयं रथश्रेष्ठ कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर युद्धमें अग्निके समान भ्रमण करेंगे; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे राजन् युद्धमें भीमसेन अठगुणा रथी है; गदा अथवा वाण चलानेमें कोई भी उसके समान नहीं; वह दस हजार हाथीके समान बलवान् अभिमानी और तेजमें भी मनुष्योंसे बढ़कर है। पुरुषश्रेष्ठ दोनों माद्री-पुत्र रथी और रूप तथा तेजमें साक्षात् अश्विनी कुमारके समान हैं;—ये सेनाके सम्मुख आकर सम्पूर्ण अपने दुःख तथा क्लेशोंको स्मरण करके रुद्रके समान निश्चिन्त हो शत्रुसेनामें भ्रमण करेंगे। पाण्डुपुत्र सब ही महाबली, महात्मा, सिंहके समान शरीरवाले, वृक्षके समान ऊंचे और दूसरे पुरुषोंसे उंचाईमें अधिक हैं;—हे तात! ये पुरुषसिंह सब ही ब्रह्मचर्य्यव्रतके अनुष्ठान करनेवाले, तपस्वी, लज्जाशील सिंहके समान बलवान्, वेग और शस्त्रोंके प्रहारमें असाधारण पुरुष हैं;—हे तात! इन लोगोंने दिग्विजयमें सब राजाओंको पराजित किया था। युद्धमें इनके शस्त्र, गदा और वाणोंको सह सके ऐसे पुरुष ही नहीं दीख पाते हैं; वाणोंको सहना तो दूर है, इनके धनुषपर रोदा चढ़ाने, भारी गदा आदि उठाने अथवा शस्त्रोंके चलानेमें भी कोई समर्थ नहीं है। बालक अवस्थामें भी वे लोग वेग, लक्ष्य, हरण, भोजन, तथा धूलि-फेंकने और खेल करनेमें तुम सब लोगोंसे अधिक थे। वे सब ही बलवान् हैं, युद्धमें तुम्हारी सेनाका अवश्य नाश करेंगे; इससे उनके सङ्ग युद्ध न करना ही उत्तम है। हे राजेन्द्र! वे लोग जो अकेले ही सब राजाओंको मार सकते हैं, सो राजसूय यज्ञमें तुमने देखा ही था। वे लोग द्रौपदीके क्लेश और जुएके समयके कठोर वचनोंको स्मरण करके साक्षात् रुद्रके समान तुम्हारी सेनामें भ्रमण करेंगे। कृष्णकी सहायतासे युक्त लालनेत्र वाला जो अर्जुन है उसके समान दोनों सेनाके बीच कोई भी वीर विद्यमान नहीं है; मनुष्यकी बात ही क्या है, पहिले देवता, यक्ष, राक्षस और नागोंके बीचमें भी कोई उसके समान महारथी हुआ था, अथवा भविष्यकालमें होगा, मैंने ऐसी बात कहीं नहीं सुनी है। हे राजेन्द्र! बुद्धिमान् अर्जुनका कपिध्वजासे युक्त रथ, कृष्ण सारथी, अर्जुन योद्धा, दिव्य धनुष गाण्डीव, वायुके समान चलनेवाले रथके घोड़े, अभेद्य कवच, अक्षय दोनों तूणीर, इन्द्र, रुद्र, कुवेर, वरुण और यम सम्बन्धीय सम्पूर्ण अस्त्र और भयङ्कर गदा तथा वज्र आदि अनेक प्रकारके शस्त्र एकत्रित हुए हैं। इससे जिस पुरुषने एक ही रथसे हिरण्यपुरवासी सहस्रों दानवोंको मारा था, उसके समान रथी और दूसरा कौन हो सकता है? यह अत्यन्त बलशाली, सत्य पराक्रमी; अपनी सेनाकी रक्षा करता हुआ तुम्हारी सेनाका नाश करेगा। हे राजेन्द्र! द्रोणाचार्य्य अथवा मैं,—ये ही दो पुरुष अर्जुनसे युद्ध करनेमें समर्थ हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त दोनों सेनाके बीच ऐसा कोई तीसरा रथी नहीं है, जो वाणोंकी वर्षा करनेवाले इस महावीर अर्जुनके सम्मुख खड़ा हो सके। ग्रीष्मकालके अन्तमें महा वायुसे प्रेरित हुए अग्निकी भांति कृष्णकी सहायतासे युक्त सव्यसाची अर्जुन युद्धके निमित्त सज्जित होरहा है; वह तरुण और कृतास्त्र है और हम लोग दोनों ही बूढ़े हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समयमें भीष्मके ऐसे वचन सुनकर संदेहयुक्त चित्तसे पाण्डवोंके पुराने सामर्थ्यको फिर प्रत्यक्ष देखनेकी भांति पूर्ण रीतिसे स्मरण करके,

राजाओंकी सुवर्णके भूषणोंसे भूषित और चन्दन चर्चित भुजाएं शिथिल होगई ।

१६८ अध्याय समाप्त ।

भीष्म बोले, हेराजन् ! द्रौपदीके पांचो पुत्र महारथ हैं; विराटपुत्र उत्तर भी मेरी समझमें रथश्रेष्ठ हैं। महाबाहु अभिमन्यु रथयूथपतियोंका भी यूथपति है ;—युद्धमें अर्जुन और कृष्णके समान, शत्रुओंका नाश करनेवाला, शीघ्र शस्त्र चलानेवाला मनस्वी और दृढ़व्रती यह महावीर पुरुष पिताके दुःख और क्लेशोंको स्मरण करके अपना पराक्रम प्रकाशित करेगा। हे राजन् ! वृष्णिवंशियोंमें श्रेष्ठ भयरहित सात्यकी रथयूथपतियोंका भी यूथपति है और उत्तमौजा तथा बलवान् युधामन्यु भी मेरे विचारमें रथश्रेष्ठ हैं। हे भारत! इन लोगोंके कई हजार रथ, हाथी और घोड़ोंकी सेना है; कुन्तीपुत्रोंके हितकी इच्छासे ये लोग अपना प्राण त्याग करके भी युद्ध करेंगे। पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर परस्पर आवाहन करते हुए अग्नि और वायुकी भांति ये लोग तुम्हारी सेनामें भ्रमण करेंगे। हे राजेन्द्र! युद्धमें अपराजित महा पराक्रमी बूढ़े राजा विराट और द्रुपद भी मेरे मतमें महारथ हैं; क्योंकि क्षत्रियधर्म्मसे युक्त वे दोनों राजा बूढ़े होनेपर भी अपनी शक्तिके अनुसार वीरोंके गमन करनेयोग्य मार्गमें स्थित होके यत्नपूर्व्वक यह करेंगे। हे राजन्! वे दोनों उत्तम व्रत करनेवाले महा धनुर्द्धारी दोनों ही विवाह और पाण्डवके सम्बन्धके कारण स्नेह और पराक्रमसे बद्ध हैं। हे राजन्! कारण पानेसे सम्पूर्ण महाबाहु पुरुष ही शूर और कातर होजाते हैं; परन्तु अपने प्राणोंकी आशाको छोड़ कर ये दोनों राजा परम शक्तिके सहित युद्धमें प्रवृत्त होंगे। हे परन्तप! महा धनुर्द्धारी लोकमें विख्यात दारुण कर्म्म करनेवाले ये दोनों राजा अपने जीनेकी इच्छा त्याग कर सम्बन्धिभाव और विश्वासकी रक्षा करते हुए पृथक् पृथक् अक्षौहिणी सेनाके सहित बहुत बड़े युद्धके कर्म्म करेंगे।

१६९ अध्याय समाप्त ।

भीष्म बोले, हे भारत! मेरे विचारमें पाञ्चालराजपुत्र पराये देशका जीतनेवाला शिखण्डी युधिष्ठिरकी सेनामें एक मुख्य रथी है। यह पुरुष पूर्व्व जन्मके स्त्री स्वभावको त्याग करके युद्धमें तुम्हारी सेनाके बीच परम यशका विस्तार करता हुआ युद्ध करेगा। इसके सङ्ग पाञ्चाल और प्रभद्रक प्रभृति बहुत सेना हैं, उन रथसमूहोंके सहित यह वीरवर युद्धमें बहुत बड़े कार्य्य करेगा। हे राजन्! पाण्डवोंकी सब सेनाके बीच सेनापति द्रोणाचार्य्यका शिष्य धृष्टद्युम्न मेरी समझमें अतिरथी है; यह और सृष्टिके अन्तमें अत्यन्त क्रोधमें भरे हुए साक्षात् पिनाकधारी रुद्रकी भांति संग्राममें शत्रुओंको पीड़ित करता हुआ युद्ध करेगा। युद्धके जाननेवाले योद्धा लोग संग्राममें देवताओंके समान तथा इसकी रथसे युक्त सेनाको समुद्रकी भांति वर्णन करते हैं। हे राजेन्द्र! धृष्टद्युम्नका पुत्र क्षत्रधर्म्मा बाल स्वभावसे युक्त होनेके कारण अधिक परिश्रम नहीं कर सकता, इस निमित्त उसे मैं अर्द्ध-रथीकी संख्यामें गिनता हूं। हे भारत! महाधनुर्द्धारी, महारथ शिशुपालपुत्र चेदिराज धृष्टकेतु युधिष्ठिरका सम्बन्धी है। यह पराक्रमी चेदिराज पुत्रके सहित युद्धके कठिन कार्य्य करेगा। हे राजेन्द्र पाण्डवोंके बीच क्षत्रियधर्म्ममें रत, पराये देशको जीतनेवाले क्षत्रदेव मेरे मतमें रथश्रेष्ठ हैं। पाञ्चाल-सत्तम जयन्त, अमितौजा और महारथ सत्यजित् ये सब ही महात्मा

और महारथ हैं; हे तात! रणभूमिमें ये लोग क्रुद्ध हुए मतवारे हाथियोंकी भांति युद्ध करेंगे। शीघ्र शस्त्र चलानेवाले महाबली अत्यन्त पराक्रमी अज और भोज ये दोनों महारथ पाण्डवोंके निमित्त अपनी परम शक्तिके सहित युद्ध करके शत्रुओंका नाश करेंगे।

हे राजन्! युद्धमें भय रहित केकयराजके पांचो पुत्र रथश्रेष्ठ और लालध्वजाओंसे युक्त हैं। हे राजन्! काशिक, सुकुमार, नील, सूर्य्यदत्त, शंख और मदिराश्व ये लोग भी मुख्य रथी हैं; ये युद्ध तथा सब शस्त्रोंको जाननेवाले और महात्मा हैं। हे महाराज! वार्द्धक्षेमिको भी मैं महारथ समझता हूं और चित्रायुधको रथश्रेष्ठ मानता हूं, क्योंकि वे लोग युद्धमें शोभित अर्जुनके भक्त हैं। चेकितान और सत्यधृति ये भी पाण्डवोंके महारथ हैं; ये दोनों पुरुषसिंह मेरे मतमें रथश्रेष्ठ हैं। हे राजेन्द्र! व्याघ्रदत्त चन्द्रसेन और सेनाविन्दु ये भी पाण्डवोंके उत्तम रथियोंमें हैं इसमें कुछ संदेह नहीं है क्रोधहन्ता नाम वीर जो भीमसेन और कृष्णके समान हैं, वे भी अपना पराक्रम प्रकाशित करके तुम्हारी सेनासे युद्ध करेंगे। हे राजन्! तुम द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और मुझको जैसा समझते हो, रथसत्तम उस वीरवरको भी वैसा ही समझो। पराये देशको जीतनेवाले, शीघ्र शस्त्र चलानेवाले प्रशंसाके योग्य पुरुषोंमें श्रेष्ठ काशिराज मेरे मतमें अर्द्धरथी हैं और द्रुपदपुत्र पराक्रमी युवा पुरुष सत्यजित् आठ गुणा रथी है; क्योंकि धृष्टद्युम्नके समान होनेसे वह अतिरथित्व पदके योग्य हुए हैं और यश पानेकी इच्छासे पाण्डवोंके बहुत बड़े युद्धका कार्य्य करेंगे। महाबलवान् पाण्ड्यराज पाण्डवोंके एक बहुत बड़े रथी हैं, ये उन लोगोंके अनुरक्त हैं और पराक्रमी भी हैं, इससे ये भी युद्धमें अपना पराक्रम प्रकाशित करेंगे। महा धनुर्द्धारी दृढ़धन्वा पाण्डवोंकी सेनामें एक महारथ योद्धा है। हे राजेन्द्र! कौरवश्रेष्ठ श्रेणिमान् और राजा वसुदान दोनों ही अतिरथीकी गिनतीमें हैं।

१७० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे महाराज! पाण्डवोंके महारथ रोचमान युद्धमें शत्रु सेनाके बीच इन्द्रके समान संग्राम करेंगे। भीमसेनके मामा धनुर्द्धारी महाबल कुन्तिभोज और पुरुजित् मेरे विचारसे अतिरथी हैं। इस रथ-सत्तम वीर पुरुषको मैं अत्यन्त कृतास्त्र युद्धमें निपुण और समर्थ समझता हूं। हे भारत! इन्द्रने जैसे दानवोंसे युद्ध किया था, वह वैसे ही बल और पराक्रम प्रकाशित करके युद्ध करेंगे। उनके जो सब विख्यात सैनिक वीर योद्धा हैं, वे भी सब युद्धके कार्य्यमें निपुण हैं, इससे पाण्डवोंके प्रिय और हितकार्य्यको करनेके निमित्त स्थित होकर यह वीरवर युद्धमें अत्यन्त बड़े कार्य्य करेंगे। हे महाराज! भीमसेनका पुत्र हिड़िम्बाके गर्भसे उत्पन्न हुआ राक्षसेन्द्र घटोत्कच बहुत ही मायावी और रथयूथपतियोंका भी यूथपति है; वह युद्धको चाहनेवाला, मायावी और उसके वशमें रहनेवाले जो सब बलवान् राक्षस उसके सहायक हैं, वे सब संग्राममें महाघोर युद्ध करेंगे। ये सब लोग और दूसरे बहुत से राजा श्रीकृष्णको आगे करके पाण्डवोंके कार्य्यके निमित्त इकट्ठे हुए हैं। हे राजन्! महात्मा युधिष्ठिरकी सेनामें रथी, अतिरथी और अर्द्धरथी जो सब पुरुष हैं; उन सबमें कृष्ण ही मुख्य हैं; यह इन्द्रके समान पराक्रमी अर्जुनसे रक्षित युधिष्ठिरकी महासेनाको युद्धके निमित्त आगे बढ़ावेंगे। हे वीर! माया जाननेवाले और जयकी इच्छा करनेवाले योद्धाओंके सहित मैं विजय अथवा मरनेकी अभिलाषा करके युद्ध करूंगा। चक्र और गाण्डीवधारी रथश्रेष्ठ कृष्ण और अर्जुनका सन्ध्या कालके सूर्य्य और चन्द्रमाके समान

एक ही स्थानपर एकत्र होनेपर भी मैं तुम्हारे निमित्त उन लोगोंके सम्मुख युद्धके वास्ते गमन करूंगा और युधिष्ठिरके दूसरे जो सब रथश्रेष्ठ सेनापति हैं, अपनी सेनाके सहित उनके सङ्ग भी मैं युद्ध करूंगा।

हे राजन्! प्रधानताके अनुसार पाण्डवोंके ये ही सब रथी, अतिरथी और अर्द्धरथी हैं; सो मैंने तुमसे वर्णन किया। हे भारत! मैं जहांतक देख सकूंगा, वहांतक अर्ज्जुन; कृष्ण तथा दूसरे सब राजाओंको निवारण करूंगा; परन्तु हे महाबाहो! युद्धमें मेरी सेनाके विरुद्ध संग्राम करनेवाला शस्त्रधारी द्रुपदपुत्र शिखण्डीको देखकर मैं उसका बध नहीं करूंगा। पिताके प्रियकार्य्य करनेकी इच्छासे मैंने प्राप्त हुआ राज्य भी त्याग दिया और ब्रह्मचर्य्य व्रतमें स्थित होके चित्राङ्गदको कौरवों महाराजके और विचित्रवीर्य्यको युवराजके पदमें नियुक्त किया था; यह सब लोगोंको विदित है। पृथ्वीके सब राजाओंके बीचमें देवव्रत अर्थात् ब्रह्मचारी कहके मैं विख्यात हूं; इससे स्त्री अथवा पहिले स्त्री हुए पुरुषको मैं कभी नहीं मार सकता हूं। हे राजन्! शिखण्डी जो पहिले स्त्रीरूपमें था, सो तुमने सुना ही है; हे भारत! इससे मैं उसके सङ्ग युद्ध नहीं करूंगा। इसके अतिरिक्त संग्राममें जिन सब राजाओंके सम्मुख होऊंगा; उन सबको अवश्य मारूंगा; परन्तु कुन्तीपुत्रोंको नहीं मार सकूंगा।

१७१ अध्याय समाप्त।

अब अम्बा-उपाख्यान पर्व्व लिखेंगे।

दुर्य्योधन बोले, हे गङ्गानन्दन भरतर्षभ पितामह! हे महाबाहो! "मैं सोमकवंश-योंके सहित सब पाञ्चालवीरोंको मारूंगा" पहिले ऐसा कहकर, इस समय अब युद्धमें आत तायी शस्त्र लिये हुए शिखण्डीको देखकर आप किस कारणसे उसका बध न करेंगे, उसे वर्णन कीजिये।

भीष्म बोले, हे दुर्य्योधन! मैं शिखण्डीको रणभूमिमें देखकर जिस कारणसे उसका बध नहीं करूंगा; वह सम्पूर्ण वृत्तान्त तुम मुझसे सब राजाओंके सहित सुनो। हे भरतर्षभ! मेरे पिता लोकमें विख्यात धर्मात्मा महाराज शान्तनु यथा समयमें शरीरको छोड़कर स्वर्गको गये। अनन्तर मैं अपनी प्रतिज्ञाका पालन करता हुआ भाई चित्राङ्गदको इस सम्पूर्ण राज्यका स्वामी बनाया। हे राजन्! चित्राङ्गदके मरनेपर सत्यवतीको सम्मतिसे विचित्रवीर्य्यको विधिपूर्व्वक राज्य-पदपर प्रतिष्ठित किया। हे राजेन्द्र! छोटे होकर भी धर्म्मके अनुसार मेरे द्वारा राज्यपद पानेपर धर्म्मात्मा विचित्रवीर्य्य केवल मेरी ही प्रतीक्षा करते थे। हे तात! मैंने भी समान कुलमेंसे कन्या लाकर उसके विवाह करनेकी इच्छा की। उस समयमें मैंने सुना, कि काशिराजके यहां महासुन्दरी उनकी अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका तीन कन्याओंका स्वयम्बर होरहा है और उसके निमित्त पृथ्वीके सम्पूर्ण राजा इकट्ठे हुए हैं। हे राजेन्द्र! इन कुमारियोंके बीच अम्बा जेठी, अम्बिका मध्यमा और अम्बालिका छोटी थी। हे महाबाहो! मैं एक ही रथ पर काशिराजके नगरमें गमन करके सब भूषणोंसे भूषित उन कन्याओंको देखा। अनन्तर बल तथा पराक्रम ही उनका पण था, ऐसा बोध होनेपर मैंने युद्ध करनेके निमित्त इकट्ठे हुए सम्पूर्ण राजाओंको आवाहन करके उन तीनों कन्याओंको रथमें बैठा लिया। कुमारियोंको रथमें रखकर मैंने इकट्ठे हुए सब राजाओंसे यह बारबार यह वचन कहा "हे राजा लोग! शान्तनुनन्दन भीष्म कन्याओंका हरण करता है, इससे तुम लोग परम शक्तिके सहित उनको छुड़ानेका यत्न करो। हे नरर्षभगण! तुम

लोगोंकी अभिलाषा रहनेपर भी मैं सबके सम्मुख ही इन कन्याओंको बलपूर्वक हरण किये जाता हूं।" अनन्तर वे सब राजा लोग अपने सम्पूर्ण अस्त्र शस्त्रों लेकर उठ खड़े हुए और सारथीको रथ सजानेके निमित्त आज्ञा करने लगे। हे राजेन्द्र! उन राजाओंमें रथी लोग मेघके समान रथसे, गजपतिलोग हाथियों और घोड़ोंके असवार लोग अपने हृष्ट पुष्ट घोड़ोंपर चढ़के सब शस्त्रोंके सहित मेरे सम्मुख आ पहुंचे और सब ओरसे मुझे घेर लिया। मैंने भी अपने बाणोंकी वर्षासे उन सबको निवारित किया और इन्द्र जैसे दानवोंको पराजित करते हैं, उसी प्रकारसे अकेले ही सब राजाओंको जीत लिया। हे भरतर्षभ! वे लोग जब मुझ पर आक्रमण करनेके निमित्त उद्यत हुए, तब मैंने हंसते हंसते अपने जलते हुए चोखे बाणोंसे उनकी सुवर्णभूषित विचित्र ध्वजाओंको काटकर गिरा दिया और एक ही एक बाणसे घोड़े, हाथी और सारथियोंको मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया। मेरी ऐसी शस्त्र-शीघ्रता देखकर सब राजा पराजित होकर भाग गये। हे महाबाहो! अनन्तर मैंने भ्राताके निमित्त उन कन्याओंको लाकर सत्यवतीको समर्पण किया और युद्धका वृत्तान्त भी सम्पूर्ण रूपसे वर्णन किया।

१७२ अध्याय समाप्त।

——

भीष्म बोले, हे भरतश्रेष्ठ! अनन्तर मैंने केवटकी कन्या वीर-जननी सत्यवतीके समीप जाकर प्रणाम करके यह वचन कहा, "हे माता! मैं सब राजाओंको जीतकर विचित्रवीर्यके निमित्त काशिराजकी इन कई एक कन्याओंको लाया हूं, पराक्रम ही इनका पण था, इसीसे मैं अपने बाहुबलसे सब राजाओंको जीतकर इनको लाया हूं" हे राजन्! अनन्तर सत्यवतीने आनन्दित होके मेरा मस्तक सूंघा और आखोंमें आंसू भरकर यह वचन बोली, "हे पुत्र! प्रारब्धहीसे तुमने विजय लाभ किया है।" इसके अनन्तर सत्यवतीकी अनुमतिसे जब विवाहका समय उपस्थित हुआ, तब काशिराजकी जेठी कन्या लज्जापूर्वक मुझसे यह वचन बोली, हे भीष्म तुम सब शास्त्रोंको जाननेवाले और धर्मात्मा हो; इससे मेरे धर्म-युक्त वचनोंको सुनकर उनकी रक्षा करनी तुमको उचित है। पहिले मैंने शाल्वपतिको मन ही मन अपना वर निश्चय किया था और उन्होंने भी एकान्त स्थानपर मुझे पानेकी अभिलाषा की थी, हे राजन् भीष्म! इससे तुम कौरवोंके कुलमें उत्पन्न होकर किस प्रकारसे धर्मका अतिक्रम कर सकते हो? दूसरेकी अभिलाषा करनेवाली कामिनीको तुम कैसे अपने घरमें रख सकते हो? हे महाबाहो! बुद्धिसे इस विषयको अच्छी प्रकारसे विचार कर जैसा उचित हो, वैसा ही कीजिये, हे राजेन्द्र! वह शाल्वराज अवश्य मेरी बाट जोहते होंगे। हे कुरुश्रेष्ठ! इससे मुझे उनके समीप जानेकी आज्ञा दीजिये। हे महाबाहो! हे धार्म्मिक! मेरे ऊपर कृपा कीजिये; मैंने सुना है, आप पृथ्वीमें सत्यव्रत (ब्रह्मचारी) कहके विख्यात हैं।"

१७३ अध्याय समाप्त।

——

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ! अनन्तर मैंने योजनगन्धा, मन्त्री और पुरोहितोंको सब बात सुनाकर उन लोगोंकी सम्मतिसे बड़ी कन्या अम्बाको शाल्वराजके यहां जानेकी आज्ञा दी और उसने भी बूढ़े ब्राह्मणोंसे रक्षित और दासियोंसे युक्त होकर शाल्वराजके नगरको गमन किया। कन्या सब मार्गोंको लांघ कर शाल्वराजके समीप पहुंच कर यह वचन बोली हे महाबाहो! हे महाबुद्धिमन्! मैं तुम्हारे निमित्त यहांपर आई हूं। हे राजेन्द्र! तब

शाल्वराज हंसकर उससे यह वचन बोले, हे सुन्दरी! तुम अन्यपूर्व्वा हो; इस कारण मैं तुमको अपनी भार्य्या बनानेकी अभिलाषा नहीं कर सकता हूं। हे भद्रे! तुम फिर भीष्मके समीप जाओ; भीष्मने तुमको बलपूर्व्वक ग्रहण किया था; इससे अब मैं तुमसे विवाह करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। भीष्मने जब सब राजाओंको जीत कर हाथपकड़के तुम्हें हरण किया था, उस समय तुमने उसके सङ्ग विलक्षण प्रीति की थी; हे सुन्दरि! इससे अन्यपूर्व्वा स्त्रीको मैं अपनी भार्य्या नहीं बना सकता हूं। शास्त्र और धर्म्मको जाननेवाले मेरे समान राजा दूसरेकी ग्रहण की हुई स्त्रीको किस प्रकारसे अपने घरमें रख सकता है? इससे हे भद्रे! शीघ्र हो अब जहां तुम्हारी इच्छा होवे, गमन करो।

हे राजन्! तब अम्बा कामशरसे पीड़ित होकर उनसे यह वचन बोली; हे राजेन्द्र! ऐसा न कहिये; आप जो कुछ कहते हैं, वह किसी प्रकारसे भी सत्य नहीं है। भीष्मके हाथसे हरण किये जानेपर मैंने कभी उनसे प्रीति नहीं की थी, भीष्मने जिस समय सब राजाओंको जीतकर बलपूर्व्वक मुझको ग्रहण किया उस समयमें मैं रोदन करती थी; हे शाल्वराज! इससे आप इस दासी निरपराधिनी बालाको ग्रहण करें। इच्छुक भक्ता अगिका त्यागना धर्म्मविरुद्ध है। मैं युद्धमें अपराजित गङ्गानन्दन भीष्मसे बार बार अपने मनकी स्थितिका निवेदन करके उनकी आज्ञाके अनुसार ही यहांपर आई हूं। हे राजेन्द्र! मैंने सुना है, कि वह महाबाहु भीष्म स्वयं मेरी इच्छा नहीं करते; भाईके निमित्त ही उन्होंने ऐसा यत्न किया था। हे राजन्! गङ्गातनय भीष्म जो मेरी और दो बहिन अम्बिका और अम्बालिकाको लेगये थे, उन्हींके सङ्ग अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य्यका विवाह किया है। हे पुरुषसिंह शाल्वराज! तुम्हारे अतिरिक्त जो मैं और दूसरे किसी वरकी इच्छा नहीं करती हूं उस विषयमें मैं मस्तक छूकर शपथ करती हूं। हे राजन्! मैं पहिले दूसरेकी होकर तुम्हारे समीपमें नहीं आई हूं; हे शाल्वराज! मैं अपनी आत्माको शपथ करके यह सत्य ही कहती हूं। हे प्रजानाथ! इससे दूसरेको इच्छा न करनेवाली, स्वयं उपस्थित हुई;—मुझ कुमारीको आप ग्रहण करें।

हे भरतर्षभ! काशिराजकी कन्याके ऐसा कहने पर भी शाल्वराजने पुरानी केंचुलीको छोड़नेवाले सर्पके समान उसे त्याग दिया। कन्याने इसी प्रकारसे अनेक वचन कहे; परन्तु शाल्वराजने उसे ग्रहण नहीं किया। अनन्तर अम्बा रोती हुई आंखोंमें आंसू भरकर यह वचन बोली, हे राजन्! तुमने मेरा परित्याग किया! परन्तु मैं जहां जहां जाऊंगी, वहां पर ही साधु पुरुष मेरी रक्षा करेंगे; क्योंकि सत्यका कभी नाश नहीं होता।

हे कुरुनन्दन! उस समय ऐसा वचन कहकर करुणास्वरसे रोदन करनेवाली उस काशिराजकी कन्याको शाल्वराजने अनायास ही त्याग किया और 'जाओ, जाओ' बार बार ऐसे ही वचन कहने लगे; हे सुन्दरि! मैं भीष्मसे डरता हूं, और तुम भीष्मकी प्रथम ग्रहण की हुई हो; इससे जल्दी यहांसे चली जाओ। अम्बा अदोर्घदर्शी शाल्वराजके ऐसा वचन सुनकर, कातर होके कुररीको भांति रोदन करती हुई नगरसे बाहर हुई।

१७४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अत्यन्त दुःखिता काशिराजको कन्या नगरसे निकल कर ऐसी चिन्ता करने लगी, कि पृथ्वीमें मेरे समान भाग्यहीन राजपुत्री और कोई भी नहीं है; मैं अपने बन्धुबान्धवोंसे पृथक् हुई हूं और शाल्वने भी मेरा

त्याग किया । फिर भी हस्तिनापुरको जानेका अब मुझे साहस नहीं है, क्योंकि शाल्वराजके निमित्त भीष्मसे बिदा होकर उनकी आज्ञा लेकर यहां आई हूं । इससे अपनी निन्दा करूं, वा उस दुष्ट भीष्मका ही तिरस्कार करूं वा जिन्होंने मेरा स्वयम्वर किया था, उस मूढ़ पिताको ही निन्दा करूं ? अथवा यह मेरा अपना ही दोष है, क्योंकि उस दारुण संग्राममें उपस्थित होनेपर मैं भीष्मके रथसे उतरकर शाल्वराजके रथपर क्यों न चली गई ? हा इस समय मूढ़ाकी भांति मैं उसी बुद्धिहीनताका फल पारही हूं । जिसकी दुष्ट नीतिसे मैं इस भारी विपदमें पड़ी हूं; उसे धिक्कार है ; भीष्मको भी धिक्कार है, जिसने पराक्रमका पण करके मुझे वेश्याकी भांति हरण किया । उस मन्दबुद्धि मूढ़ पिताको और मुझको भी धिक्कार है । शाल्वराज और विधाताको भी धिक्कार है । मनुष्य अपने प्रारब्धके अनुसार फल पाता है; यह ठीक है ; परन्तु शान्तनुपुत्र भीष्म ही मेरी इस विपदका मूल कारण है । इससे चाहे तपस्यासे हो अथवा युद्धसे होसके ; उसके सङ्ग शत्रुता करना मेरा कर्त्तव्य कार्य्य बोध होता है ; परन्तु कौन राजा युद्धमें भीष्मको पराजित करनेका उत्साह कर सकता है ? हे भारत ! इसी प्रकारसे चिन्ता करती हुई अम्बा नगरके बाहर पुण्यशील महात्मा तपस्वियोंके आश्रममें पर जा पहुंची । वहांपर तपस्वियोंसे युक्त होकर रात्रि बितायी और अपने हरण करने, छूटने तथा शाल्वराजसे परित्याग किये जानेका सम्पूर्ण वृत्तान्त उन तपस्वियोंके निकट वर्णन किया ।

हे महाबाहो ! वहांपर तपमें वृद्ध, शास्त्र और आरण्यक उपनिषदोंके आचार्य्य, दृढ़व्रती, आत्मज्ञान करनेवाले, वेद और स्मार्त्त कर्म्ममें निपुण शैखावत्य नाम एक महा विद्वान् ब्राह्मण थे । वह महातपस्वी शैखावत्य मुनि अत्यन्त कातरा, शोक और दुःखसे युक्त लम्बी सांस छोड़नेवाली साध्वी कन्या अम्बासे बोले, हे भद्रे ! हे महाभागे ! ऐसी अवस्थामें आश्रमवासी तपस्वी लोग क्या कर सकते हैं ? परन्तु अम्बा दृढ़ताके सहित उससे यह वचन बोली, हे महाभाग ! मेरे ऊपर कृपा करो । मैं प्रव्रज्या धर्म्मको ग्रहण करनेकी इच्छा करती हूं कठिन होनेपर भी मैं तपस्या करूंगी । मैंने मोहमें पड़कर पूर्व्वजन्ममें जो कुछ पाप किया था ; उसका यह सब फल भोग कररही हूं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ; हे पापरहित तापसेन्द्र ! फिर बन्धुबान्धवोंके बीच गमन करनेके निमित्त मुझे उत्साह नहीं होता है । शाल्वने भी जब मुझको परित्याग कर दिया ; तो अब मैं सब प्रकारसे आनन्द रहित होकर तपस्या कर्म्मके उपदेशको सुननेकी इच्छा करती हूं ; आप लोग देवताओंके समान हैं, इससे मेरे ऊपर कृपा कीजिये । तब उन मुनि लोगोंने लौकिक-दृष्टान्त, वेद और युक्तिसे शान्त करके उस कन्याको धीरज कराया और ब्राह्मणोंके सङ्ग मिलकर उसके कार्य्यको पूर्ण करनेके निमित्त विचार करने लगे ।

१७५ अध्याय समाप्त ।

भीष्म बोले, अनन्तर वे धर्मात्मा तपस्वी लोग, उस समय इस कन्याके विषयमें क्या करना उचित है ;—ऐसी चिन्ता करके सब कोई विचार करने लगे । कोई बोले, इसको पिताके घर लेजाना चाहिये, कोई कोई मेरी निन्दा करने लगे और कोई शाल्वराजके निकट जाकर उसीको कन्या समर्पण करनेको कहने लगे ; परन्तु कोई कोई तपस्वी यह कहने लगे कि उसके समीप ले जाकर इसका समर्पण करना उचित नहीं है क्योंकि उसने इसका परित्याग किया है । दृढ़व्रत करनेवाले तपस्वियोंने आपसमें ऐसा वादानुवादकरके फिर उस

कन्यासे कहा है भद्रे ! ऐसी अवस्थामें धर्म्मात्मा लोग क्या कर सकते हैं ? इससे तापस धर्म्मको ग्रहण करनेका तुम्हें कुछ भी प्रयोजन नहीं है ; हम लोगोंके हितके वचन सुनो ; इस स्थानसे लौट कर तुम पिताके घर जाओ तुम्हारे पिता काशिराजको जैसा कर्त्तव्य होगा वैसा करेंगे । वहांपर कल्याणयुक्त और सब गुणोंसे भूषित होकर तुम परम सुखसे वास करोगी। हे भद्रे ! तुम नारी हो, इससे अब ऐसी अवस्थामें पिताकी भांति तुम्हारा दूसरा कोई भी रक्षक नहीं है । हे सुन्दरि ! स्त्रीको पति अथवा पिता ही गतिस्वरूप है । हे भाविनि ! तुम स्वभावहीसे राजपुत्री उसपर भी सुकुमारी कन्या हो ; इससे तपस्या तुमको अत्यन्त ही दुःखदायी होगी ; विशेष करके आश्रममें वास करनेमें अनेक दोष हैं, पर पिताके घरमें उन सब दोषोंकी सम्भावना नहीं है ।

अनन्तर दूसरे कोई तपस्वी लोग उस तपस्विनीसे यह वचन बोले, हे भद्रे ! इस निर्जन भयङ्कर वनमें तुमको अकेली देख कर राजा लोग तुम्हारे ग्रहण करनेकी अभिलाषा करेंगे; इससे तुम कभी यहांपर रहनेकी इच्छा मत करो ।

अम्बा बोली, हे तपस्वी लोग ! आपका कल्याण हो, मैं फिर काशी नगरीमें अपने पिताके स्थान पर नहीं जासकती ; ऐसा करनेसे बन्धु बान्धवोंके बीचमें अवश्य ही अवज्ञाकी पात्री होऊंगी । बालक अवस्थामें बहुत दिन तक पिताके घरमें वास किया था ; इस समय अब वहांपर न जाऊंगी । अब मैं तपस्वियोंसे रक्षित होकर तपस्या करनेकी अभिलाषा करती हूं । हे तपस्वी श्रेष्ठ महात्मागण ! परलोकमें भी मेरे प्रारब्धमें ऐसी ही विपद न उपस्थित होवे ; इसी आशयसे मैं तपस्या करूंगी ।

भीष्म बोले, वे ब्राह्मण लोग इसी प्रकारसे कर्त्तव्य कार्य्यकी चिन्ता कर रहे थे ; उस ही अवसरमें तपस्वी राजर्षि होत्रवाहन उस तपोवनमें आकर उपस्थित हुए। अनन्तर तपस्वियोंने स्वागत प्रश्न करके विधिपूर्व्वक आसन अर्घ प्रदान करके उनकी पूजा की । उनके विश्राम करके बैठनेपर वनवासी तपस्वी लोग उनके सम्मुख ही फिर उस कन्यासे बात चीत करने लगे । हे भारत ! अम्बा और काशिराजका वह वृत्तान्त सुनकर वह महा तेजस्वी ऋषि व्याकुल होगये महातपस्वी महात्मा राजऋषि होत्र वाहन अम्बाके मातामह थे, इससे उसे इस प्रकारसे बात चीत करते हुए सुनकर अत्यन्त ही कृपायुक्त और शरीरसे कांपते हुए उठकर कन्याको गोदमें धारण करके उसे धीरज देने लगे । उन्होंने अम्बासे उसकी उत्पत्तिका सम्पूर्ण वृत्तान्त आदिसे ही पूछना आरम्भ किया और उसने भी जो कुछ हुआ था, उसे विस्तार पूर्व्वक वर्णन किया । अनन्तर वह महातपस्वी राजर्षि दुःख शोकसे युक्त होकर अपने मन ही मन कार्य्यका निश्चय करने लगे ; और कांपते हुए शरीरसे उस दुःखसे कातरा कन्यासे बोले, हे भद्रे ! पिताके घर मत जाओ ; मैं तुम्हारा मातामह (नाना) हूं ; इससे मैं ही तुम्हारे दुःख को दूर करूंगा । हे पुत्री ! तुम मेरे सङ्ग रहो । तुम जिस प्रकारसे तनक्षीण होरही हो, उससे बोध होता है, कि तुम्हारा अन्तःकरण दुःखके भारसे पूर्ण हो रहा है ; इससे मेरे वचनके अनुसार तुम तपस्वियोंमें श्रेष्ठ परशुरामके समीप गमन करो । वह तुम्हारे इस बहुत बड़े दुःख और शोकको दूर करेंगे ; भीष्म यदि उनकी बात न मानेगा ; तो वह युद्धमें अवश्य ही उसका बध करेंगे । इससे तुम उसी प्रलयकालके अग्निके समान तेजस्वी परशुरामके समीप गमन करो । वह महातपस्वी महात्मा भार्गव तुमको सन्मार्गमें प्रतिष्ठित करेंगे ।

अनन्तर अम्बा बार बार लम्बी सांस लेती हुई मातामहको प्रणाम करके मधुर स्वरसे यह वचन बोली, आपकी आज्ञाके अनुसार मैं गमन करूंगी; परन्तु उन लोकविख्यात महात्मा भार्गवका मैं कहांपर दर्शन करूंगी ? वह किस प्रकारसे मेरे तीव्र दुःखको नाश करेंगे और कैसे मैं उनके समीप जाऊंगी ? उसे जाननेकी इच्छा करती हूं।

होत्रवाहन बोले; हे भद्रे ! तुम सत्यव्रती महाबल जामदग्न्य परशुरामको महावनमें अत्यन्त कठिन तपस्या करते हुए वर्त्तमान देखोगी। परशुराम पर्व्वत श्रेष्ठ महेन्द्र-गिरिके शिखरपर नित्य ही निवास करते हैं, और वेदको जाननेवाले ऋषि, गन्धर्व्व तथा अप्सरा भी वहांपर विद्यमान रहती हैं। तुम उसी स्थानमें गमन करके उन दृढ़व्रती तपमें लगे हुए महात्मा भार्गवको प्रणाम करके मेरा वचन कहना और अपना अभिप्राय भी वहांपर वर्णन करना। हे पुत्री ! वह सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ वीरवर जमदग्निपुत्र परशुराम मेरे सखा और प्रीतिपात्र सुहृद हैं; इससे मेरा नाम लेनेहीसे वह तुम्हारा सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध करेंगे।

राजा होत्रवाहन कन्यासे ऐसे वचन कह रहे थे, उसी समय में परशुरामके प्यारे सेवक अकृतव्रण वहांपर आकर उपस्थित हुए। तब वहांपर वे सब सहस्रों मुनि और अवस्थामें बूढ़े राजा होत्रवाहन सब ही तपस्वी उठके खड़े हुए। हे भरतर्षभ ! अनन्तर वे सब तपस्वी लोग उनका यथा उचित अतिथि-सत्कार करके सब कोई उनको चारों ओरसे घेरकर बैठ गये। फिर प्रीतिपूर्व्वक प्रसन्न चित्तसे बहुतसी दिव्य उत्तम और मनोहर कथाका प्रसङ्ग करने लगे। अनन्तर कथाके समाप्त होने पर महात्मा-राजऋषि होत्रवाहनने अकृतव्रणसे महर्षि श्रेष्ठ परशुरामकी बात पूछी ;—हे महाबाहो अकृतव्रण ! वेद जाननेवालोंमें श्रेष्ठ प्रतापवान् परशुराम जो इस समयमें कहांपर मिल सकते हैं ?

अकृतव्रण बोले, हे प्रभावसे युक्त राजेन्द्र ! परशुराम "राजऋषि होत्रवाहन मेरे प्यारे मित्र हैं" ऐसा कहकर सदा तुम्हारा स्मरण किया करते हैं; मुझे बोध होता है, कि तुम्हारे दर्शनकी इच्छासे वह कल यहींपर आवेंगे; इससे यहांपर आनेहीसे तुम उन्हें देख सकोगे। हे राजर्षि ! यह कन्या किस कारणसे वनमें आई है ? यह किसकी कन्या है और तुम्हारी कौन होती है ? इस विषयको सुननेकी मुझे बहुत ही इच्छा है।

होत्रवाहन बोले, हे विभो ! यह मेरी दौहित्री, काशिराजकी पुत्री और इसका नाम अम्बा है। हे तपोधन ! काशि-राजकी यह जेठी कन्या है, अम्बिका और अम्बालिका नाम्नी दो छोटी बहिनोंके सहित इसका स्वयम्वर हुआ था उसमें पृथ्वीके सम्पूर्ण क्षत्रिय राजा कन्याको प्राप्त करनेके निमित्त काशीपुरीमें इकट्ठे हुए थे। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! उस समय वहांपर अत्यन्त ही उत्सव हुआ था। अनन्तर महाबली अत्यन्त तेजस्वी शान्तनुपुत्र भीष्मने सब राजाओंको पराजित करके तीनों कन्याओंको हरण किया था। वह प्रतापी भीष्म सब राजाओंको परास्तकर तीनों कन्या-ओंके सहित हस्तिनापुरमें आकर सत्यवतीको निवेदन करके निज भ्राता विचित्रवीर्य्यके विवाहके निमित्त आज्ञा दी। हे द्विजश्रेष्ठ ! उस समय इस कन्या विचित्रवीर्य्यको विवाहके निमित्त उपस्थित और माङ्गलिक सूत्रबन्धन आदिसे युक्त होते देखकर मन्त्रियोंके बीच भीष्मसे यह वचन बोली, हे वीर ! मैंने मन ही मन शाल्वराजको पतिरूपसे बरण किया है, इससे हे धर्म्मके जाननेवाले ! दूसरे पुरुषमें आसक्त कामिनीको भाईके हाथमें समर्पण करना तुमको उचित नहीं है। भीष्मने उस

वचनको सुनकर मन्त्रियोंके सङ्ग विचार कर सत्यवतीकी सम्मतिसे इसे विसर्जन किया। तब यह कन्या भीष्मकी आज्ञा पाकर प्रसन्न चित्तसे सौभपति शाल्वके निकट जाकर यह वचन बोली, हे राजन्! मैंने मन ही मन तुमको पतिरूपसे वरण किया है, इस समय भीष्मने मुझको त्याग दिया, इससे अब तुम मेरे धर्मको रक्षा करो। परन्तु शाल्वराजने इसके चरित्रके विषयमें शंकित होकर इसको ग्रहण करनेमें अस्वीकार किया। इसी कारणसे यह तपके निमित्त अत्यन्त अभिलाष करके एस तपोवनमें आई है और मैंने भी वंशका नाम लेनेसे इसको जाना है। हे तपोधन! दुःखकी उत्पत्तिके विषयमें यह भीष्महीको कारण समझती है।

अम्बा बोली, हे द्विजसत्तम! यह राजर्षि सृञ्जय होत्रवाहन जो कुछ कहते हैं, वह सब ठीक है। हे महामुनि! लज्जा और अपमानके भयसे फिर अपने पिताके घर जानेका मुझे उत्साह नहीं होता है। हे भगवन्! इससे अब मेरी यह इच्छा है, कि भगवान् परशुराम मुझको जो कुछ कहेंगे, वही कार्य्य मैं सब प्रकारसे करूंगी।

१७६ अध्याय समाप्त।

अकृतव्रण बोले, भद्रे! तुमको यह दो दुःख उपस्थित हैं; इनमेंसे तुम किसके प्रतीकारकी इच्छा करती हो; वह मुझसे यथार्थ रूपसे वर्णन करो। हे भद्रे! यदि शाल्वसे विवाहके निमित्त तुम्हारी इच्छा होवे, तो महात्मा परशुराम अवश्य ही तुम्हारे हितके हितके निमित्त उसके हाथमें तुम्हें समर्पण करेंगे; और जो तुम गंगानन्दन भीष्मको बुद्धिमान् परशुरामके संग युद्धमें पराजित हुए देखनेकी इच्छा करो, तो भार्गव उसकार्य्यको भी कर सकते हैं। हे सुन्दरि! इससे यह राजर्षि सृञ्जय और तुम मेरी बात सुनकर, अब इस विषयमें तुम्हें जो कुछ करना होवे, उसका आज ही विशेष रूपसे विचार कर रक्खो।

अम्बा बोली, हे भगवन्! भीष्मने बिना जाने ही मुझको हरण किया था, मेरा मन जो शाल्वराजके सङ्ग लगा था, इस बातको भीष्म नहीं जानते थे। हे ब्राह्मण! इससे आप अच्छी प्रकारसे विचार पूर्व्वक न्यायके अनुसार जैसा निश्चय कीजिये; उसहीको करनेका विधान कीजिये। कुरुशार्दूल भीष्म अथवा शाल्वराज वा दोनोंके विषयमें जैसा आचरण करना उचित होवे; वैसा ही कार्य्य तुम करो। हे भगवन्! मैंने अपना दुःखका मूल कारण पूर्ण रीतिसे कह सुनाया है; इस समय युक्तिके अनुसार जैसा करना उचित होवे वैसा ही आप लोग उपाय कीजिये।

अकृतव्रण बोले, हे भद्रे! तुमने धर्मको ओर लक्ष्य करके जो यह वचन कहा है, वह ठीक है, इस विषयमें मेरा यह वचन सुनो। हे भीरु! यदि भीष्म तुमको हस्तिनापुर न लेजाते, तो शाल्व परशुरामकी आज्ञासे तुम्हें मस्तकके ऊपर धारण करते, हे भाविनि! भीष्मने सब राजाओंको जीत कर तुम्हें हरण किया है; इस ही निमित्त तुम्हारे ऊपर शाल्वराजको सन्देह हुआ है, हे कल्याणि! भीष्म पुरुषमानी और जयसे युक्त है; इससे उसके संग ही शत्रुता समाप्त करना तुमको उचित है।

अम्बा बोली, हे ब्रह्मन्! मेरे भी मनमें यही इच्छा है, कि जिस प्रकारसे हो सके भीष्मका युद्धमें वध कराऊं। हे महाऋषि! जिस कारणसे मैं अत्यन्त दुःखिता हुई हूं, वह भीष्म ही हो अथवा शाल्व ही हो; जिसको आप लोग दोषी स्थिर कीजिये उसहीका शासन करिये।

भीष्म बोले, हे भरतश्रेष्ठ! इसी प्रकारसे

बातचीत करते हुए उन लोगोंका बहुत दिन बीत गया और सुख देनेवाली शीतल और उष्ण वायुसे युक्त रात्रि भी बीत गई। अनन्तर जटा चीर धारण किये तेजसे जलते हुए परशुरामजी शिष्यमण्डलीके सहित आकर उपस्थित हुए। हे राजशार्दूल! कांधे पर फरसा लिये तलवार तथा धनुष वाण धारण किये हुए पापरहित भार्गव महात्मा राजा होत्रवाहनसे मिलनेको वहां पर आये। उनको देखकर सम्पूर्ण तपस्वी, और महा-तपस्वी राजा होत्रवाहन और तपस्विनी कन्या सब लोग हाथ जोड़कर खड़े होगये और स्थिरचित्तसे मधुपर्कसे परशुरामकी पूजा की। वह भी यथा न्यायसे पूजित होकर उन लोगोंके सहित आसनपर बैठे। हे भारत! अनन्तर परशुराम और होत्रवाहन दोनों महात्मा एकत्र बैठकर पहिले अत्यन्त उत्तम कथाओंको कहने लगे, अनन्तर उस कथाके समाप्त होने-पर राजर्षि होत्रवाहन अवसर देखकर महा-बली भृगुनन्दन परशुरामजीसे यह अर्थयुक्त मधुर वचन कहने लगे हे परशुराम! यह कन्या काशिराजकी पुत्री और मेरी दौहित्री है, हे कार्य्यविशारद! इसका एक कार्य्य है; उसको सुनो। यह वचन सुन परशुराम अम्बासे बोले, तुम्हारा कौनसा कार्य्य है? मुझसे कहो। तब अम्बा जलती हुई अग्निके समान परशुरामके समीप जाकर अपने कमल-के समान हाथोंसे उनके दोनों चरणको स्पर्श-कर शिर झुकाकर प्रणाम करके सम्मुख खड़ी हुई और शोकित तथा दुःखित होकर आंखोंमें आंसू भरके रोदन करती हुई शरणा-गतकी रक्षा करनेवाले परशुरामजीकी शरणा-पन्न हुई।

परशुराम बोले, हे राजपुत्री! तुम इस राजसत्तमको जैसी प्रिय हो, मुझे भी वैसी ही हो; इससे तुम्हारे मनमें जो कुछ दुःख है, उसको कहो, मैं तुम्हारे वचनकी रक्षा करूंगा।

अम्बा बोली, हे भगवन्! हे महाव्रत! आज मैं तुम्हारी शरणागत हुई हूं; इससे महाघोर शोकरूपी कीचड़में फंसी हुई मुझको नौकाकी भांति तुम उद्धार करो।

भीष्म बोले, भृगुश्रेष्ठ परशुरामजी उसके रूप, तरुणाई, देह और परम सुकुमारताको देखकर चिन्ता करने लगे, कि यह क्या कहे-गी? ऐसा मनमें विचारते हुए कृपायुक्त होकर बहुत समय तक ध्यान करने लगे, अनन्तर बोले, तुम्हारा क्या कार्य्य है, उसे कहो। तब उस कन्याने भार्गवका वचन सुनकर उनके समीपमें विस्तारपूर्व्वक अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया। परशुरामजी राजपुत्रीके सब वचनोंको सुनकर कार्य्यका निश्चय करके उस कुमारीसे बोले, हे भाविनि! मैं कुरुश्रेष्ठ भीष्म-के निकट अपना सन्देश भेजूंगा, वह अवश्य ही मेरे वचनको सुनकर उसे स्वीकार करेगा। गङ्गानन्दन भीष्म यदि इकबारगी मेरी बातोंको न मानेगा, तो मैं अपने शस्त्रोंके प्रतापसे युद्धमें उसको बन्धु, बान्धव और अनुयायियोंके सहित भस्म कर दूंगा। अथवा उससे यदि तुम्हारा मन निवृत्त होवे, तो मैं शाल्वराजको तुम्हारे विवाहके निमित्त उपस्थित करूं।

अम्बा बोली; हे भृगुनन्दन! शाल्वराजके विषयमें मेरे पहिले सङ्कल्पको सुनकर ही भीष्मने मेरा परित्याग किया था मैंने सौभ-राजके समीप आकर उन सब वचनोंको निवे-दन किया; परन्तु उन्होंने मेरे चरित्र पर शङ्कित होकर मुझे ग्रहण नहीं किया। हे भृगुनन्दन! इससे सम्पूर्ण विषयको आप अपनी बुद्धिसे निश्चय करके जैसा करना उचित होवे, वैसा कीजिये। महाव्रत भीष्म ही मेरे इस विपदका कारण है; क्योंकि बलपूर्व्वक मुझे ग्रहण करके उन्होंने अपने वशमें किया था; इससे हे महाबाहो! जिसके निमित्त मैंने ऐसा

दुःख पाया है ; उस भीष्महीको आप युद्धमें विनष्ट कीजिये। हे भृगु शार्दूल ! इससे ही मैं अपने वैरका पलटा लूंगी। हे भार्गव ! भीष्म अत्यन्त लोभी नीच और जयके अभिमानमें भरा है ; इससे उसका बध करना ही तुमको उचित है। हे विभो ! जिस समय भीष्मने मुझको हरण किया था उस समय मेरे मनमें "किसी प्रकारसे इसका बध कराऊंगी ; ऐसा ही सङ्कल्प उपस्थित हुआ था। हे राम ! इससे अब आप मेरी उसी अभिलाषाको पूर्ण कीजिये। हे महाबाहो ! इन्द्रने जैसे वृत्रासुरका संहार किया था, तुम भी भीष्मका उसी भांतिसे बध करो।

१७७ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, तब परशुरामजी "भीष्मका बध करो" बारबार ऐसा ही कहकर रोदन करनेवाली कुमारी अम्बासे बोले, हे सुन्दरी ! हे काशिराजपुत्रि ! ब्रह्मवादियोंके प्रयोजनके बिना अब मैं शस्त्रोंको नहीं ग्रहण करता हूं, इससे तुम्हारा और कौनसा कार्य्य करना होगा उसे कहो। हे राजनन्दिनि ! भीष्म और शाल्व दोनों ही मेरे वशवर्त्ती होवेंगे ; हे अनिन्दिते ! तुम शोक मत करो, मैं तुम्हारे कार्य्यको सिद्ध करूंगा। परन्तु हे भाविनि ! बिना ब्राह्मणोंकी आज्ञाके मैं कभी शस्त्र ग्रहण नहीं करूंगा ; क्योंकि मैंने पहिले ऐसा ही नियम कर लिया है।

अम्बा बोली, हे प्रभो ! जिस प्रकारसे होवे, मेरे दुःखको छुड़ाना तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है ; वह दुःख भीष्महीसे उत्पन्न हुआ है, इससे भीष्मको ही शीघ्र नष्ट कीजिये।

परशुराम बोले, हे राजपुत्रि ! तुम यदि कहो, तो भीष्म तुमसे वन्दना करने योग्य होकर भी मेरे वचनसे तुम्हारे दोनों पावों पर अपना शिर रक्खेगा।

अम्बा बोली, हे राम ! यदि मेरे प्रिय कार्य्यको तुम करनेकी इच्छा करते हो, तो युद्धमें आये गर्जते हुए असुरकी भांति भीष्मका बध करो। तुमने जो प्रतिज्ञा की है, उसे सत्य करना ही उचित है।

भीष्म बोले, हे राजन् ! परशुराम और अम्बाका इस ही प्रकारसे वादानुवाद हो रहा था, उसी समयमें परम धर्म्मात्मा अकृतव्रण ऋषि यह वचन बोले, हे महाबाहो भृगुनन्दन ? शरणागता कन्याका परित्याग न कीजिये। आपके सम्मुख युद्धमें आकर भीष्म यदि कहे, कि "मैं परास्त हुआ" अथवा यदि तुम्हारे वचनोंकी रक्षा करे ; तौभी इसका कार्य्य पूर्ण होगा और तुम्हारा वचन भी सत्य होगा। हे महाबाहो ! पहिले सब क्षत्रियोंको जीतकर तुमने ब्राह्मणोंके समीपमें यह प्रतिज्ञा की थी, कि ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा जो कोई पुरुष ब्राह्मणोंका द्रोही होगा ; उससे मैं विनष्ट करूंगा और भयभीत शरणमें आये हुए लोगोंका जीते जी कभी परित्याग न कर सकूंगा, और जो पुरुष सम्पूर्ण क्षत्रिय-कुलको युद्धमें परास्त करेगा ; उस तेजस्वी पुरुषका भी मैं बध करूंगा। हे भृगुनन्दन ! वह कुरुकुल-धुरंधर भीष्म भी इसी प्रकारसे विजयी हुआ है ; इससे रणभूमिमें आये हुए उसके सङ्ग युद्ध कीजिये।

परशुराम बोले, हे ऋषिसत्तम ! मैं पहिलेकी हुई प्रतिज्ञाका स्मरण करता हूं, तौभी सामपूर्व्वक यदि कार्य्य सिद्ध होगा, तो उसहीका विधान करूंगा। हे ब्रह्मन् ! काशिराजकी कन्याके मनका कार्य्य बहुत ही बड़ा है, इससे इसको सङ्गमें लिवाकर मैं स्वयं भीष्मके समीप गमन करूंगा। युद्धमें प्रसाशित भीष्म यदि मेरे वचनोंको न मानेगा तो मेरा यह निश्चय संकल्प है, कि मैं उस अभिमानी क्षत्रियको युद्धमें विनष्ट करूंगा। मेरे हाथसे छूटे हुए सम्पूर्ण बाण मनुष्योंके शरीरमें लगकर

फिर उसी जीता नहीं छोड़ते,वह तुमको पहिले क्षत्रियोंके युद्धमें विदित हो होगया है। महातपस्वी परशुराम ऐसा वचन कह-कर उन ब्रह्मवदियोंके सहित प्रस्थान करनेके निमित्त संकल्प करके उठ खड़े हुए। अनन्तर उन तपस्वियोंने वहांपर उस रात्रिको बिताकर सबेरा होते हो होम जप और समस्त नित्यकर्म्म समाप्त करके मेरे बधके निमित्त प्रस्थान किया। हे भारत! अनन्तर परशुरामने उन तपस्वो और कन्याके सहित कुरुक्षेत्रमें आकर सरस्वती नदीके तीर पर विश्राम किया।

१७८ अध्याय समाप्त।

भोष्म बोले, हे राजन्! अनन्तर वह महाव्रतो अत्यन्त तेजस्वी परशुरामने वहांपर स्थित-होके तीसरे दिन मेरे समीप यह सन्देशा प्रेरण किया, कि मैं आया हूं; मेरे प्रिय कार्य्यको पूर्ण करो। वह महातेजस्वी बलवान् तपोनिधि मेरे निमित्त आये हैं, यह सुनकर मैं प्रसन्न चित्तसे ब्रह्मचारो ऋत्विक्, पुरोहित और ब्राह्मणोंके सहित एक गऊ लेकर आतुरतासे शोघ्र हो उनके समीपमें गमन किया। प्रतापवान् परशुरामजीने मुझको वहांपर उपस्थित देखकर वह पूजा ग्रहण की और मुझसे यह वचन बोले, हे भोष्म! तुमने काम रहित होकर भी कैसी बुद्धि ग्रहण की है, इस काशिराजकी कन्याके स्वयम्बरके समयमें तुमने इसे हरण किया, और फिर किस निमित्तसे इसका परित्याग किया? तुम्हारे परित्याग करनेहीसे यह तपस्विनी निज धर्म्मसे भ्रष्ट हो रही है; क्योंकि जब तुमने स्पर्श किया है, तब कौन पुरुष इसको ग्रहण कर सकता है? हे भारत! तुमने इसे हरण किया था, इसी निमित्त शाल्वने इसको अपने घरमें नहीं रक्खा! इससे अब मेरी आज्ञासे तुम इसका पाणिग्रहण करो, हे पुरुषसिंह! यह राजपुत्रो निज-धर्म्मका लाभ उठावे। हे पापरहित! इसका ऐसा अवमान करना तुमको उचित नहीं है।

अनन्तर मैंने उनसे यह वचन कहा, हे ब्राह्मण! मैं किसी प्रकारसे भाईके हाथमें अब इसे नहीं समर्पण कर सकता हूं। हे भार्गव! पहिले, इसने मुझसे हो यह वचन कहा था, कि "मैं शाल्वकी हुई हूं" और मैंने भी इसको शाल्वके निकट जानेके निमित्त आज्ञा दो थी। मेरी अनुमतिसे इसने सौभनगरमें गमन किया था; इससे अब भय, दया, अर्थ, लोभ अथवा कामनासे भो मैं क्षत्रिय-धर्म्म "नहीं परित्याग कर सकता हूं; क्योंकि यही मेरा सदासे व्रत है।

हे राजेन्द्र! अनन्तर परशुराम क्रोधसे लाल नेत्र करके मुझसे बोले, तुम यदि मेरे वचनको न मानोगे तो तुमको सेवकोंके सहित आज हो मारूंगा।" हे शत्रुनाशन! परशुराम क्रोध से नेत्र लाल करके गम्भीर स्वरसे बार बार मुझे ऐसा हो कहने लगे। मैंने विनय पूर्व्वक उनसे बार बार प्रार्थना की; तौभी वह शान्त न हुए। तब मैंने उन ब्राह्मण-उत्तम भृगुनन्दनको शिर झुकाकर प्रणाम किया और यह वचन कहा,हे महाबाहो! जो मेरे सङ्ग तुम युद्ध करनेकी इच्छा करते हो,उसका कारण क्या है? हे भार्गव! बालक अवस्थामें तुमने हो मुझे चारों प्रकारकी धनुर्व्विद्या सिखाई थी; मैं तुम्हारा शिष्य हूं।

अनन्तर परशुराम क्रोधपूरित नेत्रसे युक्त यह वचन फिर बोले, हे भोष्म! तुम मुझको अपना गुरु भी समझते हो, और मेरी प्रीतिके निमित्त इस काशिराजको कन्याको ग्रहण नहीं करते हो; हे कुरुनन्दन! इसके अतिरिक्त और किसो प्रकारसे भो मुझे शान्ति न होवेगी। हे महाबाहो! इससे इस कन्याको ग्रहण करके अपने कुलकी रक्षा करो; तुम्हारे हाथसे

हरण किये आनेहोसे अब इसको स्वामी नहीं मिलता है। पराये देशके जीतनेवाले परशुरामजीके इस वचनको सुनकर मैंने उनसे फिर कहा, हे ब्रह्मर्षि! तुम निरर्थक श्रम क्यों करते हो? यह किसी प्रकारसे भी नहीं हो सकता। हे जामदग्न्य परशुराम! तुम मेरे गुरु हो, इसहोसे मैं तुमसे विनय कर रहा हूं। हे भगवन्! इसको मैंने पहिले ही त्याग किया है, स्त्रियोंमें जो सब दोष अनर्थके मूल होते हैं, उसको जानकर भी कौन पुरुष सांपिनको भांति दूसरे पुरुषमें आसक्त हुई स्त्रीको अपने घरमें रख सकता है? हे महाव्रत करनेवाले! मैं इन्द्रके भयसे भी धर्म्मका नहीं परित्याग कर सकता हूं; इससे आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइये; अथवा तुमको जैसा करना उचित होवे उसे शीघ्र ही पूर्ण करो। हे विभो! हे पापरहित! पुराणमें महात्मा मरुत्तका कहा हुआ यह एक श्लोक सुन लोजिये, "कार्य्याकार्य्य-कोन जाननेवाले, बुरे मार्गसे गमन करनेवाले अभिमानसे युक्त गुरुको भी परित्याग करना उचित है"। तुम मेरे गुरु हो, इस ही निमित्त प्रेमके वशमें होकर मैं बार बार तुम्हारा सम्मान करता हूं; परन्तु तुम गुरुके धर्म्मको नहीं जानते हो; इस कारणसे मैं तुम्हारे सङ्ग युद्ध करूंगा। गुरु और विशेष करके तपोवृद्ध ब्राह्मणको युद्धमें नहीं मार सकता हूं; यही विचारकर मैं क्षमा प्रार्थना करता हूं; परन्तु धर्म्म-शास्त्रमें लिखा हुआ है, कि जो पुरुष ब्राह्मणको दुष्ट क्षत्रियको भांति शस्त्र लिये हुए उद्यत और अपराजित तथा युद्धमें प्रवृत्त हुए देखकर मारता है; उसे ब्रह्महत्याका पाप नहीं लगता। हे तपोधन! मैं क्षत्रियधर्म्ममें निवास करनेवाला क्षत्रिय हूं। जो पुरुष जिसके संग जैसा आचरण करता है, उसके संग वैसा आचरण करनेसे पाप नहीं होता और अपना अमंगल भी नहीं होता है। धर्म्म अर्थके विचार करनेमें समर्थ, देशकालको जाननेवाले पुरुष यदि अर्थ वा धर्म्म विषयमें कुछ संशय-युक्त होते हैं, तो अर्थको छोड़कर धर्म्महीका अनुष्ठान करके कल्याणको प्राप्त करते हैं। हे परशुराम! इससे संशय करने योग्य अर्थमें भी जब तुम निरर्थक अन्यायपूर्व्वक प्रवृत्त होते हो, तब तुम्हारे सङ्गमें अवश्य ही महा संग्राम करूंगा, हे भृगुनन्दन! मेरे बाहुबल और अलौकिक पराक्रमको देखो, ऐसी अवस्थामें मैं जो कर सकता हूं; वह अवश्य ही करूंगा। कुरुक्षेत्रमें तुम्हारे सङ्ग युद्धमें प्रवृत्त होऊंगा। हे महा-तेजस्वी! द्वन्द्वयुद्धके निमित्त इच्छानुसार सज्जित होइये। हे राम! जिस स्थलमें सैकड़ों बाणोंसे पीड़ित होकर तुम मरकर पृथ्वीमें और महा युद्धमें शस्त्रोंसे जलकर सब निर्जित लोकोंको प्राप्त करोगे, उस ही कुरुक्षेत्रमें गमन करो। हे महाबाहो! हे तपोधन! वहांपर युद्धप्रिय तुम्हारे सङ्ग मैं अवश्य युद्ध करूंगा। हे राम! पहिले जिस स्थलपर तुमने पिताको शुद्धि की थी, मैं भी उस स्थानपर तुमको मारकर क्षत्रियकुलके वैरको पूर्ण करूंगा। हे अभिमानी विप्र! तुम शीघ्र वहांपर गमन करो, मैं तुम्हारे इस पुराने घमण्डको दूरकर दूंगा। हे भार्गव! मैंने अकेले ही इस सम्पूर्ण पृथ्वीके क्षत्रियोंको जीता है" बहुत दिनोंसे तुम जो ऐसा गर्व्व किया करते हो, उसका कारण सुनो; उस समयमें भीष्म अथवा भीष्मके समान कोई क्षत्रिय पुरुष नहीं उत्पन्न हुए थे। हे तपोधन! तुम उस समय केवल तृण-समूहमें ही प्रज्वलित हुए थे; परन्तु तेजस्वी क्षत्रिय अब उत्पन्न हुए हैं। हे महा-बाहो! जो पुरुष तुम्हारे युद्धमय अभिमान और अभिलाषाको छुड़ा सकता है, वह पराये देशको जीतनेवाला भीष्म अब उत्पन्न हुआ है। हे राम! युद्धमें अवश्य ही मैं तुम्हारे इस

अभिमानको कुड़ा दूंगा; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१७६ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भारत! अनन्तर परशुराम हंसते हुए मुझसे यह वचन बोले, "हे भीष्म! प्रारब्धहीसे तुम मेरे सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा करते हो। हे कौरव! अब मैं तुम्हारे निमित्त कुरुक्षेत्रमें जाता हूं, हे परन्तप! तुम वहांपर गमन करो; मैं तुम्हारे वचनको प्रतिपालन करूंगा। हे भीष्म! तुम्हारी माता जान्हवी वहांपर तुमको सैकड़ों बाणोंसे युक्त मरा हुआ और गिद्ध कौए सियार आदिका भक्ष्य होते देखेंगी। हे राजन्! जिसने तुम्हारे समान मन्दबुद्धि युद्धकामी आतुर पुत्रको उत्पन्न किया है, वह सिद्ध चारणोंसे सेविता भगीरथ-सुता महा यशस्विनी जान्हवी देवी रोदन करनेके अयोग्य होकर भी आज तुम्हें दीन भावसे युक्त मेरे हाथसे मरा हुआ देख कर रोदन करेगी। रे युद्धकी इच्छा करनेवाले! आके मेरे सहित चल, तेरा जो कुछ रथ आदि सामग्री है, सब ग्रहण करके चल।" ऐसे वचनको सुन कर मैंने पराये देशको जीतनेवाले परशुरामको शिर झुका कर प्रणाम करके यह वचन कहा बहुत अच्छा वही होगा। हे राजेन्द्र! परशुराम मुझसे ऐसे वचन कहके युद्धकी इच्छासे कुरुक्षेत्रको गये और मैंने भी नगरमें आके सत्यवतीको यह सम्पूर्ण वृत्तान्त निवेदन किया। हे भरतसत्तम! अनन्तर मैंने जननीसे आशीर्वाद पाकर ब्राह्मणोंसे पुण्याह वाचन स्वस्तिवाचन कराकर पाण्डुर-वर्ण धनुष कवच धारण करके श्रेष्ठ सूतकुलमें उत्पन्न हुए वीर और घोड़ोंकी विद्याको जाननेवाले, अनेक युद्धोंके देखनेवाले सारथीसे युक्त उत्तम शोभायमान चक्र और बाघके चमड़ेसे घिरा हुआ, शस्त्रोंसे पूर्ण, सब युद्धकी सामग्रीसे युक्त, पाण्डुरवर्णके चार घोड़ोंके सहित सुवर्ण निर्म्मित मनोहर रथपर चढ़के प्रस्थान किया। हे भरतर्षभ! शिरपर पाण्डुर वर्ण मुकुट श्वेत रङ्गके भूषणोंसे भूषित होकर जय आशीर्वाद सुनते हुए हस्तिनापुरसे निकल कर मैंने रण-भूमि कुरुक्षेत्रके निमित्त यात्रा की। हे राजन्! मन और वायुके समान शीघ्र गमन करनेवाले उत्तम घोड़े उस बुद्धिमान् सारथीके चलानेपर अति शीघ्र ही मुझे रथ समेत लेकर महायुद्धके स्थान पर आके उपस्थित हुए। हे राजन्! मैं और प्रतापवान् परशुरामजी दोनों युद्धके निमित्त वहांपर सहसा आकर खड़े हुए, अनन्तर अत्यन्त तपस्वी परशुरामजी और मैंने अपने अपने उत्तम शङ्खोंको ग्रहण करके जोरसे बजाया; तब उस समय वनवासी तपस्वी और इन्द्रके सहित सब देवता लोग वहां पर दिव्य-युद्धको देखनेमें प्रवृत्त हुए। बहुतसी दिव्य-माला, दिव्य-बाजे, और बादलोंके समूह इधर उधर दीखने लगे। अनन्तर परशुरामके अनुयायी सब तपस्वी लोग रणभूमिको घेरकर दर्शक हुए। इसके अनन्तर सब प्राणियोंकी हितैषिणी मेरी माता गङ्गादेवी मूर्त्तिमयी होकर मेरे निकटमें आकर यह वचन बोली; —हे पुत्र! तुम यह क्या करनेकी इच्छा करते हो? हे कुरुश्रेष्ठ! मैं परशुरामजीके निकट जाकर बार बार यह मांगूगी, कि तुम निज-शिष्य भीष्मके सङ्ग युद्ध मत करो। हे पुत्र! तुम क्षत्रिय होकर तपस्वी परशुरामके संग युद्ध करनेकी इच्छा न करना। अत्यन्त पराक्रमी जो परशुराम क्षत्रियकुलके संहार करनेवाले हैं; वह क्या तुमको विदित नहीं है; जो तुम इस समयमें उनके संग युद्ध करनेकी इच्छा करते हो?

हे भारत! माता इसी प्रकारसे मेरी निन्दा करने लगी। तब मैंने निजमाता गंगा-

देवीको दोनों हाथ जोड़के प्रणाम करके धीरे धीरे जो कुछ वृत्तान्त हुआ था, उसे पूर्ण रीतसे कह सुनाया ; और पहिले परशुरामजीके जैसा वचन कहा था और काशीराजकी कन्याका जो कुछ कर्म्म था, वह भी सम्पूर्ण वर्णन किया। अनन्तर मेरी माता गंगादेवी परशुरामके निकट जाकर "तुम निज शिष्य भीष्मके संग युद्ध मत करो" ऐसा कह कर मेरे निमित्त उनसे विनती करने लगी ; परन्तु उन्होंने उस प्रार्थना करनेवाली मेरी माता जाह्नवीसे कहा, कि तुम भीष्महीको रोको ; वह मेरा अभिलाषका पूर्ण नहीं करता है, इस ही कारणसे युद्ध करनेके निमित्त उसके निकट आया हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर गंगा पुत्रप्रेमके वशमें होकर फिर भीष्मके समीप गई ; परन्तु उन्होंने क्रोधसे नेत्र लाल करके उनके वचनोंको नहीं माना। इसके अनन्तर द्विजसत्तम महातपस्वी परशुराम दीख पड़े और युद्धके निमित्त आवाहन किया।

१८० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, तब मैंने मुसकुराके रणभूमिमें स्थित परशुरामसे यह वचन कहा। हे, वीर ! मैं रथमें बैठकर पृथ्वीपर पैदल चलनेवाले तुम्हारे संग युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। हे महाबाहो ! यदि युद्ध करनेकी इच्छा हो, तो रथपर चढ़के कवच धारण कीजिये। तब परशुराम हंसते हंसते मुझसे यह वचन बोले, हे भीष्म ! पृथ्वी ही मेरा रथ है, वेद सब उत्तम वाहन, वायु सारथी, और वेदमाता गायत्री, सावित्री और सरस्वती मेरे कवच हैं। हे कुरुनन्दन ! मैं इन ही सब सामग्रियोंसे युक्त होकर तुमसे युद्ध करूंगा।

हे गान्धारीनन्दन ! सत्य पराक्रमी परशुरामजीने ऐसे वचनोंको कहते कहते बाणोंसे सब दिशाओंको आच्छादित कर लिया। हे महाबाहो ! अनन्तर मैंने परशुरामको सहसा प्रकट हुए, अद्भुत रूप, मानस निर्म्मित बड़े नगरके समान, दिव्य घोड़ोंसे युक्त, सावधान, सुवर्णके कवचसे भूषित, चन्द्र-सूर्य्यके चिह्नसे चित्रित, सब प्रकारके उत्तम शस्त्रोंके सहित, पवित्र ओंसे युक्त रथके बीच स्थित देखा। इस रथमें परशुरामके प्यारे सखा वेदको जाननेवाले अकृतव्रण गोधा, अङ्गुलि त्राण, तूणीर और शरासनधारी होकर परशुरामके सारथीका कार्य्य करते थे। भार्गव "आओ ! आओ !" युद्धके निमित्त बार बार ऐसा ही कहकर मुझको प्रसन्नचित्तसे आवाहन करने लगे। मैं उस महातेजस्वी सूर्य्यके समान प्रकाशित महाबली क्षत्रियोंके नाश करनेवाले अकेले परशुरामके सम्मुख अकेला ही गया। अनन्तर उनके तीन बार बाणके छोड़नेपर मैंने घोड़ोंको रोकके और धनुषको उतारकर पैदल ही उन ऋषिसत्तम गुरुकी पूजा करनेके निमित्त उनके समीप गमन किया, और उनको विधिपूर्व्वक प्रणाम करके यह उत्तम वचन कहा, कि हे परशुराम ! आप समान होवें, अथवा मुझसे अधिक होवें ; परन्तु मैं आपके सङ्ग युद्ध करूंगा। हे विभो ! आप गुरु और धर्म्मात्मा हैं, इससे मुझे जयके निमित्त आशीर्व्वाद करो।

राम बोले, हे कुरुश्रेष्ठ ! कल्याणकी इच्छा करनेवाले पुरुषको इसी प्रकारका कर्त्तव्य-कर्म्म करना उचित है ; क्योंकि जो बड़ोंके सङ्ग युद्ध करता है, उसे ऐसा ही व्यवहार करना धर्म्मके अनुसार उत्तम है। हे महाबाहो ! तुम यदि इस प्रकारसे मेरे पास न आते ; तो मैं तुमको शाप देता। हे कौरव ! अब तुम धीरज धरके सावधान होकर युद्ध करो। हे राजन् ! मैं स्वयं तुमको जीतनेकी उद्यत हुआ हूं ; इससे तुम्हारे जयको अभिलाषा नहीं कर सकता

हूं; अब तुम जाओ, धर्म्म पूर्व्वक युद्ध करो; मैं तुम्हारे चरित्रसे प्रसन्न हुआ हूं।

अनन्तर मैंने उन्हें नमस्कार करके शीघ्र रथपर चढ़कर सुवर्ण-भूषित अपने शङ्खको फिर बजाया। हे राजन्! इसके अनन्तर उनका और मेरा परस्पर जयकी अभिलाषासे बहुत दिनतक युद्ध हुआ। पीछले परशुरामने नव सौ साठ चोखे कङ्कपत्रसे युक्त बाणोंसे मेरे रथपर प्रहार किया और मेरे रथके चारों घोड़े और सारथीको बाणोंकी वर्षासे विकल कर दिया। तौभी मैं इस प्रकारसे दंशित होकर संग्राममें निर्भय खड़ा ही था। अनन्तर देवता और ब्राह्मणोंको विशेषरूपसे नमस्कार करके रणभूमिमें स्थित उन ऋषिराज परशु-रामसे यह वचन कहा। हे ब्रह्मन्! तुम्हारे मर्य्यादा रहित होनेपर भी मैं तुम्हारे गुरुपनका सम्मान करता हूं और धर्म्म संग्रह विषयमें और भी कुछ कर्त्तव्य-कर्म्मको कहता हूं, उसे सुनिये। तुम्हारे शरीरमें जो सब वेद और अत्यन्त ही ब्राह्मणत्व है और उससे जो तुमने बहुत ही तपस्या सञ्चित की है; उन सबके ऊपर मैं प्रहार नहीं करताहूं, तुमने जो क्षत्रिय धर्म्मका आसरा ग्रहण किया है; मैं उसहीके ऊपर प्रहार करता हूं; क्योंकि शस्त्र धारण करनेहीसे ब्राह्मण क्षत्रियत्वको प्राप्त करता है। हे वीर! तुम मेरे धनुषके परा-क्रम और बाहुबलको देखो। मैं इस उत्तम पानीमें बुझाये हुए बाणसे तुम्हारा कार्मुक काटता हूं। हे भरतर्षभ! ऐसा कहकर मैंने उनके ऊपर एक तेज भल्ल चलाया और उसीसे उनके धनुषका अग्रभाग (सिरा) काटके पृथ्वीमें गिरा दिया। उनके रथपर भी सैकड़ों नतपर्व्व बाणोंको चलाया, हे राजन्! पीछले शरीरमें पृथक् पृथक् विद्ध होकर पाके सर्पकी भांति वे सब बाण शरीरसे रक्त बहाने लगे। उस समयमें परशुराम रक्तपूरित देहसे ऐसे शोभित हुए, जैसे धातुओंके बहनेसे सुमेरु पर्व्वत तथा हेमन्त ऋतुके अन्तमें अशोक और वसन्त ऋतुमें किंशुक (पलाश) का फूल शोभाय-मान लगता है। अनन्तर वह क्रोधसे युक्त होकर दूसरा धनुष लेकर सुवर्ण पंखसे युक्त उत्तम पानीमें बुझे हुए बाणोंकी वर्षा करने लगे। वह महा वेगशाली सर्पके विष वा अग्निके समान भयङ्कर अनेक बाण मेरे शरीरमें लगकर मुझे कंपाने लगे। तब मैंने किसी प्रकार युद्धमें फिर स्थिर होके क्रोधमें भरके सौ बाण परशुरामके ऊपर चलाया, वे सब बाण सूर्य्यके तेज और विषैले सर्पके समान परशुरामके शरीरमें लगनेसे वह चेतना रहितके समान होगये। हे भारत! उस समय मैं कृपासे युक्त होकर अपने मन ही मन कहने लगा, कि हाय! मैंने क्षत्रियधर्म्मके ग्रहण करनेहीसे यह पाप किया है; यह धर्म्मात्मा ब्राह्मण और विशेष करके मेरे गुरु हैं, सो उनको मैंने अपने बाणोंसे पीड़ित किया। हे राजन्! मैं शोक-से पूरित होकर बार बार ऐसा ही विलाप करने लगा, उसके अनन्तर फिर मैंने परशु-रामके ऊपर प्रहार नहीं किया। अनन्तर भगवान् सूर्य्य अपनी किरणोंसे पृथ्वीको तपा-कर सन्ध्याके समय अस्त होगये और युद्ध भी निवृत्त हुआ।

१८१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ! अनन्तर मेरे निपुण सारथीने अपना, घोड़ोंका और मेरे शरीरका सब शल्य निकाला। दूसरे दिन सबेरे सूर्य्यके उदय होनेपर स्नान कराके अत्यन्त तेजस्वी घोड़ोंको रथमें जुटाकर मुझे रणभूमिमें ले आया, उसके अनन्तर युद्ध आरम्भ हुआ। प्रतापवान परशुरामने मुझे रथमें बैठे हुए, कवचसे युक्त शीघ्र आया हुआ देखकर

अत्यन्तही अपनी रथसज्जा की। अनन्तर मैं युद्धकी अभिलाषा करनेवाले परशुरामकी आगमन करते हुए देखकर अपने उत्तम धनुषको त्याग, शीघ्र ही रथसे उतरकर, पहिलेकी भांति उन्हें प्रणाम करके फिर रथपर चढ़के युद्ध करनेके निमित्त उनकेसम्मुख निर्भय खड़ा हुआ। इसके अनन्तर बहुतसे बाणोंकी वर्षा करके एक दूसरेको पीड़ित करने लगे। परशुरामजीने फिर मेरे ऊपर उत्तम पानोसे बुझे जलते हुए सर्प-मुख बाणोंको चलाया। उस समय मैंने सहस्रों और सैकड़ों बाणोंसे उन सबको मार्गहीमें काटना आरम्भ किया। तब महाप्रतापी परशुरामने मेरे ऊपर दिव्य अस्त्रोंको चलाना आरम्भ किया। मैंने उससे भी अपनी अधिक श्रेष्ठता दिखानेके निमित्त उत्तम शस्त्रोंसे उन अस्त्रोंको भी काट डाला। इसके अनन्तर आकाश-मण्डलसे महा गम्भीर-नाद उत्पन्न होने लगा। हे भारत! अनन्तर मैंने परशुरामके ऊपर वायव्य-अस्त्र चलाया और उन्होंने भी गुह्यक अस्त्रसे उसे काट गिराया। तब मैंने मन्त्र पढ़के आग्नेय अस्त्र चलाया; परशुरामने वारुणास्त्रसे उसका संहार किया। इसी प्रकारसे मैं भी रामके सब दिव्य अस्त्रोंको निवारण करने लगा; और उन्होंने मेरे सब दिव्य शस्त्र निवारण किये। हे राजन्! अनन्तर महातेजस्वी और प्रतापी परशुरामने अत्यन्त क्रुद्ध होकर मुझे बांयी ओर करके मेरे छातीमें शस्त्र प्रहार किया; उससे मैं चेतरहितकी भांति रथपर गिर गया। तब सारथीने मुझे इस प्रकारसे मूर्च्छित देख कर शीघ्र ही रथको लौटाया। हे राजन्! अकृतव्रण आदि रामके अनुयायी लोग और काशिराजकी कन्या भार्गवके बाणसे मुझे अत्यन्त पीड़ित, विह्वल, ग्लानिसे युक्त, अचेत और रणसे पराजित होते देख कर आनन्दित होने लगे। अनन्तर जब मुझे चेत हुआ और मेरी बुद्धि ठीक हुई, तब मैंने सारथीसे कहा, हे सूत! मैं पीड़ा रहित और सावधान हुआ हूं; इससे तुम मुझको परशुरामके समीप ले चलो। हे कौरव मेरा सारथी मुझे उत्तम घोड़ोंसे युक्त शोभायमान रथपर लेकर चला और वायुके समान घोड़े भी अत्यन्त शीघ्रतासे नाचते हुए चले। अनन्तर मैंने परशुरामके समीप जाकर क्रोधपूर्वक उनके ऊपर बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ की। उन्होंने तीन तीन बाणोंसे मेरे सब बाण सरलभावसे मार्गहीमें काट डाले; इस प्रकारसे मेरे सैकड़ों तथा सहस्रों बाण परशुरामके बाणोंसे दो दो टुकड़े होकर पृथ्वीपर गिर पड़े। तब मैंने परशुरामके बध करनेकी इच्छासे साक्षात् काल दण्डके समान अत्यन्त प्रकाशित जलता हुआ अस्त्र चलाया; उसके लगनेसे वह मूर्च्छित होके पृथ्वीमें गिर पड़े। हे भारत! सूर्य्यके पतित होनेसे जगत् जिस प्रकारसे व्याकुल हो सकता है, परशुरामके पृथ्वीपर गिरनेसे सबने उसी भांतिसे हाहाकार किया। वह सब तपस्वी और काशिराजकी कन्या आदि अत्यन्त व्याकुल होके उनके निकट गये और धीरे धीरे उन्हें आलिङ्गन करके जलसे युक्त शीतल हाथोंसे स्पर्श करके और जय आशीर्वादसे उनकी स्तुति करने लगे। अनन्तर परशुराम उठ कर धनुषपर बाण चढ़ाके विह्वल-वचनसे मुझे कहने लगे; "भीष्म! खड़ा रह! खड़ा रह! यही मारा गया।" संग्राममें वह बाण धनुषसे छूट कर अत्यन्त वेगसे मेरी बांयीं ओर हृदयमें लगा उसके लगनेसे मैं वायुसे उखड़ते हुए वृक्षकी भांति व्याकुल होगया। परशुरामने शीघ्रता से अपना शस्त्र चलाकर मेरे सब घोड़ोंको मार डाला और क्रोधपूर्वक लोम युक्त बाणोंके जालसे मुझे छिपा दिया। मैंने भी उनके शस्त्रोंके निवारण करनेके निमित्त शीघ्र शस्त्र चलाया। हे भारत! परशुरामके और मेरे वे सब बाण आकाशमें व्याप्त होकर ऊपर ही

रह गये ; इससे वाणोंके जालसे आकाश ऐसा छा गया, कि सूर्य्यकी किरण प्रकाशित नहीं होती थी, और वायुका शीघ्र चलना भी रुक गया। इससे वायुकी सनसनाहट, बाणोंकी चोट, और सूर्य्यकी किरणसे अग्निकी उत्पत्ति हुई। तब सम्पूर्ण बाण अग्निसे भस्म होकर पृथ्वीमें गिर पड़े। हे कौरव! अनन्तर परशुराम खूबही क्रोधसे पूरित होकर सौ, हजार दश-हजार, लाख, अर्ब्बुद, खर्व्व, निखर्व्व आदि अनगिनत बाणोंकी अत्यन्त शीघ्रतासे वर्षाने लगे। मैं भी विषधारी सर्पके समान अपने बाणोंसे उनके सब वाणोंको काट काट पृथ्वीमें गिरा दिया। हे भरत सत्तम! उस समय इसी प्रकारसे घोर संग्राम होने लगा।

१८२ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भरतर्षभ! दूसरे दिन मेरा और परशुरामका समागम होने पर फिर अत्यन्त घोर युद्ध हुआ, वह दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले धर्म्मात्मा प्रतापी परशुराम प्रतिदिन अनेक दिव्य-अस्त्रोंको चलाने लगे, और मैं भी अपने अस्त्रोंसे उन सब शस्त्रोंको निवारण करने लगा। हे भारत! मैं अपने प्राणकी आशा छोड़कर युद्ध करने लगा। इसी प्रकारसे अनेक शस्त्रोंके चलने और उनका निवारण होनेपर महातेजस्वी परशुराम भी प्राणवण करके युद्ध करने लगे। अस्त्रोंके विफल होनेपर महात्मा परशुरामने प्रकाशमान उल्काके समान जलती हुई सब लोकोंमें तेजसे व्याप्त होनेवाली महाघोर शक्ति चलायी। मैंने भी अपने तेज बाणोंसे उस सम्मुख आनेवाली प्रलयकालके सूर्य्यके समान प्रकाशित शक्तिको तीन खण्ड करके पृथ्वीमें गिरा दिया; तब शीतल-वायु चलने लगा। हे भारत! उस शक्तिको कटकर गिरती हुई देखकर परशुरामने क्रोधमें भरकर और भी भी बारह महा भयङ्कर शक्तियां चलायी। तेजस्विता और शीघ्रतासे युक्त होनेसे उन शक्तियोंके रूपका वर्णन करना बहुत कठिन है; रूपका मैं क्या वर्णन करूं। सब दिशाओंसे अग्निके लुक्काके समान नाना रूपसे युक्त, प्रलयकालके बारह आदित्यके समान तेजसे जलती हुई उन शक्तियोंको देख कर ही मैं विह्वल होगया। अनन्तर उनको सम्मुख आई हुई जानकर मैंने अत्यन्त उत्तम बारह बाण चलाये और उनहीसे उन महा घोर शक्तियोंको भी भस्म कर दिया, हे राजन्! तब महात्मा परशुरामने फिर सुवर्णके दण्डसे युक्त अत्यन्त विचित्र जलती हुई उल्काके समान महाभयङ्कर बहुतसी शक्तियां चलायी, मैंने उन्हें चर्म्म (ढाल) से रोककर तरवारसे काटा और दिव्य बाणोंको चलाकर सारथीके सहित उनके दिव्य घोड़ोंका बाणोंसे छा लिया। तब हैहयवंशीय कार्त्तवीर्य्य अर्जुनके नाश करनेवाले महात्मा परशुरामने केंचुलीसे छूटे हुए सर्पकी भांति सुवर्णभूषित उन शक्तियोंको कटती हुई देखकर अत्यन्त ही क्रोधके वशमें होकर दिव्य अस्त्रोंको चलाना आरम्भ किया। अनन्तर प्रचण्ड तेजसे युक्त प्रकाशित शलभ-समूहकी भांति उन सब शस्त्रोंने आकर मेरे रथके घोड़े और रथसमेत सारथीको सब ओरसे आच्छादित करते हुए रथको दोनों धुरी तथा रथके पहिये आदिको तोड़कर गिरा दिया। अनन्तर उनके बाणोंकी वर्षा शेष होनेपर मैंने भी अपने तेज बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ की। उस समय वह महात्मा परशुराम बाणोंके लगनेसे रक्त मोचन करने लगे। मेरे बाणोंसे परशुराम व्याकुल होगये; और मैं भी उनके बाणोंसे अत्यन्त ही विद्ध हुआ। अन्तमें सन्ध्या-समय सूर्य्यके अस्त होनेपर युद्धका होना बन्द हुआ।

१८३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! अनन्तर प्रातःकाल सूर्य्यके उदय होने पर मेरे सङ्ग फिर परशुरामका युद्ध आरम्भ हुआ। प्रहार करनेवालोंमें श्रेष्ठ परशुरामजी अपने भ्रमणशील रथपर स्थित होके पर्व्वतके ऊपर जल वर्षानेवाले बादलकी भांति मेरे ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे; उससे मेरा सुहृद सारथी परशुरामके बाणोंसे पीड़ित होकर मेरे अन्तःकरणको दुःखित करता हुआ रथसे पृथ्वीपर गिर पड़ा। अत्यन्त ही मूर्च्छाके वशमें होके परशुरामके वाणोंसे पीड़ित होकर वह मेरा सारथी मुहूर्त्त भरमें मर गया और मैं भी उस समयमें भयभीत होगया। सारथीके मारे जानेपर मैं डोलायमान चित्तसे उसके निमित्त शोक कर रहा था; उस ही समयमें महात्मा भार्गवने मेरे ऊपर कालके समान बाण चलाया। मैं सूतके अभावसे विपद्ग्रस्त होकर विलाप कर रहा था; तौभी परशुरामने बलपूर्व्वक धनुषपर बाण चढ़ाकर मुझे पीड़ित किया। हे राजन्! वह रक्तको पीनेवाला भयङ्कर बाण मेरी छातीमें लगकर मेरे सहित पृथ्वीमें आपड़ा तब परशुराम मुझे पृथ्वीमें गिरा हुआ देखकर प्रसन्न हो ऊंचे स्वरसे बादलके समान बार बार गर्ज्जने लगे। हे राजेन्द्र! मुझे इस प्रकारसे चेतरहित देखकर परशुराम अनुचरवृन्दके सहित हर्षित होकर सिंहनाद करने लगे। वहांपर मेरे निकट जो कौरव थे, तथा जो लोग युद्ध देखनेके निमित्त आये थे; वे लोग मुझे इस प्रकारसे पड़ा हुआ देखकर बहुत ही दुःखित हुए। हे राजसिंह! अनन्तर मैंने रथसे गिरकर देखा कि रणभूमिमें सूर्य्य और अग्निके समान तेजस्वी आठ ब्राह्मण मुझे चारों ओरसे घेरकर अपनी भुजाओंसे धारण किये हुए हैं। उन ब्राह्मणोंसे रक्षित होकर मैंने पृथ्वीको स्पर्श नहीं किया; उन लोगोंने बन्धुकी भांति मुझे अन्तरिक्षहीमें थाम रक्खा था; मैं लम्बी सांस छोड़ रहा था और वह लोग जलसे मुझे सावधान कर रहे थे। हे राजन्! उस समयमें वे ब्राह्मण मुझे धारण करके बार बार यह कहने लगे. "तुम भय मत करो, तुम्हारा कल्याण होगा।" उन लोगोंके वचनसे मैं तर्पित और सावधान होके उठ खड़ा हुआ और देखा, कि नदियोंमें श्रेष्ठ मेरी माता गंगा-देवी रथमें बैठी हैं। हे राजेन्द्र! मेरी माता गंगाने युद्धमें मेरे घोड़ोंको भी सावधान किया था। अनन्तर मैं जननी और पितरोंकी चरण-वन्दना करके रथपर चढ़ा। तब मेरी माता रथ, घोड़े और सब सामग्रियोंके सहित मेरी रक्षा करने लगी। परन्तु मैंने हाथ जोड़के विनय-पूर्व्वक उन्हें बिदा किया और स्वयं ही वायुके समान शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंको चलाकर सन्ध्या पर्य्यन्त परशुरामके संग युद्ध किया हे भरतश्रेष्ठ! उनके ऊपर मैंने एक हृदयको छेदनेवाला महाबलशाली बाण चलाया। मेरे उस बाणसे पीड़ित हो, परशुराम मोहके वशवर्त्ती होकर धनुषको छोड़के दोनों घुटनोंसे पृथ्वीको अवलम्बन करके खड़े रहे। उन महातेजस्वी परशुरामके पृथ्वी टेकके खड़े होने पर आकाशसे रुधिरकी वर्षा होने लगी, बादल-रहित बिजली और सैकड़ों उल्कापात होने लगे सूर्य्य छिप गया, वायु बड़े जोरसे बहने लगी, पृथ्वी जलने लगी गिद्ध कौए तथा बगुला आदि मांस भक्षण करनेवाले पक्षी हर्षित होकर इधर उधर घूमने लगे; सब दिशाएं जलने लगीं, शियार महाघोर शब्द करने लगे और बिना बजाये ही नगाड़े अत्यन्त कर्कश-शब्दसे बजने लगे। हे भारत! महात्मा परशुरामके चेत-रहित होकर पृथ्वीपर गिरनेसे महाघोर भयङ्कर ये सब उत्पातके चिन्ह उत्पन्न हुए। अनन्तर भगवान् सूर्य्य धूलसे छिपकर अस्त होगये और सुख देनेवाली शीतल वायुसे युक्त रात्रिका समय हुआ; तब

मैंने भी युद्ध करना बन्द किया। हे राजन्! इसी प्रकारसे सन्ध्याको निवृत्त और प्रातःकाल फिर युद्धका आरम्भ होने लगा। इसी भांतिसे तेईस दिन महा घोर संग्राम हुआ।

१८४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! अनन्तर रात्रिके समयमें मैं ब्राह्मण, पितर, देवता, रात्रिको भ्रमण करनेवाले भूतवृन्द और राजगणको शिर झुका कर प्रणाम करके एकान्त स्थान-पर शय्याके ऊपर मन ही मन यह चिन्ता करने लगा, कि आज बहुत दिन हुआ परशुरामके सङ्ग मेरा महा-भयङ्कर दारुण-संग्राम हो रहा है; तौ भी मैं महाबलसे युक्त महावीर विप्रको पराजित नहीं कर सकता हूं। प्रतापी परशु-रामको युद्धमें पराजित करनेकी यदि मुझे सामर्थ्य हो, तो देवता लोग प्रसन्न होके आज रात्रिके समयमें मुझे दर्शन देवें। हे राजन्! मैं बाणोंके लगनेसे घायल होके इसी प्रकारसे दाहिनी ओर शय्यापर सोया था, उसी समयमें प्रातःकालके पहिले ही जिन ब्राह्मणोंने मुझे रथसे गिरनेपर उठाया और मुझे ग्रहण करके कहा था, तुम्हें भय नहीं है उन्हीं लोगोंने स्वप्नमें मुझे दर्शन दिया। और उन सबोंने मुझे घेरकर जो वचन कहा, वह तुम सुनो। वह लोग बोले, भीष्म उठो; तुमको कुछ भी भय नहीं है; हम लोग तुम्हारी रक्षा करेंगे; क्योंकि तुम हम लोगोंके ही शरीर हो; हे भरतर्षभ! परशुराम किसी प्रकारसे भी तुम्हें युद्धमें पराजित न कर सकेंगे; बल्कि तुम ही उन्हें परास्त करोगे। हे भरतश्रेष्ठ! विश्वकर्माका बनाया यह जो प्रस्वाप नाम उत्तम प्राजापत्य अस्त्र है। वह तुमको युद्धके समयमें विदित हो जायेगा, क्योंकि पूर्वजन्ममें भी यह तुमको विदित था। हे भारत! परशु-राम तथा पृथ्वीके दूसरे पृथ्वीके किसी पुरुषने आजतक इसको तत्वको नहीं जाना है। हे भारत! इससे तुम इस अस्त्रको स्मरण करो; और दृढ़ताके सहित चलाओ। हे भारत! इस शस्त्रसे परशुरामकी मृत्यु नहीं होवेगी, और तुमको भी ब्रह्महत्याका पाप नहीं लगेगा। हे भीष्म! तुम्हारे बाणके बलसे पीड़ित होकर परशुराम केवल शयन मात्र करेंगे। अनन्तर उनको जीतकर तुम ही अपने उत्तम सम्बोधन अस्त्रसे उठाना, हे राजेन्द्र! इससे प्रातःकाल उठकर तुम ऐसा ही करो; सोना और मरना दोनोंको हम लोग समान ही समझते हैं। हे कौरव! परशुरामकी कभी मृत्यु न हो सकेगी; इससे तुम अब इस प्रस्वाप अस्त्रको धनुषपर चढ़ाओ। वह मूर्त्तिमान् समान रूपवाले आठों ब्राह्मण ऐसा वचन कह-कर वहीं अन्तर्धान होगये।

१८५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! अनन्तर रात्रिके बीतनेपर मैं निद्राके उठ उस स्वप्नके वृत्तान्तको मनमें विचार कर हर्षित हुआ। इसके बाद परशुरामका और मेरा सब लोकोंको विस्मित करनेवाला परम अद्भुत संग्राम आरम्भ हुआ। हे भारत! उस समय परशुरामने मेरे ऊपर बाणोंकी वर्षा की और मैंने भी उसे निवारण किया। अनन्तर महातपस्वी भार्गवने पहिले दिनके कोपसे क्रुद्ध होकर मेरे ऊपर इन्द्रके वज्र समान कठोर साक्षात् यमदण्डके समान शक्ति चलायी, हे भरतर्षभ! वह महाघोर शक्ति जलती हुई अग्निसे समान प्रकाशित होकर सब दिशाओंको प्रज्वलित करती हुई अन्तमें बिजली अग्निके समान शीघ्र ही आकर मेरे कन्धेमें लगी। हे महाबाहो! तब परशु-रामके शस्त्रसे घायल होकर गेरूकी धार बर्षनेवाले पर्वतकी भांति मेरे शरीरसे रक्त

बरसने लगा! तब मैं अत्यन्त क्रोधित होकर परशुरामकी ओर सर्प विषके-समान मृत्यु रूपी बाण चलाया। हे महाराज! वह बाण वीरवर द्विजसत्तम परशुरामके मस्तकमें लगा; उससे शृङ्गयुक्त पर्व्वतकी भांति उन्होंने क्रोधपूर्व्वक धनुषको खींचकर शत्रुओंका नाश करनेवाला कालके समान बाण चलाया। वह फुफुकार करता हुआ सर्पके समान गर्जता हुआ बाण मेरी छातीमें लगा उसके लगनेसे मैं रक्तसे भीगकर पृथ्वीमें गिर पड़ा; परन्तु फिर साव-धान होकर बुद्धिमान् परशुरामकी ओर वज्रके समान जलती हुई प्रकाशित शक्ति चलायी। हे राजन्! वह शक्ति द्विजसत्तम परशुरामकी छातीमें लगी; उससे वह विह्वल होके कांपने लगे। तब उनके प्यारे मित्र महातपस्वी अकृतव्रण उनको आलि-ङ्गन करके अनेक प्रकारके उत्तम और शुभ वचनोंसे हर्षित करने लगे। अनन्तर महाव्रत करनेवाले परशुरामने क्रोधपूर्व्वक ब्रह्मास्त्र चलाया। तब मैंने उसके निवारण करनेको परम-ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया। हे भारत! वह महा अस्त्र प्रलयकालके समान प्रज्वलित होने लगे। हे भारत सत्तम! परशु-राम तथा मेरे पास न पहुंच कर दोनों ब्रह्मा-स्त्रोंका आकाशके बीचमें ही समागम हुआ। उस समय सम्पूर्ण पृथ्वी और आकाश तेजसे युक्त होगया और सम्पूर्ण प्राणी अत्यन्त ही पीड़ित होने लगे। दोनों अस्त्रोंके तेजसे पीड़ित होकर ऋषि, गन्धर्व्व, देवता आदि सब ही अत्यन्त दुःखित हुए। पर्व्वत, वन और वृक्षोंके सहित पृथ्वी कांपने लगी और प्राणी मात्र अत्यन्त पीड़ित होकर विषाद करने लगे आकाश मण्डल प्रज्वलित होने लगा, सब दिशाओंमें धूंआं भर गया; इससे आकाशचारी भी आकाशमें निवास न कर सके। अनन्तर देव, असुर और राक्षसोंसे युक्त सब लोकोंमें हाहाकार होने लगा। "यही उत्तम समय है" विचार करके मैंने शीघ्र ही उन ब्राह्मणोंके वचनके अनुसार प्रस्वापास्त्र चलानेकी इच्छा की; उस समय वह विचित्र अस्त्र भी मेरे मनके बीच प्रकाशित होगया।

१८६ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! अनन्तर आकाशमें "हे कौरव नन्दन भीष्म! प्रस्वापास्त्र मत चलाओ" इसी प्रकारसे महाघोर शब्द हुआ; तौभी परशुरामकी ओर मैंने उस अस्त्रको चलाया। तब नारद मुझसे बोले, हे कौरव! देखो वह आकाशमें सब देवता स्थित हैं, ये सब लोग तुमको निवारण करते हैं; इससे तुम प्रस्वा-पास्त्र मत चलाओ। हे भारत! परशुराम तपस्वी और ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण हैं, विशेष करके तुम्हारे गुरु हैं; इसके किसी प्रकारसे उनका अपमान मत करो। हे राजेन्द्र! फिर मैंने उन आठ ब्रह्मवादी ब्राह्मणोंको आकाशमें स्थित देखा, वह लोग हंसके मुझसे यह वचन बोले, "हे भारत श्रेष्ठ! नारद जो कहते हैं, वही करो; क्योंकि यह लोकका परम कल्याण करने वाला वचन है।"

अनन्तर मैंने उस महाघोर प्रस्वापास्त्रका संहार करके विधिपूर्व्वक ब्रह्मास्त्र ही दीपित किया। हे राजसिंह! तब क्रोधमें भरे हुए परशुराम उस प्रस्वापनास्त्रको रुकता हुआ देखकर सहसा यह वचन बोले, भीष्मने मुझे पराजित किया मैं अत्यन्त ही मन्द-बुद्धि हूं। इसके अनन्तर परशुरामने माननीय अपने पिता और पितामह आदि पितरोंको देखा। वह लोग उसी स्थान पर उनको घेर कर खड़े हुए और उस समय उन्हें शान्त करनेके निमित्त यह वचन बोले, "हे तात! तुम फिर कभी किसी प्रकारसे भी ऐसा कर्म्म मत करना;— भीष्म तथा क्षत्रियोंके सङ्ग अब कभी युद्ध कर-

नेका उत्साह मत करो। हे भृगुनन्दन! युद्ध क्षत्रियोंका ही धर्म्म है। ब्राह्मणोंका वेद पढ़ना और व्रत करना ही परम धर्म्म है। पहिले किसी कारणके उपलक्षमें हमलोगोंने तुमको इन शस्त्रोंको धारण करनेके निमित्त कहा था, और तुमने भी महाघोर कठिन कार्य्यका अनुष्ठान किया था। हे महाबाहो! संग्राममें भीष्मके संग तुम्हारा यह युद्ध यहां ही तक हुआ। हे पुत्र! इससे अब तुम इस रणभूमिसे बाहर चलो। हे भार्गव! तुम्हारा धनुष धारण करना भी आज ही तक रहा; इससे हे पुत्र! अब तुम इसे विसर्जन करके तपस्या करो। सम्पूर्ण देवता लोग इस शान्तनुनन्दन भीष्मको "हे कुरुश्रेष्ठ! इस संग्रामसे निवृत्त होजाओ, गुरु परशुरामके संग युद्ध मत करो; इनको युद्धमें पराजित करना तुमको उचित नहीं है। हे गंगानन्दन! रणभूमिमें इनका यथा उचित सम्मान करो; बारबार ऐसे वचनोंको कहके निवारण करके तुम्हारे ऊपर कृपा की है। हे पुत्र! इससे हम लोग भी तुम्हारे गुरु हैं; इस ही कारणसे तुम्हें निवारण करते हैं। हे भार्गव! शान्तनुके वीर्य्य और गंगाके गर्भसे उत्पन्न हुए महायशस्वी वसुको तुम कैसे पराजित कर सकते हो? हे पुत्र! भीष्म वसुओंमें एक प्रधान पुरुष हैं, इससे प्रारब्धसे जो तुम जीते बचे हो; यही बहुत है। इससे अब तुम युद्धसे निवृत्त होजाओ; स्वयम्भू विधाताने इन्द्रपुत्र बलवान् पाण्डवश्रेष्ठ अर्जुनको समयके अनुसार भीष्मके बधके निमित्त उत्पन्न किया है।"

भीष्म बोले, परशुरामने अपने पिता, पितामह आदि पितरोंके वचनको सुनकर यह कहा, कि "मैं युद्धसे कभी भी निवृत्त न होऊंगा" ऐसा व्रत धारण किया है; और पहिले भी युद्धसे कभी निवृत्त नहीं हुआ हूं। पितामहगण! इससे आप लोग गंगातनय भीष्महीको युद्धसे निवृत्त कीजिये; मैं इस युद्धसे किसी प्रकारसे भी निवृत्त न होऊंगा। हे राजन्! अनन्तर वह ऋचिक आदि मुनि लोग नारदके सहित मिलकर मेरे निकट आकर बोले, "हे तात! युद्धमें निवृत्त हो जाओ, इस द्विजोत्तमका सम्मान करो" तब मैंने भी क्षत्रिय-धर्म्मकी प्रतीक्षासे उन सबसे कहा, लोकमें मेरा यह व्रत है, कि मैं युद्धसे कभी पीठ दिखाकर निवृत्त न होऊंगा। मैं लोभ, कृपणता, भय और अर्थ आदि किसी प्रकारसे भी अपने सनातन धर्म्मको नहीं छोड़ सकता हूं; यही मेरा स्थिर निश्चय है, हे राजेन्द्र! अनन्तर नारद आदि सब मुनि और मेरी माता भागीरथी तथा ऋषि लोग रणभूमिमें आये; तौभी मैं उसी प्रकारसे धनुष बाण धारण करके युद्धके निमित्त दृढ़ निश्चयसे खड़ा था। तब वह सब कोई मिलकर भृगुनन्दन परशुरामके निकट जाकर यह वचन बोले, हे भार्गव! ब्राह्मणोंका हृदय अत्यन्त ही कोमल होता है, इससे तुम हो शान्त हो जाओ। हे राम! हे द्विजोत्तम! इस युद्धसे निवृत्त होजाओ। हे भृगुनन्दन! भीष्म तुम्हारा अवध्य और तुम भी भीष्मके अवध्य हो। वह पितर लोग रणभूमिको रोककर सब कोई ऐसे ही वचन कहते कहते परशुरामसे शस्त्र त्याग करवाया। अनन्तर मैंने उन प्रकाशित ग्रहसमूहकी भांति ब्रह्मवादी आठ ऋषियोंको फिर देखा; वह लोग युद्धमें स्थित मुझको प्रीतिपूर्व्वक यह वचन बोले, हे महाबाहो! लोकके हितका कार्य्य करो; विनयपूर्व्वक अपने गुरु परशुरामके निकट जाओ, तब मैंने परशुरामको सुहृद लोगोंके वचनसे निवृत्त होता हुआ देखकर लोगोंके हितके निमित्त अपने सुहृद पुरुषोंके वचनको ग्रहण किया। अनन्तर, शस्त्रोंसे अत्यन्त पीड़ित होकर भी मैंने परशुरामके समीपमें

जाकर उन्हें प्रणाम किया ; महातपस्वी परशुराम भी प्रेमपूर्वक हंसते हुए मुझसे यह वचन बोले हे भीष्म ! इस पृथ्वीके बीच सम्पूर्ण क्षत्रियोंमें भी तुम्हारे समान कोई क्षत्रिय पुरुष विद्यमान नहीं है ; इस युद्धमें तुमने मुझको अत्यन्त ही सन्तुष्ट किया है ; इससे अब गमन करो। मुझसे ऐसा वचन कहकर परशुरामजीने सब महात्माओंके बीच मेरे सम्मुख ही उस कन्याको आवाहन करके दीन वचनसे नीचे कही हुई बातोंको कहने लगे।

१८७ अध्याय समाप्त।

परशुराम बोले, हे भामिनि ! मैंने अपने पुरुषार्थके अनुसार पराक्रमको प्रकाशित करके जो युद्ध किया, उसे सब लोगोंने ही देखा है। मैंने अनेक उत्तम अस्त्र शस्त्र चलाए, तोभी शस्त्रधारिओंमें श्रेष्ठ भीष्मको परास्त न कर सका। मेरी जितनी शक्ति और बल है, उसे प्रकाशित किया ; इससे हे भद्रे ! अब जहां इच्छा हो वहां जाओ। तुम्हारा दूसरा कार्य्य क्या मैं क्या करूंगा ? इससे अब तुम भीष्महीकी शरणमें जाओ ; इसके अतिरिक्त और कहीं भी तुम्हारी गति नहीं है ; देखो मैं अपने परम दिव्य अस्त्रोंको चला कर भी भीष्मको नहीं जीत सका। महातेजस्वी परशुराम ऐसे वचन कह कर लम्बी सांस लेते हुए चुप होगये। अनन्तर अम्बाने उनसे कहा ; भगवान् ! तुम जो कहते हो, वह सब ठीक है; यह उदारबुद्धि भीष्म युद्धमें देवताओंसे भी अजेय है। तुम्हारी जितनी शक्ति और जैसा उत्साह था, तुमने उसके अनुसार ही मेरा कार्य्य किया है, रणभूमिमें अत्यन्त बल, पराक्रम और दिव्य अस्त्रोंको प्रकाशित किया, तौभी भीष्मसे अधिक न होसके, परन्तु हे तपोधन ! मैं इस भीष्मके निकटमें अब किसी प्रकारसे भी न जाऊंगी ; उसी स्थान पर जाऊंगी जहां आप ही उसे परास्त कर सकूंगी। ऐसा वचन कह कर वह कन्या क्रोधसे व्याकुल होके वहांसे चली गई और मेरे बध करनेका सङ्कल्प करके तपस्या करनेका सङ्कल्प किया। अनन्तर भृगुसत्तम परशुरामने उन मुनियोंके सहित विदा होनेके समय उनसे यथा उचित बातचीत करके महेन्द्र पर्व्वत पर चले गये। हे भारत ! मैं रथ पर चढ़के ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन सुनता हुआ हस्तिनापुरमें प्रवेश करके माता सत्यवतीसे सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा, और उन्होंने भी मुझे आनन्दित किया। हे महाराज ! तब मैं अम्बाके वृत्तान्तको जाननेके वास्ते अत्यन्त निपुण बुद्धिमान् पुरुषोंको नियुक्त किया। वह सब दूत मेरे प्रिय कार्य्यमें रत होकर उस कन्याके प्रतिदिनकी गति, वाणी और चेष्टा सुनाने लगे। हे तात ! अम्बा जब तपस्याके निमित्त सङ्कल्प करके बनको गई तब ही मैं व्याकुल स्वभावसे युक्त और चेत-रहित हो गया ; क्योंकि ब्रह्मज्ञ लोगोंसे ही मुझे भय हुआ करता है ; तपस्या करनेवाले ब्रह्मज्ञ लोगोंके अतिरिक्त और कोई क्षत्रिय मुझे युद्धमें नहीं जीत सकता। हे राजन् ! मैंने नारद और व्यासदेवसे भी उस कार्य्यको निवेदन किया, उससे वह लोग मुझसे बोले, हे भीष्म ! तुम काशिराजकी कन्याके विषयमें कुछ भी शोक मत करो ; पुरुषार्थसे कोई पुरुष क्या दैवको अतिक्रम कर सकता है ? हे राजन् ! वह कन्या आश्रममण्डलोंमें प्रवेश करके यमुनाके तीर पर अपना आश्रम बना कर अलौकिक तपस्या करने लगी ; उसने आहारको त्याग दिया कृशित, जटाधारिणी धूल और कीचड़के सङ्ग बहनेवाली सूखी लकड़ीकी भांति स्थिर होकर छः महीने वायु भक्षण करके तपस्या करती रही ; फिर एक वर्ष तक

यमुना जलके आसरे निराहार व्रत धारण किया; फिर केवल वृक्षसे गिरे हुए एक एक सूखे पत्तोंको खाकर एक बर्ष बिताया। वह महाकोप करनेवाली तपस्विनी अपने पांवके अंगूठेके अग्रभागके बलसे खड़ी होकर इसी प्रकारसे बारह वर्ष तपस्या करके स्वर्ग और पृथ्वीको तपाने लगी। जातिके लोगोंने बहुत ही चेष्टाकी; परन्तु किसी प्रकारसे भी उसे निवृत्त न कर सके। अनन्तर अम्बा पुण्यशील महात्मा ब्रह्मवादी तपस्वियोंके आश्रम, भूत सिद्ध और चारणोंसे सेवित वत्स भूमिमें गमन किया; वहांपर पुण्य तीर्थोंमें रात दिन गमन करती हुई; इच्छापूर्व्वक सब स्थानोंमें भ्रमण करने लगी। हे महाराज! वह क्रमसे नन्दाश्रम, उलूक-आश्रम, च्यवनके आश्रम, ब्रह्मस्थान, प्रयाग, देवयजन, देव अरण्य, भागवती, विश्वामित्रके आश्रम, माण्डव्य-आश्रम, दिलीप-आश्रम, रामह्रद, और ऐल मार्गके आश्रममें भ्रमण करने लगी। हे राजेन्द्र! उस काशिराजकी कन्याने अत्यन्त कठिन व्रत अवलम्बन करके उस समय सम्पूर्ण तीर्थोंमें जाकर स्नान किया था। हे कौरव! किसी दिन जलमें खड़ी हुई देखकर मेरी माता गङ्गा-देवीने उससे कहा, हे भद्रे! तुम किस कारणसे इतना क्लेश सह रही हो; वह मुझसे सत्य सत्य कहो। तब वह अनिन्दिता काशीराजकी कन्या हाथ जोड़कर बोली, हे देवी। हे सुन्दर-नेत्रवाली! परशुरामने भीष्मको युद्धमें नहीं जीता; तब और कौन बलवान राजा उस शस्त्रधारी महावीरको जीत सकता है? इससे मैं भीष्मके वधके निमित्त यह महा घार तपस्या कर रही हूं; ऐसा ही मनमें निश्चय करके पृथ्वीमें भ्रमण कर रही हूं। हे देवी! किसी प्रकारसे उस भीष्मका बध कर सकूं, यही मेरे व्रतका परम फल० है। अनन्तर समुद्रमें गमन करनेवाली मेरी माता भागीरथीने उससे कहा, हे भाविनि! तुम कुटिल आचरण कर रही हो; हे सुन्दरी! तुम्हारी वह अभिलाष पूर्ण न होवेगी। हे काशिराजकी कन्या! यदि भीष्मके बधके निमित्त तुम इस प्रकारसे व्रत करोगी, और व्रत करती हुई शरीरको छोड़ोगी; तब टेढ़ी चालसे बहनेवाली नदी रूप होजाओगी। केवल वर्षाकालहीमें तुम्हारा जल रहेगा और दूसरे आठ महीनेतक तुम जल-रहित होओगी। और तुम्हारा तीर्थ निन्दनीय होगा, कोई भी तुमको न जान सकेगा। तुम विकराल ग्राहवती और घोररूपा होकर सब प्राणियोंको भयङ्करी बोध होओगी। हे राजन्! मेरी माता यशस्विनी भागीरथीने हंसते हंसते ऐसे वचन कहकर काशिराजकी कन्याको बिदा किय। अनन्तर वह कन्या फिर व्रत अवलम्बन करके कभी आठ महीने और कभी दश मास तक जल भी नहीं पीती थी। हे कौरव! और सब तीर्थोंमें इधर उधर भ्रमण करके फिर वह वत्स-भूमिमें आई और वहांपर वर्षाकालमें बहनेवाली अनेक ग्राह आदि जल-जन्तुओंसे युक्त टेढ़ी और भय उत्पन्न करनेवाली नदीरूपसे विख्यात हुई। हे राजन्! अम्बा उस तपस्याके बलसे शरीरके आधे भागसे नदी हुई और शेष आधे-भागसे कन्याभी बनीरही।

१८८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर वह सब तपस्वी लोगोंने काशिराज कन्याको तपस्यामें कृत संकल्प देखकर उसे निवारण किया और उसका कौनसा कार्य्य है, इस बातको भी पूछा। तब अम्बा उन तपोवृद्ध ऋषियोंसे बोली, हे तपोधनवृन्द! मैं भीष्मकेहाथसे ग्रहण की जानेसे पति-धर्म्मसे रहित हुई हूं, इससे उसीके वधके निमित्त मेरी यह तपस्या है, स्वर्ग आदि लोकोंके प्राप्त करनेके निमित्त मैं तप नहीं करती हूं। भीष्मको मारकर शान्त

होऊंगी, यही निश्चय है। हे तापसवृन्द! जिसके कारणसे इतना दुःख सह रही हूं, और पति-लोकसे रहित होगई हूं, न मैं स्त्री और नपुंसक हूं, उस गङ्गापुत्र भीष्मको विना युद्धमें मारे अब निवृत्त न होऊंगी। आप लोगोंसे मैंने जो यह वचन कहा है, यही मेरे हृदयका सङ्कल्प है। मैं स्त्रीभावसे दुःख पाकर अब पुरुषत्व प्राप्त करनेका निश्चय करके भीष्मके वध करनेकी इच्छा करती हूं। इससे आप लोग अब मुझको निवारण न कीजिएगा हे भारत! अनन्तर देवोंके देव शूलधारी महादेव उन महर्षियोंके बीच इस तपस्विनीको दर्शन देकर बोले, "तेरी क्या अभिलाष है? वर मांग"। तब उस मनस्विनी काशिराजको कन्याने मेरे वध करनेके निमित्त वरदान मांगा उसका वचन सुनकर महादेव बोले, "अवश्य वध करोगी" यह वचन सुन कर अम्बाने महादेवसे पूछा, कि हे देवोंके देव मैं स्त्री होकर भीष्मको युद्धमें मारूंगी, यह कैसे सम्भव और उत्तम हो सकता है? हे भूतोंके स्वामी उमानाथ! स्त्री-भाव विशेष करके तपस्यासे मेरा मन अत्यन्त ही शान्त होगया है; तुमने भी भीष्मको वध करनेका मुझे वर दिया, इससे हे वृषभध्वज! शान्तनुनन्दन भीष्म जिस प्रकारसे मेरा वध्य होवे; वही कीजिये। मैं उसके सङ्ग युद्धमें जाकर जिस प्रकारसे उसे मार सकूं तुम उस ही उपायका विधान करो।

तब वृषभध्वज महादेव उस कन्यासे बोले, हे भद्रे! मेरी बात कभी मिथ्या न होगी, यह अवश्य ही सत्य होगी। तुम भीष्मको युद्धमें मारोगी, और पुरुषत्वभी प्राप्त करोगी तथा दूसरे शरीरमें गमन करके पूर्व्व जन्मके सम्पूर्ण वृत्तान्तको भी स्मरण करोगी। द्रुपदके कुलमें जन्म लेकर तुम महारथ, शीघ्र शस्त्र चलानेवाले महाबलवान् योद्धा बनोगे। हे कल्याणि! मैंने जो कुछ कहा, वह सब सत्य होगा, तुम कुछ कालके बाद पुरुष हो जाओगी। वृषभध्वज कपाली महादेव ऐसा वचन कह कर तपस्वी ब्राह्मणोंके सम्मुख ही अन्तर्द्धान होगये। अनन्तर अनिन्दिता काशिराजकी कन्या अम्बाने उन महर्षियोंके सम्मुख ही वनमेंसे काठ लाकर यमुनाके समीप एक बड़ी चिता बनाकर उसमें अग्नि लगा दी। हे महाराज! उस अग्निके प्रज्वलित होने पर वह काशिराजकी बड़ी कन्या क्रोधपूर्व्वक "मैं भीष्मके बधके निमित्त इस अग्निमें प्रवेश करती हूं" ऐसा वचन कहकर अग्निमें प्रवेश करके जल गई।

१८६ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे योद्धाओंमें श्रेष्ठ गंगानन्दन पितामह! शिखण्डी पहिले कन्या होकर पीछे किस प्रकारसे पुरुष होगया; उसे वर्णन कीजिये।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! लोकमें विख्यात राजा द्रुपदकी प्यारी रानी पुत्रहीन थी। हे राजेन्द्र उसी समय राजा द्रुपदने मेरे बधके निमित्त निश्चय करके महा घोर तप करके पिनाकधारी महादेवको सन्तुष्ट किया और उनसे यह वचन बोले, "हे भगवन्! मैं भीष्मके बधके निमित्त एक पुत्रकी इच्छा करता हूं; हे शङ्कर! इससे कन्याके अतिरिक्त मेरे एक पुत्र होवे, उनकी यह प्रार्थना सुनकर देवोंके देव महादेव बोले, तुमको स्त्री और पुरुष ऐसा एक पुत्र उत्पन्न होगा; हे राजन्! तुम निवृत्त होजाओ; मैंने जो वचन कहा है, कभी वह झूठ न होगा। राजा द्रुपद महादेवका ऐसा वचन सुनकर नगरमें आकर अपनी भार्य्यासे बोले, हे देवी! मैंने अत्यन्त यत्न तपस्यासे महादेवको प्रसन्न किया है; उन्होंने कहा है, कि तुमको कन्या और पुत्र ऐसा एक सन्तान उत्पन्न होगी; उस वचनको सुनकर मैंने बार बार प्रार्थना

की, परन्तु शङ्करने कहा, यह मेरी बात कभी नहीं पलट सकती। इससे हे भाविनि! उस वचनमें अब कुछ भी रद बदल न होगा, क्योंकि इसी प्रकारकी होतव्यताथी। अनन्तर यशस्विनी द्रुपदराजकी पत्नीने ऋतुमती होकर नियम पूर्व्वक उनके सङ्ग सहवास किया और शास्त्रमें कहे हुए कर्म्मसे यथा समयमें गर्भ धारण किया। महाराज! नारदने मुझसे शिखण्डीका जिस प्रकारसे जन्म-वृत्तान्त कहा था, मैं उसहीको वर्णन करता हूं। हे कुरु-नन्दन! उस सुन्दर नेत्रवाली महादेवीके गर्भ धारण करनेपर राजा द्रुपदने पुत्र स्नेहके कारण सब प्रकारसे भार्य्याके सुखके निमित्त यत्न किया। हे राजन्! द्रुपद पुत्रहीन थे, इससे उनकी भर्य्याने जो कुछ अभिलाष की, वह सब वस्तु देकर उन्होंने उसके मनोरथको पूर्ण किया। अन्तमें उस द्रुपदराजकी प्यारी रानीने एक उत्तम रूपवाली कन्या प्रसव किया, हे राजेन्द्र। द्रुपदराजके पुत्र न रहनेपर उनकी प्यारी स्त्रीने कहा, "मुझे यह पुत्र हुआ है" ऐसीही बात सर्व्वत्र प्रचार कर दी। हे राजन्! अनन्तर राजा द्रुपदने उस छिपी हुई कन्याको पुत्रके समान जानकर, उसका सम्पूर्ण पुत्र-कार्य्य कराया और उनकी रानीने भी पुत्र पुत्र कह-कर सब प्रकारसे यत्न पूर्व्वक उसकी रक्षा की। नगरके बीच एकमात्र राजा द्रुपदको छोड़कर और कोई पुरुष भी उस कन्याको कन्या नहीं जानता था। हे राजन्! राजा द्रुपदने अविनाशी महादेवके वचनपर श्रद्धा करके उस कन्याको छिपाकर पुत्र कहके प्रचार किया और पुत्रहीके समान सब जाति-कर्म्म संस्कार कराया। लोकमें इस कन्याको सब शिखण्डी कहके जानते है; परन्तु मैं ही अकेला दूतों तथा नारदके वचन, देव-वाक्य, और अम्बाकी तपस्यासे उसके स्वरूपको जानता हूं।"

१९० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! राजा द्रुपदने कन्याको लिखना और शिल्प आदि सब कर्म्मों-को सिखानेका यत्न किया। शिखण्डी बाण और अस्त्रशिक्षामें द्रोणाचार्य्यका शिष्य हुआ। उसकी प्यारी माताने पुत्रकी भांति उसके विवाहके निमित्त अनुरोध किया। हे महा-राज! उस समय द्रुपदराज कन्याको यौवनवती देखकर भार्य्याके सहित चिन्ता करने लगे। द्रुपद बोले, देखो मेरा शोक बढ़ानेवाली इस कन्याके यौवनका समय प्राप्त हुआ है; मैंने शूलधारी महादेवके वचनसे इसे छिपाकर रक्खा है। भार्य्या बोली, महाराज! वह वचन कभी मिथ्या न होगी, तीनों लोकके कर्त्ता होकर महादेव किस प्रकारसे झूठ बोलेंगे? हे राजन्! यदि मेरे वचनमें आपकी रुचि होवे, तो मैं जो वचन कहती हूं, उसको सुनिये और सुनकर अपने मतके अनुसार कार्य्य कीजिये। यत्नके सहित विधिपूर्व्वक किसी कन्यासे इसका विवाह कर्म्म कीजिये; शिवका वचन अवश्य ही सत्य होगा।

अनन्तर वह दोनों स्त्री-पुरुष उस कार्य्यका निश्चय करके दशार्णाधिपतिकी कन्याको अपनी कन्याके निमित्त प्रार्थना की। राजसिंह राजा द्रुपदने कुलके अनुसार सब राजाओंके वृत्तान्तको सुनकर दशार्णराजकी कन्याको ही शिखण्डीके निमित्त वरण किया। हिरण्यवर्म्मा नामसे विख्यात दशार्णराजने भी अपनी कन्या शिख-ण्डीके निमित्त प्रदान की। वह महातेजस्वी हिरण्यवर्म्मा दशार्ण देशके बड़े पराक्रमी अनेक सेनाओंसे युक्त बलवान् राजा थे। हे राज-सत्तम! विवाह कर्म्मके समाप्त होनेपर वह कन्या और शिखण्डिनी दोनों ही धीरे धीरे सम्पूर्ण रूपसे यौवनवती हुई। शिखण्डीने दार-परिग्रह करके काम्पिल्य नगरमें फिर आग-मन किया। कुछ दिनोंके अनन्तर उस कन्याने शिखण्डीको स्त्री जान लिया। हिरण्यवर्म्माकी

कन्याने शिखण्डीको शिखण्डिनो जानकर लज्जापूर्व्वक दुःखित चित्तसे दासी और सखियोंके निकटमें पाञ्चालराजकी कन्या शिखण्डिनीके स्वरूपका वृत्तान्त कह दिया। हे राज शार्दूल! तब दशार्णराजकी दासियोंने अत्यन्त दुःखित होकर अपने स्वामीके निकटमें दूतियोंको भेजा। उन दूतियोंने भी दशार्णराजके समीपमें इस प्रवञ्चना (ठगपना) का वृत्तान्त ठीक ठीक वर्णन किया और राजा भी सुनकर क्रुद्ध हुए इधर शिखण्डिनी भी नारी भावको छिपाती हुई प्रसन्नता पूर्व्वक राजकुलमें भ्रमण करने लगी।

हे राजेन्द्र! राजा हिरण्यवर्म्मा कुछ दिनोंके अनन्तर इस वृत्तान्तको सुन कर क्रोधसे पीड़ित हुए, अनन्तर अत्यन्त कुपित हो उन्होंने राजा द्रुपदके समीप दूत भेजा। हिरण्यवर्म्माका दूत द्रुपदके समीपमें जाकर निर्ज्जन स्थानमें यह वचन बोला, हे राजन्! तुम्हारी प्रवञ्चना से दशार्ण-राजने कुपित होकर यह कहा है, हे राजेन्द्र! तुमने जो मोहमें पड़कर अपनी कन्याके निमित्त मेरी कन्या मांगी, वह निश्चय ही तुम्हारी दुष्ट मन्त्रणाका कार्य्य है। तुम मेरा अपमान करते हो, यह ठीक है; परन्तु रे नीचबुद्धिवाले! इससे अब तू प्रतारणाके फलको भोग करेगा। मैं तुमको अब दुष्ट मित्र और बन्धुबान्धवोंके सहित मारूंगा; खड़े रहो।

१९१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! दूतके मुखसे ऐसा वचन सुन कर पकड़े हुए चारकी भांति राजा द्रुपदके मुखसे कुछ भी वचन न निकला वह धीमें स्वरसे बोलनेवाले दूतोंसे यह वचन बोले, "यह ठीक नहीं है" इस प्रकारसे सन्देश भेज कर वह सम्बन्धीको प्रसन्न करनेके निमित्त अत्यन्त यत्न करने लगे; परन्तु राजा हिरण्यवर्म्माने फिर अनुसन्धान करके यह जान लिया, कि शिखण्डी द्रुपदराजकी कन्या ही है; इससे शीघ्र ही उन्होंने युद्धके निमित्त यात्रा की। अनन्तर उन्होंने दासियोंके वचनके अनुसार अपनी कन्याके इस प्रकारसे ठगे जानेका वृत्तान्त महातेजस्वी मित्रोंके निकट वर्णन किया। हे भारत! उस राजसत्तम हिरण्यवर्म्माने बहुत बड़ा बल संग्रह करके द्रुपदके विरुद्ध युद्ध करनेके निमित्त इच्छा की; और मन्त्रियोंसे मिल कर इस विषयमें विचार करने लगे। उसमें उन महात्मा राजाओंका यह निश्चय हुआ, कि शिखण्डी कन्या है,—यदि यह वचन सत्य होवे, तो हम लोग पाञ्चाल-राजको बांधकर इस स्थान पर ले आवेंगे और दूसरे किसी भूपालको पाञ्चाल देशका राजा बनाके शिखण्डीके सहित द्रुपदका बध करेंगे। तब हिरण्यवर्म्मा राजाने ऐसा ही निश्चय करके "तुम्हारा बध करूंगा, खड़े रहो! ऐसा कहके फिर राजा द्रुपदके समीप दूत भेजा।

भीष्म बोले, राजा द्रुपद स्वभावसे ही डरपोक थे, तिस पर भी उस पापकर्म्मके कारण अत्यन्त ही भयभीत हुए। वह शोकित होकर हिरण्यवर्म्माके निकट दूत भेज कर भार्य्याके सहित निर्ज्जन स्थानमें बैठ कर शोक और भय-पूरित चित्तसे शिखण्डिनीकी माता प्यारी रानीसे यह वचन बोले, हे सुश्रोणि! हम लोगोंके वैवाहिक सम्बन्धी महाबली हिरण्यवर्म्मा राजा सेना संग्रह करके कुपित होकर मुझसे लड़नेको चले आते हैं। इस समय इस कन्याके विषयमें मैं क्या करूंगा, कुछ समझ नहीं सकता हूं। मैंने सुना है, कि तुम्हारे पुत्र शिखण्डीको लोग कन्या कहके सन्देह करते हैं; इसी कारणसे हिरण्यवर्म्मा "मैं ठगा गया हूं" यह विचारकर यत्नपूर्व्वक मित्र, बल और अनुचरोंके सङ्ग मिलकर मेरे

नाश करनेकी इच्छा करता है। हे भद्रे ? इससे अब इस विषयमें सत्य वा मिथ्या जो कुछ हो, वह तुम मुझसे वर्णन करो। तुम्हारा वचन सुनकर मैं उसके अनुसार ही कार्य्यका विधान करूंगा। हे वरवर्णिनि! देखो मुझे भी संशय प्राप्त हुआ है और बाला शिखण्डिनी और तुम भी महाक्लेशसे ग्रस्त हुई हो; इससे तुमसे पूछता हूं, कि तुम सबको इस विपदसे छुड़ानेके निमित्त यथार्थ तत्व वर्णन करो। हे सुन्दरि! मैं तुम्हारे वचनको सुनकर वैसे ही कार्य्यका अनुष्ठान करूंगा। हे वरारोहे! यद्यपि तुमने मुझे पुत्रधर्मसे वञ्चित किया है, तौभी शिखण्डी तथा अपने विषयमें कुछ भय मत करो, मैं कृपा करके तुम लोगोंके विषय पूर्ण रीतिसे उपायका विधान करूंगा। परन्तु हे सुन्दरि! राजा दशार्णराजके सङ्ग मैंने प्रवञ्चना की है, उस विषयमें किस प्रकारसे हित साधनके निमित्त कार्य्यका विधान करूं; उसे तुम वर्णन करो।

पाञ्चालराज द्रुपदने जान बूझकर भी केवल दूसरेके निकट अपनी निर्दोषिता प्रकट करनेके निमित्त प्रकाशित भावसे अपनी भार्य्यासे पूछा। और उसने भी नीचे कहे हुए वचनोंसे उत्तर दिया।

१९२ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ! अनन्तर शिखण्डिनीकी माताने अपने पति राजा द्रुपदसे कन्या शिखण्डिनीका यथार्थ वृत्तान्त वर्णन किया; उसने कहा, महाराज! मेरे पुत्र न रहनेसे सौत लोगोंके भयसे युक्त होकर मैंने इस कन्याके उत्पन्न होनेपर पुत्र कहके तुम्हारे समीप वर्णन किया था; तुमने भी मेरी प्रीतिके निमित्त उस वचनको पोषकता की थी; और कन्याका पुत्रके समान जातिकर्म्म संस्कार कराया। फिर तुमने दशार्णराजकी कन्याके सङ्ग इसका विवाह भी किया;—और मैंने भी वचनसे उसके निमित्त परिपोषकता की थी। हे राजन्! "कन्या उत्पन्न होकर पुरुष हो जावेगी" महादेवके वचनोंका ऐसा अर्थ जानकर ही मैंने इस विषयमें उपेक्षा की थी।

हे भारत! यह वचन सुनकर यज्ञसेन द्रुपदराज मन्त्रियोंसे सम्पूर्ण विषय वर्णन करके प्रजाके रक्षाके निमित्त यथा उचित विचार करने लगे। उन्होंने पूरी रीतिसे प्रतारणा करके भी "मैंने यथार्थ सम्बन्ध ही किया है" ऐसा ही निश्चय करके कार्य्यके विषयमें विचार करने लगे। हे राजेन्द्र! उनका नगर स्वभाविक ही रक्षित था; उस पर भी आपदकालके उपस्थित होनेपर उन्होंने सब भांतिसे नगरको अलङ्कृत करके उसकी दृढ़ रक्षाका विधान किया। हे भरतर्षभ! दशार्णपतिके सङ्ग विरोध होनेके निमित्त पाञ्चालराज भार्य्याके सहित अत्यन्त ही पीड़ित हुए। वैवाहिक सम्बन्धीके सङ्ग जिस प्रकारसे मेरा यह महाविग्रह उपस्थित न होवे, उसहीकी चिन्ता करके उस समयमें वह देवताओंकी पूजा करने लगे। तब राजा द्रुपदकी प्यारी रानी उनको इस प्रकारसे देव-परायण और पूजामें तत्पर देखकर यह वचन बोली, हे महाराज! देवताओंकी आराधना सदा ही कल्याण करनेवाली है, ऐसा साधु-पुरुषोंका मत है। जो पुरुष दुःखरूपी समुद्रमें डूब रहा है; उसके निमित्त क्या कहना है? इससे तुम दशार्णराजके शान्त होनेके निमित्त देवताओंकी आराधना करो, ब्राह्मणोंका सम्मान तथा बहुतसी दक्षिणा प्रदान करके देवताओंकी पूजा और अग्निमें होम करो। हे स्वामी! जिससे विना युद्धके किये ही शान्ति होवे, तुम मन ही मन उसहीका विचार करो। देवताओंको सन्तुष्ट करनेसे सब कुछ हो सकता है।

हे प्रजानाथ ! नगरकी रक्षाके निमित्त तुमने मन्त्रियोंके सङ्ग जैसा विचार किया है; उसका भी पूर्ण रीतिसे अनुष्ठान करो। क्योंकि पुरुषार्थ युक्त होनेहीसे दैवी प्रारब्ध पूर्ण रूपसे सिद्ध होता है; दोनोंके परस्पर विरोध होनेसे कार्य्य सिद्ध नहीं होता। इससे हे राजेन्द्र ! मन्त्रियोंके सङ्ग मिलकर नगरकी रक्षाका उपाय करके इच्छानुसार देवताओंकी आराधना कीजिये। उस समयमें वह लोग शोकसे युक्त होकर ऐसी ही बातचीत करते थे; यह देखकर तपस्विनी कन्या शिखण्डिनी अत्यन्त लज्जित हुई। अनन्तर उसने जब जाना कि ये लोग "मेरे ही निमित्त दुःखित हुए हैं," तब चिन्ता करके अपना प्राण नाश करनेका सङ्कल्प किया। हे राजन् ! शिखण्डिनी ऐसा निश्चय करके अत्यन्त दुःखित होकर घर त्याग-कर निर्जन घने वनमें चली गई। यह वन स्थूणाकर्ण नामके एक महाबलवान् यक्षसे रक्षित था; उसके भयसे मनुष्य मात्र वहां नहीं जाते थे। वहांपर स्थूणाकर्णका एक ऊंचा मन्दिर था और तोरणयुक्त चूना और स्वच्छ मृत्तिकासे पोता हुआ शीतल मन्द सुगन्ध वायुसे युक्त उसका अत्यन्त सुन्दर निवास-स्थान था। द्रुपदपुत्री शिखण्डिनी उसी स्थानमें प्रवेश करके आहार त्यागकर अपना शरीर सुखाने लगी; तब स्थूणाकर्ण दया करके उसे दर्शन देकर बोला, कि किस कारणसे तुम ऐसा व्रत करती हो? मुझसे कहो; मैं शीघ्र ही उसे पूर्ण करूंगा। तब शिखण्डिनी बार बार उससे कहने लगी "वह असाध्य कार्य्य है, तुम उससे पूर्ण न कर सकोगे।" उसकी बात सुनकर यक्ष बोला;—मैं अवश्य पूर्ण करूंगा। हे राजपुत्री ! मैं कुबेरका सेवक हूं, इससे वर दान करनेमें भी समर्थ हूं, तुम्हारी जैसी इच्छा होवे, वह मुझसे कहो; मैं न देने योग्य वस्तु होने पर भी तुमको अवश्य दूंगा। हे भारत ! तब शिखण्डीने उस यक्षोंमें प्रधान स्थूणाकर्णके समीप आदिसे अन्ततक सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया। शिखण्डीने कहा, हे यक्ष ! मेरे पुत्रहीन पिता शीघ्र ही मारे जावेंगे, क्योंकि दशार्णराजने क्रोधमें पूर्ण होकर उनके ऊपर युद्धके निमित्त चढ़ाई करनेका उद्योग किया है; वह हिरण्यवर्म्मा महाबल और उत्साहसे युक्त है; हे यक्ष ! इससे तुम मेरी और मेरे माता पिताकी रक्षा करो। हे पापरहित ! तुमने मेरे दुःखको दूर करनेकी प्रतिज्ञा की है; इससे तुम्हारी कृपासे जिस प्रकारसे मैं पुरुष होसकूं;—उसी उपायको करो। हे महायक्ष ! जब तक राजा हिरण्यवर्म्मा मेरे नगरमें नहीं आता है, उतने ही समयके भीतर मुझको ऐसा वर प्रदान करो।

१९३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भरतर्षभ ! अनन्तर वह यक्ष शिखण्डीके वचन सुनकर दैवी संयोगके वशमें होकर मन ही मन चिन्ता करके बोला हे भद्रे ! मैं अवश्य ही तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण करूंगा, परन्तु जिस प्रकारका नियम करता हूं, उसको तुम सुनो। कुछ समयके निमित्त मैं अपना यह पुरुषचिह्न तुमको देता हूं; फिर निश्चित समयपर तुम्हें मेरे निकटमें आना पड़ेगा, तुम मुझसे सत्य वचन कहो, मैं सङ्कल्प सिद्ध कामचारी खेचर हूं; जो इच्छा करूं, वही कर सकता हूं; इससे तुम मेरे प्रसादसे नगरको और बन्धुबान्धवोंको सम्पूर्ण रूपसे परित्राण करो। हे राजपुत्री ! मैं तुम्हारा यह स्त्री चिह्न धारण करूंगा; तुम मेरे निकट आनेके निमित्त सत्य प्रतिज्ञा करो, मैं अवश्य ही तुम्हारा प्रिय कार्य्य साधन करूंगा। हे कौरव ! यक्षने जो

यह वचन कहा; बस मेरे दुःखके निमित्त वही छोड़ चारा था, जो हो, शिखण्डीने यह वचन सुनकर कहा, हे भगवन्! मैं तुम्हारा पुरुष-चिह्न फिर प्रदान करूंगी। हे यक्ष! तुम थोड़े समयके निमित्त स्त्रीभाव धारण करो। दशार्णराज हिरण्यवर्म्माके लौट जानेपर मैं कन्या हो जाऊंगी और तुम भी पुरुष बन जाओगे।

भीष्म बोले, हे राजन्! ऐसा कह कर उन दोनोंने शपथ पूर्व्वक प्रतिज्ञा की और आपसमें लिङ्गको अदल बदल कर लिया। स्थूणाकर्णने स्त्रीलिङ्ग धारण किया और शिखण्डीने उस प्रकाशमान यक्षरूपको प्राप्त होकर प्रसन्न चित्तसे नगरमें प्रवेश करके पिताके निकट जाकर जो कुछ वृत्तान्त हुआ था, सब वर्णन किया तब राजा द्रुपद उसका वह वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त हर्षित हुए और भार्य्याके सहित महादेवजीका वचन स्मरण किया। अनन्तर उन्होंने दशार्णराजके निकट यह सम्वाद भेज दिया, कि मेरा यह पुत्र यथार्थमें पुरुष ही है तुम मेरे वचनका विश्वास करो। उस समय राजा हिरण्यवर्म्माने भी दुःख और शोकसे युक्त होकर सहसा पाञ्चाल राजके विरुद्ध गमन किया। अनन्तर दशार्णराज हिरण्य-वर्म्माने काम्पिल्य नगरके निकट जाकर शास्त्र जाननेवाले एक ब्राह्मणको अपना दूत बना-कर द्रुपदके समीपमें भेजा; हिरण्यवर्म्माने उस दूतसे कहा हे दूत! तुम मेरे वचनसे उस अधम राजा द्रुपदसे यह कहना कि रे नीचबुद्धि! तूने जो अपनी कन्याके सङ्ग मेरी कन्याका विवाह किया है, उस गर्व्वका फल शीघ्र भोग करेगा; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

हे राजसत्तम! उनका यह वचन सुनकर वह पुरोहित-ब्राह्मण दशार्णराजका दूत होकर द्रुपद राजके नगरकी ओर गमन किया और शीघ्र ही राजा द्रुपदकी नगरीमें पहुंचे, तब पाञ्चाल-राज द्रुपदने शिखण्डीके सहित गौ और अर्घ आदि यथा उचित सत्कार प्रदान किया; परन्तु उसको ग्रहण न करके वीरवर राजा हिरण्य-वर्म्माके कहे हुए वचनोंका अनुवाद करके कहने लगे, रे नृपाधम! तूने जो कन्याके सङ्ग मेरी कन्याका विवाह करके मुझे ठगा है, उस पाप-कर्म्मका फल शीघ्र पावेगा। नीच-बुद्धिवाले! रणभूमिमें आकर मेरे सङ्ग युद्ध कर। मैं तुझे सेवक, पुत्र और बन्धु-बान्धवोंके सहित शीघ्र ही नाशकर दूंगा। हे भरतश्रेष्ठ! राजा द्रुपद मन्त्रियोंके बीचमें दशार्ण-राजके ऐसे तिरस्कार-युक्त वचन सुनकर प्रीति और विनय पूर्व्वक यह वचन बोले, हे ब्राह्मण! वैवाहिक सम्बन्धी हिरण्यवर्म्माके वचनके अनु-सार तुमने मुझसे जो कुछ कहा है, मेरा दूत राजाके समीप जाकर उसका यथार्थ उत्तर देगा। अनन्तर द्रुपदने भी हिरण्यवर्म्माके निकट एक वेद जाननेवाले ब्राह्मणको दूत बनाकर भेजा। वह ब्राह्मण दशार्ण-राज हिरण्य-वर्म्माके निकट जाकर राजा द्रुपदने जो कुछ कहा था, उन्हीं वचनोंको राजा हिरण्यवर्म्मासे कहने लगा, आप साक्षी आदिसे परीक्षा कीजिये, मेरा यह पुत्र यथार्थमें कुमार ही है, तुमसे न जाने किसने मिथ्या वचन कहा था; उन वचनों पर विश्वास करना उचित नहीं है। अनन्तर राजा हिरण्यवर्म्माने द्रुपदके उस वचनको सुनकर हर्ष-विषादसे युक्त हो, शिखण्डी स्त्री है, वा पुरुष, इस बातको जान-नेके निमित्त अत्यन्त सुन्दरी उत्तम बाराङ्गना-ओंको भेजा। उन्होंने भी यथार्थ वृत्तान्त जान कर शिखण्डी अत्यन्त उत्तम पुरुष है, यह सम्पूर्ण समाचार दशार्णराज हिरण्यवर्म्माके समीप जाकर वर्णन किया। तब वह राजा साक्षियोंके वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपने सम्बन्धी द्रुपदके सङ्ग मिल कर आनन्द पूर्व्वक एकत्र सहवास किया, हे राजन्!

राजा हिरण्यवर्म्माने अत्यन्त आनन्दित होके शिखण्डीको बहुतसा धन, हाथी, घोड़े, गजआदि वस्तु प्रदान किया और अन्तमें पूजित होकर अपनी कन्याकी निन्दा करके निज नगरको गये। हे राजन्! हिरण्यवर्म्माको क्रोध रहित और सन्तुष्ट होकर निज देशको और लौटता हुआ देखकर शिखण्डिनी अत्यन्त ही प्रसन्न हुई। कुछ समयके अनन्तर धनके स्वामी यक्षोंके राजा कुबेर-लोकमें भ्रमण करते हुए स्थूणाकर्ण्य भवनके समीप आये; उन्होंने स्थूणाकर्णके मन्दिर पर खड़े होकर देखा, कि वह बहुत उत्तम निवास स्थान है। विचित्र माला और चन्द्रमाके समान प्रकाशित है; अनेक सुगन्धित वस्तुओं और ध्वजा पताकासे युक्त, मांसआदि सर्व खाद्य की सामग्रियोंसे पूरित था। यक्षराज-कुबेरने सुन्दर मणि रत्न और सुवर्णसे पूर्ण नाना पुष्प और सुगन्धित वस्तुओंसे युक्त उस सुन्दर भवनको देखकर अपने सेवक यक्षोंसे कहा हे अत्यन्त पराक्रमी यक्ष लोग! स्थूणा-कर्णके इस मन्दिरका मैं खूब ही अलङ्कृत देखता हूं, परन्तु वह मन्दबुद्धि अभीतक मेरे समीप क्यों नहीं आया? वह दुष्ट जब जान बूझके भी मेरे निकट नहीं आता है; तब उसके ऊपर महादण्डका विधान करना ही उत्तम बोध होता है। यक्ष लोग बोले, हे राजन्! द्रुपद-राजके शिखण्डिनी नामकी एक कन्या उत्पन्न हुई थी, स्थूणाकर्णने किसी कारणके उप-लक्षमें अपना पुरुष-लक्षण उसे अर्पण किया है और स्वयं स्त्री-चिह्न ग्रहण करके स्त्री होकर घरमें बैठा है। इससे स्त्री-भावसे युक्त होनेके कारन लज्जासे आपके समीप नहीं आता है। अब आपका इस विषयमें जो करना हो, वह कीजिये; विमान यहीं हो रहे। यह वचन सुनकर यक्षोंके स्वामी कुबेर बार बार कहने लगे, स्थूणाकर्णको शीघ्र यहां पर लाओ. मैं यथा उचितसे दण्ड दूंगा। हे राजन्! वह स्त्रीरूपधारी स्थूणा... आज्ञा सुनकर उनके समीप आकर ल... खड़ा हुआ। तब धनके स्वामी यक्षराज ... अत्यन्त क्रुद्ध होकर बोले, "हे यक्षवृन्द! ध... पापी इसी प्रकारसे स्त्री ही बना रहे" ऐसा कहके उसे शाप दिया। फिर बोले, रे पापी! तूने यक्षोंकी अवमानना करके शिखण्डीको अपना पुरुष लक्षण अर्पण किया और उसका स्त्रीचिह्न तूने धारण किया है; इससे रे पापी! जो तूने ऐसा अयुक्त कर्म्मका अनुष्ठान किया है; इसी निमित्त आजसे तू स्त्री ही रहेगा। हे तात! अनन्तर यक्ष लोग "शापसे मुक्त कीजिये" बार बार ऐसा वचन कहकर स्थूणाकर्णके निमित्त कुबेरसे प्रार्थना करने लगे। तब महात्मा यक्षराज कुबेर शापसे मुक्त करनेके निमित्त अभिलाषी होकर सेवकोंसे यह वचन बोले, हे यक्षवृन्द! शिखण्डीके मरने पर स्थूणाकर्ण फिर अपने स्वरूपको पावेगा; इससे यह महात्मा यक्ष धीरज धारण करे। ऐसा वचन कह कर भगवान् कुबेर पूजित होकर सेवकोंके सहित अपने स्थान पर गये और स्थूणाकर्ण शाप ग्रस्त होकर वहांपर निवास करने लगा।

अनन्तर शिखण्डीने यथा समयमें उस यक्षके निकट गमन किया और उसके सम्मुख जाकर यह वचन कहा है भगवन्! मैं आया हूं; तब स्थूणाकर्ण "मैं प्रसन्न हुआ" बार बार यही वचन कहने लगा। हे भारत! वह यक्ष राज-पुत्र शिखण्डीको सरलभावसे आया हुआ देखकर जो कुछ वृत्तान्त हुआ था, सब वर्णन किया। वह बोला, हे राजपुत्र! मैं तुम्हारे निमित्त कुबेरसे शाप पाचुका हूं, अब तुम जाओ इच्छानुसार सुखपूर्वक लोकमें आनन्द करो; तुम्हारा यहांपर आना और यक्षराज कुबेरका दर्शन दोनों होको मैं पूर्व जन्मकी दैवी घटना समझता हूं; किसी प्रकारसे भी

... करनेको किसीको भी सामर्थ्य ...

...ष्म बोले, हे भारत! शिखण्डीने स्थूणा...र्णाका वचन सुनकर अत्यन्त हर्षित हो, नगरमें लौटकर महामूल्य अनेक सुगन्धित माला तथा धनसे ब्राह्मण, देवता गऊ वृक्ष आदिकी पूजा की। हे भारत! राजा द्रुपद निज पुत्र शिखण्डी और बन्धु-बान्धवोंके सहित बहुत ही आनन्दित हुए। अनन्तर उन्होंने स्त्रीसे पुरुष हुए पुत्रको धनुष विद्या सिखानेके निमित्त द्रोणाचार्य्यके हाथमें समर्पण किया। हे महाराज! धृष्टद्युम्न और शिखण्डीने तुम लोगोंके सङ्ग चारों पादसे युक्त धनुषविद्या सीखी है। हे तात! मैंने द्रुपदके यहां जो जड़ अन्धे और बधिर आकारके सब गुप्त चरोंको नियुक्त किया था उन्हीं लोगोंने मुझे यह यथार्थ वृत्तान्त सुनाया था। हे पुरुष श्रेष्ठ! द्रुपदपुत्र रथ सत्तम शिखण्डी इसी प्रकारसे स्त्री होकर फिर पुरुष हुआ है। अम्बा नामकी काशिराजकी बड़ी कन्या राजा द्रुपदके कुलमें जन्म लेकर शिखण्डी हुई है। हे भरतर्षभ! हाथमें धनुष लेकर युद्धके निमित्त शिखण्डीके सम्मुख उपस्थित होने पर भी मैं उसकी ओर क्षणमात्र न देखूंगा और न उसके ऊपर प्रहार ही करूंगा। पृथ्वीके बीच मेरा यह सदासे व्रत प्रसिद्ध है, कि मैं स्त्री, अथवा स्त्री-पूर्व्वक स्त्री स्वरूप वा स्त्रीनामधारी पुरुषके ऊपर शस्त्र नहीं चलाता हूं। हे कौरवनन्दन! इससे मैं इस ही कारणसे शिखण्डीका बध नहीं करूंगा। हे तात! मैंने इस शिखण्डीके जन्म-वृत्तान्तको जान लिया है, इससे युद्धमें आततायी होनेपर भी उसका बध न करूंगा। भीष्म यदि स्त्री हत्या करे, तो अवश्य ही साधु पुरुषोंमें निन्दनीय होगा; इससे मैं उसे युद्धमें सम्मुख खड़ा हुआ देख करके भी न मारूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले; तब राजा दुर्य्योधन यह वचन सुनकर एक मुहूर्त्त भर चिन्ता करके भीष्मके पक्षमें इसे उत्तम बोध किया।

१९४ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे राजन्! रातके बीतने पर तुम्हारे पुत्रोंने फिर सेनाके बीचमें भीष्म पितामहसे पूछा, हे गङ्गानन्दन! युधिष्ठिरकी यह अनेक पैदल सेना, हाथी घोड़ोंसे युक्त, महारथ योद्धा धृष्टद्युम्न, भीम, अर्ज्जुन आदि धनुर्धारी महाबलसे युक्त लोकपालके समान् महारथ वीरोंसे रक्षित; अत्यन्त बलवान, निवारण न होने योग्य, महासमुद्रके समान देवताओंसे भी क्षोभ न जीतने योग्य,—यह जो अपार सेनासागर युद्धके निमित्त तैयार है, तुम कितने समयमें उसका नाश कर सकते हो? महा धनुर्धारी आचार्य्य महाबलवान् कृपाचार्य्य, युद्धमें प्रशंसित कर्ण और द्विजसत्तम अश्वत्थामा;—ये लोग हो कितने दिनोंमें शत्रु-सेनाका नाश कर सकते हैं? क्योंकि मेरी सेनामें आप लोग सब ही दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाले हैं। हे महाबाहो! मैं इसे जाननेकी इच्छा करता हूं; यह परम कुतूहल मेरे हृदयमें उत्पन्न हुआ है, इससे आप लोग इस विषयको वर्णन कीजिये।

भीष्म बोले, हे कुरुश्रेष्ठ! तुम जो इस समय शत्रुओंके बलाबलको जाननेकी इच्छा करते हो, यह तुम्हारे योग्य ही प्रश्न है। हे महाबाहो! युद्धमें मेरी जितनी शक्ति, शस्त्रका पराक्रम, बाहुबल हो सकता है, उसे तुम सुनो। हे राजन्! युद्धधर्मका यही सिद्धान्त है, कि सधारण लोगोंके सङ्ग सरल युद्ध और मायावीरके सङ्ग माया-युद्ध ही करना उचित है। हे महाभाग! मैं प्रतिदिन दश हजार योद्धा और एक हजार रथी इस प्रकारसे पाण्डवोंकी सेनाका भाग कल्पित करके नाश कर सकता हूं। हे भारत! मैं सावधान और

सदा उद्यमशील होकर इसी प्रकारसे अंश और समयके अनुसार उस महा सेनाके नाश करनेमें समर्थ हूं। अथवा युद्धमें स्थित होकर शतघातो तथा सहस्र पुरुषोंके मारनेवाले शस्त्रोंको यदि चलाऊं तो एक महीनेमें पाण्डवोंको सम्पूर्ण सेनाका नाश कर सकता हूं।

सञ्जय बोले, हे राजेन्द्र! राजा दुर्य्योधनने भीष्मको वचन सुनकर फिर भारद्वाज-श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्यसे भी यह प्रश्न किया, कि हे गुरुदेव! तुम कितने दिनोंमें युधिष्ठिरकी सेनाका नाश कर सकते हो? तब द्रोणाचार्य्य हंसकर उनसे यह वचन बोले, हे महाबाहो! मैं अब वृद्ध होगया हूं इससे मेरी चेष्टा और तेज भी कम होगया है; तौभी मुझे बोध होता है, कि शान्तनुपुत्र भीष्मकी भांति मैंभी एक महीनेमें अपने शस्त्रोंकी अग्निसे पाण्डवोंकी सेना भस्म कर सकता हूं; यही मेरी परम शक्ति तथा परम बल है। अनन्तर कृपाचार्य्यने दो महीनेमें, अश्वत्थामा दश रात और महाअस्त्रोंके जाननेवाले कर्णने पांच दिनमें पाण्डवोंके बलके नाश करनेकी प्रतिज्ञा की। सूतपुत्र कर्णकी वचन सुनकर गङ्गानन्दन भीष्म ऊंचे-स्वरसे हंसने लगे और यह वचन बोले, हे राधेय! तुम जबतक संग्राममें शङ्ख और शरासनधारी कृष्णके सहित रथपर चढ़े हुए युद्धमें अर्जुनके सम्मुख नहीं पहुंचते हो तभीतक ऐसा समझते हो, ऐसा क्या तुम अपनी इच्छाके अनुसार इससे भी अधिक कह सकते हो।

१९५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतश्रेष्ठ! युधिष्ठिर यह वृत्तान्त सुनकर सब भाइयोंको निर्जन स्थानमें बुलाकर उनसे यह वचन बोले, हे भ्रातृगण! मैंने जो दुर्य्योधनकी सेनामें सब अपने चारोंको नियुक्त किया था, उन लोगोंने आज प्रातःकाल मुझे [illegible] दिया है; कि दुर्य्योधनने महाव्रत [illegible] भीष्मसे पूछा था, "आप लोग कितने [illegible] पाण्डवोंकी सेनाका नाश कर सकेंगे?" उ[illegible] बातको सुनकर भीष्मने उस नीचबुद्धिसे कहा है "एक महीनेमें" और द्रोणाचार्य्यने भी उतने ही समयमें मेरी सेनाके नाश करनेकी प्रतिज्ञा की है। मैंने सुना है, कृपाचार्य्य दो-मास और महाअस्त्रोंके जाननेवाले अश्वत्थामाने दश रात्रिमें मेरी सेनाको नष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की है दिव्यअस्त्रोंके जाननेवाले कर्णने कौरवोंके बीच पूछे जानेपर पांच दिनके बीच मेरी सेनाके नाश करनेकी प्रतिज्ञा की है। हे अर्जुन! इससे मैं भी तुम्हारा वचन सुननेकी इच्छा करता हूं; हे फाल्गुन! तुम कितने समयमें शत्रुओंकी सेनाका संहार कर सकते हो? अर्जुन युधिष्ठिरका यह वचन सुन कृष्णके मुंहकी ओर देखकर यह वचन बोले, महाराज! ये लोग सब ही महात्मा कृतास्त्र और महावीर योद्धा हैं, इससे अवश्य ही तुम्हारी सेनाका नाश कर सकते हैं; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। परन्तु आप अपने मनसे यह दुःख दूर कीजिये; मैं सत्य कहता हूं श्रीकृष्णकी सहायतासे एक-रथसे निमेष मात्रमें मैं भूत, वर्त्तमान, भविष्य स्थावर, जङ्गमात्मक सम्पूर्ण प्राणियों, यहांतक कि देवताओंके सहित तीनों लोकका भी संहार कर सकता हूं। किरातीय द्वन्द्व-युद्धमें भगवान् महादेवने मुझे जो यह अत्यन्त घोर महाअस्त्र प्रदान किया था, वह मेरे निकट विद्यमान है। हे पुरुषसिंह! प्रलयकालके समय सब प्राणियोंके संहारके निमित्त भगवान् रुद्र इस महाअस्त्रको चलाते हैं। वही यह महाअस्त्र मेरे समीपमें वर्त्तमान हैं; सूतपत्र उसे क्या जानेगा? भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा भी उस महा अस्त्रको नहीं जानते हैं।

अस्त्रोंसे साधारण लोगोंको युद्धमें [torn] चित नहीं है ; इस कारणसे मैं सरल [torn] से शत्रुओंको पराजित करूंगा ; और [torn] ह जो सब पुरुषसिंह तुम्हारे सहाय हैं, ये सब ही दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाले तथा सब ही युद्धको चाहनेवाले हैं। दारपरिग्रहके साथही साथ सब यज्ञस्नात हुए हैं, हे राजन्! ये अपराजित महारथ लोग युद्धमें देवताओंकी सेनाको भी नष्ट कर सकते हैं। शिखण्डी, युयुधान, धृष्टद्युम्न, भीमसेन, नकुल, सहदेव, युधामन्यु, उत्तमौजा, भीष्म-द्रोणके समान बूढ़े बिराट और द्रुपद, महाबाहु शंख, महाबल घटोत्कच, इसका पुत्र महाबली पराक्रमी अञ्जनपर्वा, युद्धके कार्य्यको जाननेवाला महाबाहु सात्यकी, बलवान् अभिमन्यु, द्रौपदीके पांचो पुत्र,—ये सम्पूर्ण महारथ वीर तुम्हारे सहाय हैं। हे पाण्डव! तुम भी तीनों लोकोंके [ना]श करनेमें समर्थ हो। हे वासवकल्प! मैं इस बातको निश्चय जानता हूं, कि तुम क्रोधपूर्व्वक जिस पुरुषको ओर देखोगे वह क्षणभर भी जीवित नहीं रह सकता है।

१९६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर भली भांतिसे सवेरा, होनेपर दुर्य्योधनके सब राजा लोगोंने स्नान करके पवित्र हो, सफेद-वस्त्र और माला पहर कर अस्त्र-शस्त्र ध्वजा आदि ग्रहण करके होम और स्वस्तिवाचनके अनन्तर पाण्डवोंसे युद्ध करनेके निमित्त यात्रा की। वह सब लोग ब्रह्मज्ञ, उत्तम-चरित्र और व्रत करनेवाले, पराक्रमी, अभीष्टके सिद्ध करनेवाले और युद्ध-विद्याके जाननेवाले थे। वह महाबलवान् क्षत्रिय लोग सब ही आपसमें श्रद्धापूर्व्वक एकाग्रचित्त होकर युद्धमें परम लोकोंके जीतनेको अभिलाषसे प्रस्थित हुए। पहिले अवन्ती-देशीय विन्द और अनुविन्द और वाह्लिकके सहित केकय देशके वीर योद्धा द्रोणाचार्य्यको आगे करके चले ; उसके अनन्तर अश्वत्थामा, भीष्म, जयद्रथ, गान्धारराज शकुनि, दाक्षिणात्य, प्रतीच्य, प्राच्य, औदीच्य, पर्व्वतीय राजा लोग और शक, किरात, यवन, शिबि और वशात आदि सब महारथ राजाओंने अपनी अपनी सेनासे युक्त होकर दूसरी सेनाकी श्रेणीसे युद्धके निमित्त चले। उसके अनन्तर सेनाके सहित कृतवर्म्मा महाराज त्रिगर्त्त, भाइयोंके सहित राजा दुर्य्योधन, शल, भूरिश्रवा, शल्य, और कोशलराज वृहद्बल ;—ये लोग धार्त्तराष्ट्रको आगे करके सब पीछे चले। हे भारत! वह महाभाग धार्त्तराष्ट्र लोग यथा न्यायसे मिलकर कुरुक्षेत्रके पीछे अर्द्धभागमें स्थित होकर युद्धके निमित्त सजके खड़े हुए। दुर्य्योधनने अपने शिबिरको दूसरे हस्तिनापुरके समान अलंकृत कराया। हे राजन्! नगरवासी निपुण मनुष्य लोग नगर और शिबिरमें कुछ भी प्रभेद न कर सके। प्रजानाथ कौरवराजने दूसरे राजाओंके भी वैसे ही सैकड़ों सहस्रों दुर्गम-शिबिर निर्म्माण कराये। हे राजन्! उस रणभूमिके पांच-योजनके परिमाण परिधियुक्त स्थानको व्याप्त करके वह सब सहस्र सहस्र राजाओंकी सेना इकट्ठी हुई ; वहांपर उन सब राजा लोगोंने उत्साह और बलके अनुसार बहुतसी सामग्रियोंसे युक्त अनेक शिबिर तयार कराया। राजा दुर्य्योधनने उन सब हाथी, घोड़े, पैदल और वाहनोंसेयुक्त महात्मा राजाओंके भक्ष्य,—[भो]जनके निमित्त उत्तम प्रकारसे व्यवस्था कर दी। इसके अतिरिक्त वहांपर जो सब शिल्पी, सूत, मागध, स्तुतिपाठ करनेवाले, वणिक्, वेश्या, दूत और युद्धके देखनेवाले पुरुष आये थे ; कौरवराज दुर्य्योधनने उन लोगोंके निमित्त भी विधिपूर्व्वक प्रबन्ध किया।

१९७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! धर्म्म-पुत्र राजा युधिष्ठिरने भो उसो प्रकारसे धृष्ट-द्युम्न आदि वीरोंको तैयार होनेके निमित्त आज्ञा दो। चेदि काशि और करूषगणोंके नाश करनेवाले, सेनापति धृष्टकेतु विराट, द्रुपद युयुधान, शिखण्डी, महाधनुर्द्धारो पाञ्चालनन्दन युधामन्यु, और उत्तमौजा आदि सबने उनकी आज्ञाका पालन किया। वह सब महारथ शूरवीर विचित्र कवच और सुवर्ण कुण्डलधारी अग्निके स्थानपर रहनेवाले, घृतसे युक्त प्रज्वलित अग्नि अथवा प्रकाशमान ग्रहपुञ्जोंकी भांति शोभित होने लगे। अनन्तर पुरुषश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर सम्पूर्ण सेनाके वीरोंकी यथा उचितसे पूजा करके युद्धके निमित्त गमन करनेकी आज्ञा दी; उन घोड़े हाथी, पैदल और वाहनोंसे युक्त महात्मा राजाओं तथा शिल्पी लोगोंके उत्तम भक्षण और भोजनकी व्यवस्था की। पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरने पहिले धृष्टद्युम्नको आगे करके अभिमन्यु बृहन्त और द्रौपदीके पुत्रोंको उनके सङ्ग भेजा। फिर भीम, युयुधान, और अर्ज्जुनको दूसरी सेनाके विभागमें नियुक्त किया। वहांपर घोड़ोंको भूषणोंसे भूषित करनेमें तत्पर इधर उधर घूमनेवाले, दौड़नेवाले, प्रसन्न चित्तसे सब योद्धाओंके कोलाहलका शब्द मानों आकाशको स्पर्श करने लगा। महाराज युधिष्ठिरने अन्तमें विराट, द्रुपद और दूसरे राजाओंके सङ्ग स्वयं प्रस्थान किया। आगे निश्चल रहकर पीछेसे चलती हुई अर्थात् जलसे युक्त गङ्गाकी तरङ्गका वेग जिस प्रकारसे दीख पड़ता है, धृष्टद्युम्नसे रक्षित पाण्डवोंकी सेना भी उसी भांतिसे दीखने लगी। अनन्तर बुद्धिमान् युधिष्ठिर धृत-राष्ट्रपुत्रोंकी बुद्धिमें भ्रम उत्पन्न करनेके निमित्त फिर दूसरी भांतिसे सेनाको सजाके चलने लगे महाधनुर्द्धारी द्रौपदीपुत्र, अभिमन्यु, नकुल, सह-देव, और सम्पूर्ण प्रभद्रक वीर-योद्धा, दश हजार घोड़े दो हजार हाथी, अ[illegible] पांच सौ रथ, बलवान् सेना भीमसे[illegible] होकर चले; इस प्रकारसे आदिश[illegible]। बीचको सेनामें विराट, जयत्सेन, और [illegible] धनुष धारण करनेवाले, पराक्रमी महारथ महात्मा पाञ्चालनन्दन युधामन्यु और उत्त-मौजाको नियुक्त किया। उस समयमें कृष्ण-अर्ज्जुन भी मध्यभागमें होकर चले। वहांपर अत्यन्त ही उत्साहसे युक्त कृतयुद्ध सैनिक पुरुष थे; उन लोगोंके सङ्ग बीस हजार घोड़े, पांच हजार हाथी, और रथोंका समूह था और आगे तथा पीछे धनुष, तरवार गदा ग्रहण करनेवाले पैदल वीर योद्धा थे, जिस सेनाके समूहमें महाराज युधिष्ठिर स्वयं विराजमान थे; उसमें अनेक राजा लोग विद्यमान थे। हे भारत! उसमें कई हजार हाथी, कई अयुत घोड़े, कई हजार रथ और पैदल योद्धा थे, अपनी बहुतसी सेनाके सहित चेकितान और चेदिगणके स्वामी राजा धृष्टकेतु चले। वृष्णि वंशियोंमें श्रेष्ठ महाधनुर्द्धारी प्रधान रथी बल-शाली सात्यकी सौ हजार रथोंसे युक्त होकर सेनाको चलाया; और रथमें स्थित पुरुषश्रेष्ठ चत्रदेव और ब्रह्मदेव पृष्ठ-रक्षा करते हुए सबके पीछे चलने लगे। इसके अतिरिक्त गाड़ी, छकड़े, युद्धके उपयुक्त सवारी और साधारण वाहन सब पीछे चलने लगे। राजा युधिष्ठिर सहस्रों हाथी, लाखों घोड़े, सम्पूर्ण बालक, स्त्री, कृशित, और दुर्बल सेना, धनके ढोनेवाले घोड़े, अन्नका कोष, हाथियोंकी सेना और सब सामग्री संग्रह करके धीरे धीरे चलने लगे। सत्य सङ्कल्प करनेवाले, युद्धदुर्म्मद सौचित्ति, श्रेणिमान्, वसुदान, काशिराजपुत्र विभु और उन लोगोंके अनुयायी बीस हजार रथ, किङ्कि-णियुक्त दश करोड़ घोड़े और सुन्दर श्वेत दांतोंसे युक्त, युद्ध करनेवाले, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए, मतवारे काले बादलोंके समान

हाथी उनके पीछे चलने लगी। ...रत्न युधिष्ठिरके संग्रामके निमित्त ...सात अक्षौहिणी सेनाके बीच घनघटाके ...मान तथा जीमूतकदम्बके समान मदस्रावी सत्तर हजार हाथी थे, वह भी सब उनके पीछे चली। हे भारत! वह बुद्धिमान् युधिष्ठिरकी महा भयङ्कर सेना इस प्रकारसे सज्जित होकर चली; उसीके आसरेसे उन्होंने दुर्य्योधनके सङ्ग युद्ध किया था। ऊपर लिखे हुए हाथियोंके अतिरिक्त सैकड़ों सहस्रों तथा लाखों मनुष्य और सहस्रों सेनाके पुरुष गर्जते हुए पीछे चलने लगे। हे महाराज! वह सब सहस्र सहस्र तथा दश दश हजार सैनिक-पुरुष पूर्ण रीतिसे आनन्दित और प्रसन्नचित्त होकर वहांपर सहस्रों भेरी और शंख आदि बाजोंको बजाने लगे।

१९८ अध्याय समाप्त।

उद्योगपर्व्व सम्पूर्ण।